हिन्दी पुस्तक एजेन्सी माला—५३

कसौटी

लेखक

श्रीयुक्त विश्वनाथ सिंह शर्म्मा

प्रकाशक

हिन्दी-पुस्तक-एजेन्सी
२०३, हरिसन रोड,
कलकत्ता ।

शाखा—ज्ञानवापी, काशी

प्रथम वार] १९२९ [मूल्य २)

हिन्दी पुस्तक एजेन्सी माला—५३

कसौटी

लेखक

श्रीयुक्त विश्वनाथ सिंह शर्म्मा

प्रकाशक

हिन्दी-पुस्तक-एजेन्सी
२०३, हरिसन रोड,
कलकत्ता।

शाखा—ज्ञानवापी, काशी

प्रथम वार] १९२९ [मूल्य २।)

प्रकाशक,
बैजनाथ केडिया,
प्रोप्राइटर
हिन्दी-पुस्तक-एजेन्सी,
२०३, हरिसन रोड,
कलकत्ता।
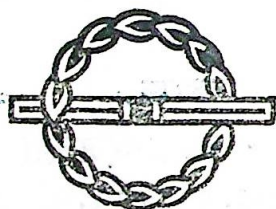
मुद्रक—
रावतमल चौधरी,
वणिक् प्रेस,
१, सरकार लेन, कलकत्ता।

विचार-रेखा

आजसे कुछ समय पूर्व हिन्दीमें बंगला उपन्यासोंके अनुवादोंकी भरमार थी। बहुतसे लेखकोंकी हिन्दी-साहित्य-सेवा उपन्यासोंके अनुवादसे ही प्रारम्भ हुई और इसीमें उसकी समाप्ति। इसके लिये हिन्दीवालोंको बंगाली भाइयोंका उपालम्भ सुना और ताना सहना पड़ता था। बात कुछ ठीक भी थी; जिसे देखो वही रद्दी सद्दी बंगला उपन्यासका अनुवाद लिये साहित्य-सेवाके पांचों सवारोंमें नाम लिखाने दौड़ा आ रहा है! देखते देखते जासूसी, अय्यारी और अय्याशीके कुत्सित उपन्यासोंसे हिन्दीका बाज़ार भर गया। कुछ दिन बाद इस व्यापारसे लोग ऊब गये, उपन्यासकी मंडीमें मौलिकताकी मांग हुई—'मौलिक उपन्यास चाहियें" की आवाज़ उठी। हिन्दी पढ़नेवालोंको उपन्यास पढ़नेकी चाट लग चुकी थी। घरकी रसोईमें रोटी नहीं बनती थी, ढाबेमें खाकर ही भूखकी आग बुझाते थे, क्या करते, मजबूरी थी। उधर 'मौलिकता' की मांग होती रही, इधर यथापूर्व अनुवादका व्यापार भी जारी रहा। आखिर मौलिकताके प्रेमियोंकी इच्छा पूरी हुई, मौलिकताके मैदानमें सबसे पहले मुन्शी 'प्रेमचन्द' जी मर्द मैदान बनकर आये और अचानक इस तरह आये कि देखनेवाले दंग रह गये। प्रेमचन्दजी उर्दूके लेखक थे, उर्दूके

रिसालोंमें उनके छोटे छोटे क़िस्से—(गल्प)—निकलते थे, उर्दूमें इस फ़नके वही मूजिद थे। हिन्दीमें भी सबसे पहले उन्होंने ही यह मैदान मारा। किसीको सान-गुमान भी न था कि एक उर्दूका लेखक यों बाज़ी मार ले जायगा! हिन्दीमें नये ढंगका सबसे पहला मौलिक उपन्यास प्रेमचन्दजीका "सेवासदन" निकला। हिन्दी-संसारमें एक तहलकासा पड़ गया, लोग ताज्जुबसे देखने लगे, एक दूसरेसे पूछने लगे—"क्यों जी, यह 'प्रेमचन्द' कौन हैं? इससे पहले तो इनका नाम कभी न सुना था। यह इस तरह अचानक कहांसे टूट पड़े! हम न मानेंगे, ज़रूर इसमें कोई रहस्य है! सेवासदन अवश्य किसी रूसी उपन्यासका अनुवाद है।" इस प्रकार "सेवासदन" की 'नाना भांति' से जो है सो, आलोचनाएं होने लगीं—कोई उसपर कुढ़कर "कला" की कुल्हाड़ी चलाने लगा, तो कोई चिढ़कर चरित्र-चित्रणको चीरने फाड़ने लगा, कोई हसद—(ईर्ष्या)—से और कोई रश्क—(स्पृहा)—से आंखें फाड़-फाड़ देखने लगा। हिन्दीमें मौलिकता-के पुराने दावेदार चन्द्रकान्ता, उसकी सन्तति, श्वेतवसना, और पीतवसना-सुन्दरीका परिवार अलग बिगड़ उठा—वह कहने लगा कि वाह अच्छे रहे, हमने उस वक्त हिन्दीमें मौलिक उपन्यास लिखे थे, जब प्रेमचन्दने उर्दू-मकतब में नाम भी न लिखाया होगा! मतलब यह कि खूब ले-दे हुई—

"लेकिन 'सदन' की बात जहां थी वहीं रही।"

प्रेमचन्दजीने फिर अपना दूसरा उपन्यास निकाला, फिर और

निकाला—वह नहीं तो यह सही, यह नहीं तो, और सही ; आखिर कहां तक नटके ढोलियाकी तरह—'अबको भी नहीं बदी'—कहते जाते ! अन्तमें मानना ही पड़ा कि 'हिन्दीमें भी मौलिक उपन्यास लिखे जा सकते हैं'—सेवासदन इसका उदाहरण है। फिर क्या था, इस सिद्धान्तके स्वीकृत होते ही हिन्दीके साहित्यक्षेत्र पर मौलिकताका टीडी-दल टूट पड़ा, जिसे देखो वही मौलिकताका 'चार्टर' लिये चला आ रहा है।

उपन्यासकी हाटमें बदाबदीसे दर्जनों उपन्यास आने लगे, जिनपर मौलिकताकी 'चिट' लगी थी। अच्छे, बुरे, साधारण, असाधारण सब तरहके। देखकर हर्ष होता है कि हिन्दीके माथेसे मौलिकताके अभावका कलंक किसी तरह मिटा तो सही। अब कोई यह तो न कह सकेगा कि हिन्दीमें नये ढङ्गके मौलिक उपन्यास नहीं हैं।

हिन्दीके पहले मौलिक उपन्यास 'सेवासदन' के प्रकाशनका श्रेय हिन्दी पुस्तक एजेन्सीको प्राप्त हुआ था। अब उसी तरह यह 'कसौटी' भी वहींसे प्रकाशित हो रही है। सेवासदनके लेखककी तरह कसौटीके लेखक भी अचानक हो मौलिकताके अखाड़ेमें एकदम आ कूदे हैं। ज़रा इनका दम-खम भी देखना चाहिये। इनकी इस 'कसौटी' पर भी विचारका खरा सोना कसकर परखना चाहिये कि कोई साफ़ रेखा चमकती है या नहीं! 'कसौटी' है कि काले पत्थरकी बटिया! मैं तो समझता हूं 'कसौटी' खरी चोखी है, इसके लेखकको अपने पहले ही प्रयत्नमें अच्छी सफलता

प्राप्त हुई है। 'कसौटी' के कथानकको अच्छी तरह निबाहा है, प्रेम और कर्त्तव्यके समन्वयकी मीमांसा बड़े रोचक ढङ्गसे की है, भाषा सरल है, भाव मनोहर हैं, चरित्र-चित्रण स्वाभाविक और सुन्दर है, विचारोंमें मौलिकता है, कल्पित होनेपर भी कहानी सच्चीसी मालूम होती है। पुलिसके हथकण्डे, जमींदारकी ज्यादती, 'कर्त्तव्य' और 'प्रेम' की टक्कर,—परस्पर भिन्न प्रतीत होते हुए भी इन दोनोंकी एकता, 'निर्भय' के सम्पादककी निर्भीकता, मजिस्ट्रेट-की न्याय-निष्ठा, लोकमतकी जागृति, ग्रामपंचायतकी उपयोगिता, सङ्गठनकी महिमा, इत्यादि प्रत्येक विषयका खूब सुलझा हुआ वर्णन है। पढ़नेमें जी लगता है। समाप्तितक पहुंचनेकी उत्कण्ठा बढ़ती है। अच्छे रोचक और शिक्षाप्रद उपन्यासमें जितनी बातें होनी चाहिएँ, क़रीब क़रीब कसौटीमें सब हैं। एक बात सबसे विलक्षण है, शृङ्गार रसकी पुट इसमें कहीं नहीं है। शृङ्गाररसके 'आलम्बन विभाव' 'नायिका' हीका सर्वथा अभाव है, तो शृङ्गार कहांसे हो! विशुद्ध समाज-सुधारके उपन्यासोंमें भी कहानीको रोचक और चटपटी बनानेके लिए कुछ न कुछ थोड़ी बहुत मात्रामें शृङ्गारकी पुट होती ही है, प्रेमचन्दजीके उपन्यास भी इससे खाली नहीं हैं। पर इसमें उतनी भी नहीं है, फिर भी काफी दिलचस्प है, यह इसकी एक विशेषता है। उपन्यास पढ़नेसे तो ऐसा मालूम होता है कि इसके लेखक महाशय 'एन्टी-वासलेट'-सम्प्रदायके कोई सरगर्म 'ज़ाहिदे-ख़ुश्क' सदस्य हैं। यद्यपि उन्हें इससे इन्कार है। कुछ भी हो; उपन्यास पठनीय

है, इसके लिये लेखकको दिल खोलकर बधाई दी जा सकती है।

लेखकने और भी कई उपन्यास लिखे हैं, जो अभी अप्रकाशित हैं। उनमेंसे भी एक-आधका कुछ अंश मैंने देखा सुना है, जिसके आधारपर मैं निःसंकोच भावसे कह सकता हूं कि लेखकमें मौलिक उपन्यास-रचनाकी पर्याप्त योग्यता है। यह प्रोत्साहनके पात्र हैं, आशा है इनकी उत्तम रचनाओंका हिन्दीमें आदर होगा।

आश्विन सुदि १,
गुरुवार
संवत् १९८६ वि०

पद्मसिंह शर्म्मा

दो बातें

—:(*):—

हमारा विचार बराबरसे ही मौलिक ग्रन्थोंके प्रकाशनकी तरफ रहा है और आप लोगोंने अबतक हमारे यहांसे प्रकाशित श्रीयुक्त प्रेमचन्द-जी आदिके मौलिक ग्रन्थोंको अपनाकर उसे और भी दृढ़ बना दिया है। इसी दृढ़ताको लेकर हम यह तुच्छ भेंट आप लोगोंके सम्मुख रखते हैं। अगर इससे आप लोगोंका कुछ भी मनोरंजन हुआ तो हम अपना परिश्रम सफल समझेंगे तथा दूसरी भेंट शीघ्र ही सेवामें उपस्थित करेंगे। यह है तो एक उपन्यास किन्तु आप देखेंगे कि इसमें नित्य होनेवाली घटनाओंका कितना समावेश हुआ है और कितनी सरसता आई है। काल्पनिक घटना भी अगर किसी सुयोग्य लेखक-द्वारा ओज भरी भाषामें लिखी गयी हो तो सच्ची घटनाके समान ही पढ़नेवालेके हृदयपर भाव अङ्कित करती है।

इसी प्रकार यह काल्पनिक होते हुए भी बड़ा पुरअसर और हृदयग्राही है। इसमें क्या नवीनता है तथा यह कितनी उपयोगी पुस्तक है, इसका निर्णय हम विज्ञ पाठकोंके ही ऊपर छोड़ते हैं और आशा करते हैं कि अन्य ग्रन्थोंकी तरह इसे भी अपनाकर हमें कृतार्थ करेंगे।

कलकत्ता
आश्विन शुक्लपक्ष १९८६ } —प्रकाशक

कुमुदिनी

योगायोग

कुमुदिनी

निवेदन

सहृदय पाठकों तथा विज्ञ समालोचकोंकी परखकी खरी कसौटीपर इस कल्पित कसौटीको रखते हुए मेरे हृदयमें कई भावोंका समावेश हो रहा है। जिनमें सबसे अधिक मात्रा तो प्रसन्नताकी है,जिसका होना स्वाभाविक है। दूसरा नम्बर उत्कंठा का है। 'कसौटी' जिस अभिप्रायसे लिखी गयी है, जिस लक्ष्यको सामने रखकर इसकी रचना की गयी है, वह इससे पूरा हो सका है या नहीं, यह जाननेके लिये हृदयका उत्कंठित होना भी बहुत कुछ स्वाभाविक ही है।

'कसौटी' जैसी भी कुछ है, आपके सामने है। इसके सम्बन्ध में कुछ कहनेका मुझे कोई अधिकार नहीं है। यदि कुछ कहूँ भी तो आत्मप्रशंसा समझी जायगी, हास्यप्रद व्यापार होगा। हाँ, निवेदन स्वरूप इतना अवश्य कहना है कि इसे सुरुचिपूर्ण तथा उपयोगी बनानेमें कोई कोर कसर नहीं रखी गयी है। सहृदय समाजसे मेरा नम्र निवेदन है कि एकबार इसे पढ़नेका कष्ट स्वीकार करे। यदि इसमें उसे कुछ भी नवीनता अथवा आकर्षण मिल सका तो लेखकके अन्तःकरणको शान्ति मिलेगी और वह सन्तोष-सुखका अनुभव करता हुआ अपने अन्य प्रस्तुत उपन्यासोंको भी अधिक उत्साह तथा तत्परताके साथ शीघ्र ही हिन्दी-प्रेमियोंको भेंट कर सकेगा।

हिन्दी-साहित्यके स्तम्भ तथा हिन्दी-साहित्य-सम्मेलनके वर्तमान सभापति पूज्यपाद पं० पद्मसिंहजी शर्म्माने इस पुस्तककी भूमिका लिखनेकी कृपा की है। इस कृपाके लिये मैं उन्हें धन्य-वाद दूँ, उनके प्रति शब्दोंके द्वारा कृतज्ञता प्रदर्शित करूँ या नीरव भाषाका आश्रय लूँ, कुछ भी समझमें नहीं आता। जितना ही सोचता हूँ, उतना ही उलझनमें पड़ता हूँ। एक अजीब माजरा है। वर्तमान सभ्यता धन्यवादका तक़ाज़ा करती है, पर हृदय रोकता है—चुप रहनेके लिये मजबूर करता है। हृदयकी इस रुकावटको अनुचित भी किस प्रकार कहा जाय ? शर्म्माजी जैसे पूज्य व्यक्तिकी कृपाका मूल्य क्या धन्यवाद हो सकता है ? और खासकर इस ज़मानेमें जब कि धन्यवाद मिट्टीके मोल बिक रहा है, उसकी अधि-कतासे लोग ऊब-से गये हैं। ऐसी अवस्थामें धन्यवादके बटखरेसे उनकी कृपाको तौलना धृष्टता होगी। श्रद्धेय शर्म्माजी ! जान-बूझकर मैं ऐसा अक्षम्य अपराध क्यों करूँ ? अतएव हृदयकी बात मानकर मैं चुप हूँ। आपकी कृपाकी पवित्र स्मृति मेरे हृदयपर आजन्म अंकित रहेगी और यही सबसे बड़ा मूल्य है, जो मैं आपकी इस कृपाका चुका सकता हूँ।

कलकत्ता
३-१०-२६ } विश्वनाथ सिंह शर्म्मा

बाबू रामकिशोर प्रसाद दारोगा साहबके बड़ेही घनिष्ट मित्र हैं। इन दोनों आदमियोंमें खूब पटती है। ये लोग घंटों तक घुल घुलकर आपसमें बातें किया करते हैं। लोगोंका अनुमान है कि इन लोगोंकी मित्रता आजन्म निबह जायगी। अवसर पड़नेपर ये लोग एक दूसरेकी भरपूर सहायता भी किया करते हैं। किसी मामला मुकदमाके उपस्थित होनेपर दारोगा साहबसे रामकिशोर बाबूको यथेष्ट सहायता मिलती है और यही कारण है कि इन दिनों उनका दिमाग आसमानपर चढ़ रहा है। वे न्याय तथा अन्यायका तो कुछ विचारही नहीं करते। गरीबोंको सताना ही उन्होंने अपना धर्म समझ रखा है। इसके साथही रामकिशोर प्रसाद जैसे धनी-मानी जमीन्दारसे घनिष्ट सम्बन्ध रहनेके कारण दारोगा साहब भी सदैव निश्चिन्त रहा करते हैं। घृणितसे घृणित अन्याय करनेमें भी जरा नहीं हिचकते। क्योंकि आवश्यकता पड़नेपर ये अपने मित्रके पशुबलका स्वतंत्रता पूर्वक उपयोग करते हैं। इसके अतिरिक्त किसी न किसी रूपमें इन्हें रामकिशोर प्रसादसे कभी कभी आर्थिक सहायता भी मिल जाया करती है।

लगभग दश मिनटोंमें ये बाबू साहबके दरवाजेपर जा पहुंचे। उस समय वे अपने कमरेमें विश्राम कर रहे थे। पर दारोगा साहबके आनेकी खबर पाते ही वे उठकर बैठकखानेमें आ गये। इतनेमें नौकर तम्बाकू का गड़गड़ा ले आया और ये लोग तम्बाकू पीते हुए आपसमें बातें करने लगे। दारोगा साहब दोपहरके समय उनके यहाँ कभी नहीं जाते थे। उनके जानेका समय प्रायः प्रातः-

काल या सायंकाल था। अतएव सबसे पहले उन्होंने दारोगा साहबसे इतनी धूपमें तकलीफ करनेका कारण पूछा। इस प्रश्नको सुनते ही वे जरा अनमने होकर बोले—"क्या कहूं, ! आपलोगोंके रहते ही अब इलाकेसे हम लोगोंका रोब उठा जा रहा है। वेगारी करनेका तो कोई नामही नहीं लेता। एक मजदूरकी भी आवश्यकता पड़नेपर टेटसे पैसे निकालनेकी नौबत आ जाती है।" जरा आश्चर्यके साथ रामकिशोर प्रसादने उत्तर दिया—"आप यह क्या कहते हैं ? मजदूरोंकी क्या कमी है ? एक बुलावे तेरह आवें। आपको जिस समय जरूरत पड़े मेरे पास खबर भेज दिया कीजिये। मैं अपनी जमीन्दारीसे सैकड़ों मजदूर पकड़वाकर भेज दूँगा। क्या इसी छोटीसी बातको लेकर आप परेशान हो रहे हैं ?"

कुछ शर्माते हुए दारोगा साहब बोले—"आपकी आशा तो हर समय बनी ही रहती है ; पर यदि आपलोगोंके बलपर ही हम लोगोंका काम चले, तो फिर अंग्रेजी राज्य किस प्रकार कायम रह सकता है ? उसकी शान, उसकी प्रतिष्ठा हमलोगोंकी शक्तिपर ही निर्भर करती है। अंग्रेज लोग यदि समुद्रपर राज्य करते हैं, गौरीशंकरकी चोटीपर चढ़नेकी चेष्टा करते हैं, तो वह भी हमलोगोंके बलपर ही। यदि हमलोगोंका विभाग पूर्णतः शक्तिशाली न रहे तो अंग्रेजोंका कोई कामही नहीं चल सकता है। ऐसी अवस्थामें आप स्वयं सोचें कि हमलोगोंका रोबदाब सरकारके लिये कितना आवश्यक है ? जिस दिन रांड़की तरह हमलोगोंको

दूसरेके बलपर भरोसा करना पड़ेगा, उस दिन, भला अंग्रेजी राज्य किस प्रकार कायम रहेगा ?"

रामकिशोरप्रसाद कुछ गम्भीरता पूर्वक बोले—"आपका कहना बहुत ठीक है। आपलोगोंके दबदबापर ही तो यह राज्य कायम है। पर यहां तो हम किसी प्रकारकी शरारत नहीं देखते हैं। दो-चार लौंडे अवश्य ही हल्लागुल्ला मचाया करते हैं। पर उन लोगोंको पूछता ही कौन है ? व्यर्थ ही वे लोग 'मान न मान मैं तेरा मेहमान' वाली कहावतके अनुसार, अपनेको लोगोंका मुखिया बनाना चाहते हैं। मैंने तो इस बातकी सख्त ताकीद कर दी है कि कोई उनकी बात न सुने। हमारी जमीन्दारीका एक भी आदमी उन लोगोंके फेरमें नहीं पड़ सकता है।"

दारोगा साहबने बीचमें ही बात काटते हुए कहा—"यह आपका भ्रम है। आपका इलाका तो आजकल सबसे बढ़कर खतरनाक हो रहा है। क्या आपको पता नहीं कि हरिकिशुन तथा लक्ष्मीनारायण आदिने मिलकर यहां एक मजदूरसंघ स्थापित किया है। जिसके द्वारा वे लोग सरासर विद्रोह फैलाना चाहते हैं ?"

रामकिशोर प्रसादने कुछ आश्चर्यसे कहा—"क्या वे लोग विद्रोह फैलाना चाहते हैं ?"

दारोगा साहब—"विद्रोहके सिवा मजदूरसंघका दूसरा उद्देश्य ही क्या हो सकता है ? आजकल इस देशमें जितने संघ, मंडल तथा समिति आदि स्थापित होते हैं, उन सबोंका उद्देश्य तो केवल यही रहता है ? यदि उन लोगोंका भाव विद्रोहात्मक नहीं रहता, तो

हमारी सरकार उन लोगोंके प्रति इस प्रकार सख्तीका बर्ताव क्यों करती ?"

रामकिशोर प्रसाद—"क्या ऐसी बात है ? मुझे तो इसका कोई पता ही न था।"

दारोगा साहब—"बाबू साहब ? आप तो एकदम भोले बादशाह हैं। आपको भला इन बातोंसे क्या मतलब ? क्या आपकी रैयतमें विद्रोहका ख्याल नहीं आ रहा है ?"

रामकिशोर प्रसाद—"मैंने इसे साधारण विषय समझकर इसकी तरफ कभी ध्यानही नहीं दिया था।"

दारोगा साहब—"आप तो यों ही समझ लिया करते हैं। शायद आपको अपनी रैयतोंपर अधिक विश्वास है। पर क्या आप नहीं जानते कि यह विश्वासका जमाना नहीं है। इस जमानेमें किसीपर विश्वास करना अपनेको धोखेमें डालना है। आपकी जमीन्दारीके आदमी हो तो इस मजदूर आन्दोलनमें अधिक भाग ले रहे हैं। अभी तो मैं आपके यहां इसी बातकी शिकायत करनेके लिये आया हूं"

रामकिशोर प्रसाद—"आप बेफिक्र रहें। हमारे इलाकेमें किसी प्रकारका आन्दोलन नहीं चल सकता है।"

दारोगा साहब—"खैर, जो भी हो, किन्तु मैं जो कुछ देख तथा सुन चुका हूं, उसे आपको थोड़े ही शब्दोंमें सुना देता हूं। ये लोग अपने संघके द्वारा गरीबोंका संगठन करना चाहते हैं। जिसका सबसे प्रधान उद्देश्य यह है कि कोई बेगार नहीं करे, सलामी

आदिका रिवाज उठा दिया जाय तथा अवसर पड़नेपर मामला मुकदमामें लोग एक दूसरेकी सहायता किया करें।"

रामकिशोर प्रसाद—"क्या वे हम लोगोंके साथ मामला आदि लड़नेका भी हौसला रखते हैं ? यदि ऐसी बात है, तो कुछ ही दिनोंके भीतर मैं उन लोगोंके जोशको ठंढाकर दूंगा। भला, वे लोग क्या खाकर हम लोगोंके साथ शत्रुता कर सकते हैं। पानीमें रहकर मगरसे बैर किस प्रकार निवह सकता है।"

दारोगा—"जरा कलका एक किस्सा सुन लीजिये वे लोग सबसे पहले मुझपर ही अपनी ताकत अजमानेकी चेष्टा करने लगे।"

रामकिशोरप्रसाद—"सो क्या ?"

दारोगा—"हां, मैं तो आपसे कलका ही किस्सा कहने आया हूं। जरा उसे भी गौरसे सुन लीजिये। एक रिश्तेदारीमें मुझे कुछ सामान भेजना है। पर चर्बीके घीका प्रचार बढ़ जानेके कारण बाजारकी मिठाई भेजना मैंने उचित नहीं समझा। इसके साथ ही बाजारकी मिठाई मंहगी पड़ती है तथा अच्छी भी नहीं होती। इस लिये मैंने घरपर ही मिठाई आदि बनवानेका प्रबंध किया है। इस कामके लिये मुझे कुछ लकड़ीकी आवश्यकता थी। अतएव कल भोरमें मैंने अवधबिहारी सिंह कान्सटेबलको एक कुली पकड़ लानेके लिये कहा और वह उसी समय आपकी रैयत बनवारीको ले आया। दिनभर उसने लकड़ी काटी। शामको चलते समय मैं दस्तूरके मुताबिक उसे दो आने

पैसे देने लगा। पर वह दो आना लेनेके लिये तैयार नहीं हुआ और बड़ी तेजीके साथ उसने कहा कि अब दस्तूर आदिको बराबरके लिये भूल जाइये। अब वह जमाना नहीं रहा। अब तो गांधीजीका राज्य आनेवाला है। हमारे संघके सेकतरी (सेक्रेटरी) साहबकी आज्ञा है कि पूरा पैसा लिये बिना कोई काम न करे। अतएव मैं चार आनेसे एक कौड़ी भी कम न लूंगा।"

"उसकी बातें सुनकर मुझे बड़ा क्रोध हुआ और उसी समय मैंने उसे थानेसे बाहर निकलवा दिया। कुछ ही देरके बाद वह लक्ष्मीनारायण आदिके साथ पैसेका तकाजा करनेके लिये आया और वे लोग बेतरह मेरे मकानके सामने हल्ला गुल्ला करने लगे। हमारे जमादारने लक्ष्मीनारायणको बहुत समझाया कि वह व्यर्थ दो चार आने पैसेके लिये एक छोटी सी बातको इतना न बढ़ावें। पर वह किसी प्रकार शान्त नहीं हुआ।"

बीचमें ही बात काटते हुए रामकिशोर प्रसाद बोले—"लक्ष्मीनारायणसे बनवारीका क्या सम्बन्ध है? वह क्योंउसकी ओरसे वकालत करनेके लिये गया था?"

दारोगा—"बाबूसाहब! आप यहां रहकर भी इन बातोंका पता नहीं रखते, यह बड़े ही आश्चर्यकी बात है। वही तो आजकल मजदूरोंका नेता बना फिरता है और इस ग्रामके मजदूर संघका सेक्रेटरी भी है। आजकल चन्देके रुपयेसे वह पूरा बाबू बन रहा है। हां, तो वह किसी प्रकार शांत नहीं हुआ और लगा लम्बा चौड़ा लेक्चर झाड़ने। जमादारको उसने यह कहकर फटकार दिया कि

हम दो आने पैसेके लिये नहीं लड़ रहे हैं, पर हमारी लड़ाई उस सिद्धान्तसे है, जिसके अनुसार दारोगासाहब आज बनवारीको आधी मजदूरी देना चाहते हैं। यदि उनके पास अधिक पैसे न हों, तो बनवारीको उनकी ओरसे मैं दो आने पैसे देनेके लिये तैयार हू। यदि दारोगा साहब पूरी मजदूरी देनेके सिद्धान्तको मान लें।

"उसकी शरारत भरी इन बातोंको सुनकर मुझे बड़ा क्रोध हुआ और मैंने उन लोगोंको थानेके हातेसे बाहर निकलवा दिया। पर कुछ ही देरमें बहुतसे आदमी इकट्ठे हो गये और मजदूरी न देने पर मजिस्ट्रेट साहबके पास तार भेजनेकी धमकी देने लगे। बात बढ़ते देखकर मैंने ही कुछ दब जाना उचित समझा और पूरा पैसा देकर उन लोगोंसे अपना पिण्ड छुड़ाया। पैसा देनेके पश्चात् इस शैतानी का बदला चुकानेकी मैंने सौगन्ध खाई है और किसी न किसी रूपसे उसे अवश्य ही पूरा करूंगा। परन्तु आपको इसमें मेरी पूरी सहायता करनी पड़ेगी।"

रामकिशोरप्रसाद-"आप मेरी सहायतामें किसी प्रकारका सन्देह क्यों रखते हैं? जो कार्य्य मेरे द्वारा पूरा हो सके उसे बना बनाया ही समझिये। पर बड़े ही अफ़सोसकी बात है कि मामला इतना बढ़ जानेपर भी आपने उस समय मुझे इस बातकी कोई खबर न दी। मेरे वहां पहुंचनेपर बनवारीकी क्या मजाल थी कि वह आपके साथ शरारत करता।"

दारोगा—"बात तो ठीक ही है।"

रामकिशोरप्रसाद—"नहीं,आपको अवश्य बुलाना चाहिये था।"

दारोगा—"आपका कहना तो ठीक है। एकबार आपको बुलानेकी इच्छा भी हुई। पर ऐसा करना, मैंने अपनी प्रतिष्ठाके खिलाफ समझा। आपकी सहायता लेनेपर इलाकेसे मेरा रोब कम जाने का भय था। ऐसी अवस्थामें लोग समझते कि दारोगा साहबमें निजी शक्ति कुछ भी नहीं है। वे केवल बाबूसाहबके भरोसे कूद फान किया करते हैं। अतएव इच्छा रहते हुए भी मैंने आपको नहीं बुलाया।"

रामकिशोर प्रसाद—"ऐसा समझना आपकी भूल है। मौके पर प्रत्येक व्यक्तिको एक दूसरेसे सहायता लेनेके लिये बाध्य होना पड़ता है। कौन जानता था कि एक भिस्तीके द्वारा मुगल सम्राट हुमायूँकी प्राण-रक्षा होगी। पर हुआ ऐसा ही। एक भिस्तीके द्वारा उसकी रक्षा हुई। सीताहरण होनेपर रामचन्द्रने बन्दरोंसे सहायता ली। पर इस कारणसे क्या उनका महत्व कम गया? क्या बन्दरोंसे वे कम बलवान गिने जाने लगे? खैर, जो होना था, वह तो हो ही चुका। अब कोइ ऐसा उपाय करना चाहिये, जिससे इन लोगोंके दिमागका पारा अधिक नहीं बढ़ने पावे।"

दारोगा—"आप निश्चिन्त रहें। कुछ ही दिनोंमें मैं इन लोगोंकी जड़ ही उखाड़ फेंकता हूँ। बच्चोंको जिस प्रकार कोई नया खिलौना मिलनेसे प्रसन्नता होती है और उसके कारण उनके हृदयमें एक नया जोश भर जाता है, वही अवस्था आजकल इन लोगोंकी हो रही है। मजदूरसंघको इन लोगोंने एक बड़ा ही मनोहर खिलौना समझ रखा है और उसीकी खुशीमें ये लोग इतने उतावले हो

रहे हैं। पर जिस प्रकार खिलौनेके टूट जानेसे बच्चोंका सारा उमंग जाता रहता है, उनकी मस्ती दूर हो जाती है। उसी प्रकार संघके टूटते ही इन लोगोंकी भी सारी मस्ती गायब हो जायगी और ये लोग पथभ्रष्टकी तरह इधर उधर भटकते फिरेंगे। अतएव सबसे पहले इन लोगोंके संघको तोड़ डालनेकी चेष्टा करता हूं। ऐसा करना कोई बड़ी बात नहीं है। थोड़े प्रयत्नसे ही बालूकी दिवालकी तरह इन लोगोंका संघ नष्ट भ्रष्ट हो जायगा। इस सम्बन्धमें मैं कलसे ही लिखा पढ़ी आरम्भ कर देता हूं और शीघ्र ही ऊपरके अफसरोंसे लक्ष्मीनारायण तथा हरिकिशुनके नाम वारन्ट मंगवाकर इन लोगों को गिरफ्तार कर लेता हूं। बस, इनकी गिरफ्तारी होते ही सबोंका दिमाग ठंढा पड़ जायगा। फिर कोई भूलकर भी संघ वंघका नाम न लेगा।"

रामकिशोर प्रसाद—"आपका विचार बहुत ठीक है। ऐसा करनेसे ही इस आन्दोलनका अन्त हो सकेगा। देहातके लोग भेंड़की तरह एक दूसरेके पीछे दौड़ने लगते हैं। यही कारण है कि किसी आन्दोलनके आरम्भ होते ही वह प्लेगकी तरह देहातोंमें फैल जाता है। पर अगुओंके गिरफ्तार होते ही जन साधारणका हौसला पस्त हो जाता है। अतएव आपने गिरफ्तारीका उपाय सोचकर बहुत ही बुद्धिमानीका कार्य किया है। इससे अवश्यही सफलता मिलेगी।"

दारोगा—"हां, इसके सिवा तो और कोई रास्ता ही नहीं है। जहरका असर जहरसे ही दूर होता है। अतएव शैतानोंके साथ शैतानी किए बिना काम नहीं चलता। न मालूम किस हौसलेपर इन

लोगोंने मेरे साथ टक्कर लेना आरम्भकर दिया है। वारन्ट आनेपर लोगोंको मालूम पड़ेगा कि संघ स्थापित करना तथा नेता बनना कोई बच्चोंका खेल नहीं है। यहाँ लोहेका चना चवाना पड़ता है।"

रामकिशोर प्रसाद—"उन लोगोंका दिमाग ठंढा होनेपर ही तो हमलोगोंकी भी इज्जत बच सकती है। अतएव आपको उन लोगोंका शत्रू बनाकर ईश्वरने बड़ा ही अच्छा किया है। बिल्लीके ही भाग्यसे दहीका सीका टूट पड़ा है।"

रामकिशोर प्रसादकी इन बातोंको सुनकर दारोगा साहब हँसते हुए बोले—"जी हां, आपने खूब फरमाया। चिड़ियेकी जान जाय और लड़कोंका खेल, इसीको कहते हैं। यहां तो प्रतिष्ठा बचानेका सवाल मेरे सामने पेश है और आपको बिलाई तथा सीकेकी कहानी याद आ रही है। खैर, देखिये क्या होता है? अब तो मैदानमें उतर ही पड़ा हूं।"

रामकिशोर प्रसाद—"क्या आप इसे मैदान समझते हैं? यह तो चीटियोंको मसलना है। यदि आपका सहारा पाऊं, तो मैं ही इन लोगोंको समूल नष्ट कर देनेके लिये काफी हूं।"

दारोगा—"आपकी तो उम्मीद बनीही रहती है। आपकी कृपासे सब अच्छा ही होगा। इस अदनीसी बातमें, मैं आपको कष्ट देना उचित नहीं समझता हूं।" इतना कहकर वे वहांसे चलने के लिये तैयार हो गये। रामकिशोरप्रसादने कुछ देर और ठहरनेका आग्रह किया। पर कोई जरूरी कामका बहाना बनाकर, वे उसी समय रवाना हो गये।

दूसरा अध्याय

राजाको अपने महलमें, प्रेमीको प्रेमिकाके आलिंगनमें, सेनापतिको अपनी छावनीमें, नाविकको नावमें तथा तपस्वीको तपोवनमें जो आनन्द मिलता है, वहीआनन्द एक दरिद्र भी अपने टूटे-फूटे झोंपड़ेमें प्राप्त करता है। ऐसा होना स्वाभाविक ही है। यदि ईश्वरने किसीको महल दिया है, तो एक दरिद्रका झोंपड़ा भी उसी ईश्वरकी देन है। अतएव वह झोंपड़ेमें महलसे किसी प्रकार कम आनन्दका अनुभव करे, इसका कोई कारण भी नहीं दीख पड़ता। अस्तु।

वनवारी दिन भरका थका मांदा रहनेके कारण अपनी टूटी चटाईपर आनन्दसे विश्राम कर रहा है। बगलमें उसकी स्त्री दरिद्रतासे सन्तप्त होकर अश्रु वर्षा करती हुई रोटी पका रही है। दरिद्रताके रोगने उसके शरीरको भयंकर रूपसे ग्रसितकर लिया है। इधर कुछ वर्षोंसे लगातार फसलके मारे जानेके कारण उन लोगोंको एक शाम भी भोजन मिलना कठिन हो गया है। अकेले वनवारी कमाने वाला ठहरा। उसके तीन-चार आनेकी मजदूरीसे भला, चार-पाँच व्यक्तियोंका गुजारा किस प्रकार चल सकता है? पर ईश्वरकी मर्जीके सामने किसीका वश ही क्या है? यदि वह चाहे कि इस संसारमें कोई दुखी न रहे, किसीका हृदय दरिद्रतासे संतप्त न हो, किसीकी आत्मा कष्टोंकी ज्वालासे व्यथित न हो;

तो ऐसी अवस्थामें इस संसारका यह दुखद दृश्य ही क्यों रहता ? ईश्वरकी मर्जीसे तो सभी कुछ हो सकता है। वह चाहे तो इस संसारमें एक भी दुखियाको न रहने दे। जादूकी तरह क्षण भरमें ही वह देखते ही देखते संसारके सभी दुखोंका नाश कर दे। पर ऐसा वह क्यों नहीं करता ? जान बूझकर कुछ लोगोंको पीड़ित करनेसे उसे कौनसी भलाई मालूम पड़ती है ? संसारके दुसह दृश्यको देखकर लोगोंके हृदयमें इसी प्रकारके प्रश्न उठते हैं। पर ईश्वर असीम है। उसके रहस्योंका पता हमलोग अपनी ससीम शक्तिसे नहीं लगा सकते हैं। अतएव कुछ लोगोंको अवश्य ही वह किसी मतलबसे-किसी अभिप्रायसे कष्ट देता है। हो सकता है कि यह उनके पूर्व जन्मके कार्य्योंका फल हो और ईश्वर धर्म तथा अधर्मका स्पष्टरूप बतलानेके लिये, इस संसारमें सुख तथा दुःखका अभिनय करता हो। इसके सिवाय और तो कोई सम्भव कारण मालूम नहीं पड़ता।

खैर, आज घरमें केवल आधासेर आटा रहनेके कारण चम्पा (बनवारीकी स्त्री) का हृदय व्यथित हो रहा है। आधासेरसे तो किसी प्रकार उसके पतिकाही पेट भरेगा, पर अन्य लोगोंकी क्या व्यवस्था होगी, उनके खानेपीनेका प्रबन्ध क्या होगा ? इन्हीं बातोंको सोचकर उसकी छाती फट रही है। अपने खानेकी तो उसे कोई चिन्ता नहीं है, पर बच्चोंको भूख लगने पर वह क्या खिलायेगी, यह सोचकर उसका हृदय टूकटूक हो रहा है। इसके साथही उसने अपनी युवती लड़कीको अभी हालमेंही ससुरालसे

बुलाया है। वह अपने घरमें सुखी थी, खानेपीनेका किसी प्रकारका कष्ट न था। पर आज किन आँखोंसे वह उसे उपवास करते देखेगी? आखिर चमेलीका अपराध ही क्या है? वह क्यों उपवास करे? आदि प्रश्न उसके हृदयपर वज्रकी तरह प्रहार कर रहे हैं।

धीरे धीरे उसकी व्यथाका वेग बढ़ता गया और वह कोनेकी ओर मुंह करके सिसक सिसक कर रोने लगी। उसका रोना उसकी बड़ी लड़की चमेली न देख ले, इस बातकी उसे सदैव चिन्ता बनी रहती थी। पर इस समय वह कहीं बाहर गयी है, अतएव वह स्वतंत्रतापूर्वक आँसूके रूपमें अपने कष्टके स्रोतको प्रवाहित करने लगी।

कुछ देरमें रोटी बनकर तैयार हो गयी और वह अपने पतिको भोजन करनेके लिये पुकारने लगी। पर उसने सोयेही सोये कह दिया कि तबीयत कुछ खराब है। मैं भोजन नहीं करूंगा। तुम लोग भोजन कर लो। इस उत्तरको सुनकर चम्पा बहुत घबराई। वह जानती थी कि खाये बिना कल शारीरिक परिश्रम नहीं हो सकेगा। अतएव भोजन करनेका जोरदार आग्रह करती हुई वह बोली—"रोटी बन चुकी है, थोड़ा भी खा लो; नहीं तो कल काम पर कैसे जाओगे?" पर बनवारी किसी प्रकार भोजन करनेके लिये तैयार न हुआ। पीछे चम्पाको यह भी सन्देह होने लगा कि कहीं उन्होंने उसे रोते देखकर तो खानेसे इन्कार नहीं कर दिया है? कभी वह सोचती कि कम आटा रहनेकी बातको तो वे नहीं ताड़ गये हैं और इस कारण बच्चोंको भूखा रखकर स्वयं भोजन करना

नहीं चाहते। इन बातोंको सोचते सोचते उसे अपने ऊपर क्रोध होने लगता था। उसे इस समय रोनेकी क्या आवश्यकता थी? रोकर भला, उसने कौनसा लाभ कर लिया? यदि वह नहीं रोती पीटती, तो उसके पति अभी अवश्य ही भोजन करते। इसी प्रकार सोचते विचारते वह अपने आपको कोसने लगी। इसके साथही वह चमेलीके आगमनकी प्रतीक्षा कर रही थी जो लगभग एक घंटा पहले कहीं घूमनेके लिये बाहर गयी थी। उसके लौटनेमें अधिक विलम्ब होते देख उसका मातृ हृदय और भी विचलित होने लगा और उसे किसी न किसी अनिष्टकी आशंका सताने लगी। धीरे धीरे बहुत विलम्ब हो गया। पर वह लौटकर नहीं आई। उसके लौटनेमें इस प्रकार विलम्ब होते देखकर उसकी प्रतीक्षा घोर चिन्ताके रूपमें परिणत होने लगी।

इतनेमें दर्वाजेके सामने किसीने बनवारीको बड़े ही कर्कश स्वरमें पुकारा। आवाज सुनतेही वह समझ गयी कि मालिकका कोई प्यादा पुकार रहा है। पर बनवारी अभी तुरत सोया था। अतएव इस अवस्थामें उसे जगाना उसने किसी प्रकार उचित नहीं समझा। इस कारण वह स्वयं बाहर जाकर प्यादेसे बोली—"अभी उनकी तबीयत खराब है, वे बाहर आने लायक नहीं हैं। अगर कुछ कहना हो, तो मुझे कह जाइये। मैं भोरमें उनसे कह दूंगी।"

उसकी बातें सुनकर सोनासिंह गाली देता हुआ बोला—"तुम्हें कहकर क्या होगा? यह कोई राजदरवार थोड़े ही है कि राजा साहबके सोये रहनेपर महलमेंही उम्र लगाता जाऊं।"

कुछ दुखित होकर चम्पाने उत्तर दिया—"सिपाहीजी, बोली क्यों मारते हैं ? भला, राजा होनेका हम लोगोंका नसीब कहाँ ?" बीचमेंही डपटता हुआ सोनासिंह बोला—"जल्दी जाकर उसे जगा दो, नहीं तो मैं खुद अन्दर घुसकर डण्डेकी मारसे उसे जगाऊँगा। राजा बनकर ठाटके साथ सोया हुआ है। क्या इस गुलगपाड़ेसे उसकी नींद नहीं खुली होगी ? मैं उसे खूब जानता हूं। उसे जाकर अभी जगा दो, नहीं तो आज मैं डन्डेसे उसकी खोपड़ी रंग दूंगा।"

चम्पा—"सिपाहीजी ! यदि ईश्वर हमलोगोंको राजा बनाता तो क्या इसी तरह दाने दानेके लिये तरसते, कि राजाकी तरह हमलोग भी महलोंमें नहीं रहते ?"

दांत पीसते हुए सोनासिंहने उत्तर दिया—"चुप शैतानकी ! ज्यादे बक बक न कर। अभी चुपचाप उसे जाकर जगा दो। नहीं तो तुम्हारी हड्डी हड्डी चूर कर डालूंगा।"

चम्पा हाथ जोड़ती हुई बोली—"सिपाही जी ! कुछ भी तो दया कीजिये, अभी जगनेसे उनकी बीमारी बढ़ जानेका भय है।"

सोनासिंह—"बीमारी कोई हैजा प्लेग थोड़े ही है। उसे तो डण्डों की बीमारी हुई है और डण्डा खानेसे ही वह अच्छी होगी।"

चम्पा—"इस प्रकारकी दिल्लगी अच्छी नहीं होती है। किसीकी जान जाय और किसीका तमाशा, इसीको कहते हैं ?"

सोनासिंह—"तुम्हारे साथ दिल्लगी कौन करता है ? क्या तुम मुझपर झूठा इल्ज़ाम लगाना चाहती हो ?"

चम्पा—"माफ कीजिये सरकार! मुँहसे एक बात निकल गयी। पर इस समय उन्हें छोड़ दीजिये। यदि डण्डा ही मारना हो तो मैं हाजिर हूं। मुझे दिलभर पीट लीजिये।"

सोनासिंह—"डाइन कहींकी! बातें बनाना खूब जानती है। क्या मैं तुम्हारे दादेका नौकर हूं कि इस तरह तुम्हारे दरवाज़ेपर खड़ा रहूं? अभी यदि वह बाहर नहीं आयेगा, तो तुम्हींसे मार मारकर रुपये वसूल करूंगा। खेत क्या तुम्हारा दादा खरीदकर रख गया था कि लगान चुकाये बिनाही काश्तकार बनी रहोगी? आज मालिकका हुक्म है कि रुपया लिये बिना किसी तरह उसके दरवाजेपरसे नहीं हटना। अतएव आज बात बनानेसे काम नहीं चलेगा। मैं तो अभी रुपया वसूल करूंगा जरूर। चाहे वह बातसे हो या लातसे। पर आज मालिककी बात नहीं टल सकती है।"

चम्पा कुछ घबराती हुई बोली—"सिपाही साहब! अभी तो भर पेट दाना भी नसीब नहीं होता। फिर लगानकी बात कैसे करूँ?"

सोनासिंह—"फिर खेतपर कब्जा किस प्रकार बनाये रखोगी? क्या बिना लाठीकेही सांप मारना चाहती हो? लगान तो चुकानाही पड़ेगा और वह भी आज ही।"

चम्पा—"बाबूजी, लगान चुकानेसे इन्कार कौन करता है? पर अभी तो दो वर्षोंसे खेतमें एक पाव भी दाना पैदा नहीं हुआ है। यदि धरती माता इस प्रकार रुष्ट न हो जाती, तो हम लोगोंकी यह दशा ही क्यों होती? आप तो जानते ही हैं, सभी बातोंको। भला, आपसे क्या छिपा है?"

सोनासिंह—"खेतकी पैदावारसे हमें क्या मतलब ? फसलके मरनेपर क्या गवर्मेन्ट जमीन्दारोंसे लगान नहीं लेती है ? फिर काश्तकार मालगुजारी देनेसे किस प्रकार बच सकते हैं ? यह तो देनाही पड़ेगा। चाहे जान वेचकर दो या खेत बेचकर। बच निकलनेका तो कोई रास्ता नहीं है।"

चम्पा—"सरकार, लगान चुकानेसे इन्कार कौन करता है ? वह तो देनाही पड़ेगा। आज नहीं कल। लगान दिये बिना कोई राजाके राज्यमें किस प्रकार रह सकता है ? पर एक फसल लग जाने दीजिये। फिर देखियेगा कि उधार देनेवाले कितने महाजन खड़े हो जाते हैं। पर अभी तो कोई दाढ़ीजार कफनके लिये भी दो आने देनेके लिये राजी नहीं होता। अधिककी बात तो दूर रही। क्या किया जाय ? बड़ी मजबूरी है। तीन शामसे तो रोटीका एक टुकड़ा भी नसीब नहीं हुआ है। किसी प्रकार आप लोगोंका दिया हुआ थोड़ा बहुत खिला पिलाकर, बच्चोंकी जान बचाये जा रही हूं।"

सोनासिंह कड़कता हुआ बोला—"हरामजादी कहींकी ? अभी गरीब बनने चली है। कल दारोगा साहबसे लड़ाई करते समय हरमजादेकी गरीबी किस खेतमें घास चरने गयी थी ? बापरे बाप ! कहाँ दारोगा साहब और कहाँ कमीना बनवारी ? ईंटा भी कहीं पहाड़से टक्कर लेता है ? पर उस वक्त तो बेटा शमशेर बन गये थे। उसीका मजा अब मिलेगा। आज तो मैं मार मारकर रुपया वसूल करूँगा।"

चम्पा रोती हुई बोली—"क्या कहूं सिपाही साहब ! मैं इन्द

लाख समझाती हूं, मिन्नतें करती हूं कि भूलकर भी गांधीवालोंके फेरमें न पड़ो। पर ये मानते ही नहीं। आजकल इनकी अक्लही खराब हो गयी है। तभी तो इस प्रकार हठ करने लगते हैं। भला सरकारने जब खुद गांधीजीको ही जेलमें बन्द कर दिया और वे कुछ न कर सके, तो फिर वे अपने चेलोंको किस प्रकार आफतसे बचा सकेंगे ?"

सोनासिंह—"पर बनवरिया तो लक्ष्मीनारायण आदिके फेरमें पड़कर पूरा बहादुर बन रहा है।"

चम्पा—"जाने दीजिये, पागलोंका क्या ठिकाना है? वे तो पूरे पागलही हो गये हैं।"

सोनासिंह—"पागल कैसे है? मालूम पड़ता है कि गाँधीजीके मरनेके बाद लक्ष्मीनारायण उनके बदले राजा बनेगा और बनवरिया उनका मंत्री।"

चम्पा—"जब वह पागलही हो गये हैं, फिर उनकी बातोंका क्या ठिकाना? अगर मुंह झौंसा लक्ष्मीनारायण अब कभी मेरे दरवाजेपर आवेगा, तो झाड़ूसे मारते मारते मैं उसकी अक्लको दुरुस्त कर दूँगी। उसनेही इनके दिमागको खराब कर दिया है। न मालूम वह जादू जानता है या टोना, जिससे ये कुत्तेकी तरह उसके पीछे घूमते रहते हैं। वह तो सुखी आदमी है। इसलिये उसका दीवारसे भी टक्कर लगाना शोभा दे सकता है। पर हम लोग दुखिया ठहरे। रात दिन पावभर दानेकी चिन्ता बनी रहती है। दानेके बिना शरीरमें हड्डीके सिवा और कुछ भी नहीं बच रहा है।

हरसमय बालबच्चोंकी चिन्ता लगी रहती है। ऐसी दशामें हम लोगोंका किसीके सामने सर उठाना किस प्रकार शोभा दे सकता है ?"

सोनासिंह—"अरे, मैं यहां रुपया वसूल करने आया हूं या तुम्हारा लेक्चर सुनने ? लेक्चर सुननेके लिये इतनी रातको यहां आनेकी कोई जरूरत नहीं थी। अतएव जल्दी रुपया दाखिल करो, या उसको मेरे पास भेज दो। मैं उसे पकड़कर दरबारमें ले चलूंगा। आज टालमटोल करनेसे काम नहीं चल सकता है। क्या उस शैतानको पता नहीं था कि दारोगा साहब बाबूसाहबके खास दोस्त हैं। ये लोग एक साथही खाते पीते तथा उठते बैठते हैं।" फिर उनके साथ इस प्रकारकी शोखी करनेकी क्या आवश्यकता थी ?

चम्पा—"चलिये, उनके बदले में आपके साथ दरबारमें चलती हूं और बाबूसाहबके पैरोंपर गिरकर उनके अपराधके लिये माफी मांगूगी ? वे तो पागल हो गये हैं ? क्या बाबूसाहब एक पागलके कसूरको माफ़ नहीं करेंगे ?"

सोनासिंह—"फिर तुमने बात बनाना आरम्भ किया। मैंने तो पहले ही कह दिया कि आज बातोंसे किसी प्रकार काम नहीं चल सकता है। जल्दी उस पाजीको मेरे सामने ले आओ। नहीं तो मैं खुद उसे घरसे खींच लाऊँगा। बाबूसाहबका यही हुक्म है। आखिर मैं भी इसीकी रोटी खाता हूं।"

बनवारी आरम्भसे ही सोनासिंहकी सभी बातोंको सुन रहा था।

बालबच्चोंके कष्टोंकी चिन्ता करते करते लाख चेष्टा करनेपर भी उसे नींद नहीं आती थी। अतएव सोनासिंहकी पहली आवाजको ही उसने सुन लिया था। पर उसने समझा कि चम्पाके समझाने बुझानेसे वह किसी प्रकार लौट जायगा। अतएव वह चुपचाप पड़ा पड़ा सोनासिंहकी गालियां सहता रहा। गाली कोई भी विचारशील व्यक्ति नहीं सह सकता है। कुछ लोग अधिक उदारताके आवेशमें आकर अवश्यही गाली देनेवालेको क्षमा करना तथा उसकी बातोंकी ओर अधिक ध्यान नहीं देना, उदारताका एक अङ्ग समझते हैं। पर इस प्रकारकी उदारता, उदारता नहीं है। यह है नैतिक कायरता। यदि नपुंसक ब्रह्मचारी कहला सकता है, यदि गुलाम नम्र कहा जा सकता है, यदि कायर अहिंसाके सिद्धान्तको माननेवाला कहला सकता है, तो हम भी गालीके प्रति उदारतापूर्ण विचार रखनेवालोंको सहनशील अथवा नम्र कह सकते हैं; अन्यथा वे पहले दर्जेके कायर हैं। पर बनवारी दरिद्रताके कारण तथा उसके द्वारा उत्पन्न होनेवाली कमजोरियोंके कारण चुपचाप पड़ा पड़ा सोनासिंहकी गालियां सहता रहा। पर आखिर, वह भी मनुष्य है, उसकी सहनशीलता भी परिमित है; उसका शरीर भी रक्त तथा मांसका ही बना हुआ है। अतएव अधिक देरतक वह सोनासिंहकी असभ्यतापूर्ण गालियोंको नहीं सह सका। उसका खून खौल उठा, उसकी आत्मा थर्रा उठी तथा उसके हृदयमें भयङ्कर उथल पुथल मचने लगी। अतएव भगवानका नाम लेता हुआ वह दरवाजेपर आकर बोला—'क्यों सिपाहीजी! क्या गरीब

आदमीके इज्जत नहीं होती, जो आप इस तरह मुझे भद्दी भद्दी गालियां दे रहे हैं।"

बनवारीकी इन बातोंको सुनकर सोनासिंह झपटकर उसकी बांह पकड़ते हुए बोला—"क्या सभीको दारोगा साहब समझ रखा है ? अभी मालगुजारी दाखिल करो या चुपचाप मेरे साथ बाबू साहबके यहां चलो। नहीं तो तुम्हारी खैरियत नहीं है। अधिक बक बक किया, तो बदमाश, डण्डेसे मारकर बांह तोड़ दूंगा। हरामजादा कहींका, शेरकी तरह कूदकर भीतरसे आया है ; जैसे यह मुझे निगलही जायगा।"

बनवारी—"फिर आप गालियां दे रहे हैं। यदि अपनी इज्जत बचानी हो, तो मुंह सम्हालकर बातें कीजिये, नहीं तो मैं भी जानपर खेल जाऊँगा।"

सोनासिंह—"क्या मैं मुंह सम्हालकर बातें करूँ ? और तुम जानपर खेल जाओगे ?"

बनवारी—"और नहीं तो क्या ?"

बनवारीकी उत्तेजनापूर्ण बातोंने सोनासिंहकी क्रोधाग्निमें घीका काम किया। अतएव क्रोधसे कांपते हुए उसने तड़ातड़ उसपर दो डण्डा जमाकर अपने साथी विक्रमसिंहको पुकारा, जो ऐसेही मौकेके लिये घरके पीछे छिपा हुआ था। बुलाहट सुनतेही झट विक्रमसिंह भी उसकी सहायताके लिये आगया और दोनोंने मिल कर बनवारीको पीटना आरम्भ किया। पर बनवारीने भी सचमुच अपने कथनानुसार जानकी बाजी लगा दी। परन्तु दो संडे मुसंडे

आदमियोंके सामने उसका वशही क्या चल सकता था ? अतएव वह बड़ी परेशानीमें पड़ा। मार खाते खाते उसका शरीर शिथिल होने लगा। अन्तमें कोई उपाय न देखकर वह पागलकी तरह उन लोगोंको दांत काटने लगा। अचानक सोनासिंहके बांहमें उसने इस प्रकार दाँतकाटा कि उसके बाँहसे खूनकी धारा बहने लगी। अपने साथीको इस प्रकार घायल होते देख विक्रमसिंह और भी उत्तेजित हो, बनवारीको जल्लादकी तरह पीटने लगा। अधिक मार खानेपर वह शिथिल हो गया और वे लोग उसे जानवरकी तरह घसीटकर अपने मालिक रामकिशोर प्रसादके यहाँ ले चले। उस समयके भयानक दृश्यका वास्तविक चित्रण करना कठिन है। चम्पाका हृदय उस समय क्या कहता होगा, उसकी आत्मा ईश्वरको तथा उसके न्यायको किस प्रकार कोसती होगी, यह भी एक सोचने तथा समझनेकी बात है। चम्पाने उन लोगोंसे लाख मिन्नतें की, अपने सिरको उनके पैरोंपर रखा; पर पत्थरपर बीज बोनेकी तरह उसका कोई भी फल नहीं हुआ। वह वेचारी वहीं जमीनपर सर पटक पटककर रोती रही। अड़ोस पड़ोसका भी कोई व्यक्ति रामकिशोरप्रसादके भयसे उसे समझाने बुझाने तथा धैर्य दिलानेके लिये नहीं आया। इतनेमें चमेली वहां आ पहुंची और अपने घरका यह सर्वनाश देखकर, अपनी माताके साथ छाती पीट पीटकर रोने लगी।

इधर रास्तेमें इन यमदूतोंने बनवारीकी अवस्था और भी खराब कर दी। इनमें तो दयाका लेशमात्र भी नहीं था। इसके

साथही बनवारीकी स्वतन्त्र प्रवृत्तिने जो इन लोगोंके शब्दोंमें शोखी कही जा सकती है, इन्हें और भी उत्तेजित कर दिया। ये उसपर खार खाने लगे। अतएव रामकिशोर प्रसादके मकानतक पहुंचते पहुंचते उसकी अवस्था और भी खराब हो गयी, वह एक प्रकारसे चैतन्यहीन हो गया उस समय तक उसे बोलनेकी भी शक्ति नहीं रही।

बाबूसाहबके यहां पहुंचनेपर सोनासिंहने नमक मिर्च मिला-कर उनके सामने बनवारीकी शरारतकी लम्बी चौड़ी कहानी कही। एक तो दारोगा साहबकी बातोंको लेकर वे बनवारीपर पहलेसे नाराज थे ही। अब अपने आदमियोंके साथ उसकी शरारतका समाचार सुनकर वे उसपर और भी क्रोधित हो गये। करेलेमें नीमके संयोगकी तरह उनका गुस्सा और भी बढ़ गया। अतएव वे बनवारीको पीटकर उसकी खबर लेना चाहते थे। पर उसपर पहलेही बहुत अधिक मार पड़ चुकी थी। अब और मार खानेसे उसकी अवस्था खराब हो जानेका भय था। अतएव विक्रमसिंहके कहने पर उन्होंने उसे अधिक पीटनेका विचार छोड़ दिया।

उस समय बाबूसाहब भोजन करनेके लिये जा रहे थे। अतएव भोजन करके लौटनेके पश्चात् बनवारी उनके सामने लाया गया। अपनेको बाबूसाहबके सामने पाकर बनवारी आतुरतापूर्वक उनके पैरोंपर गिरकर रोता हुआ बोला—"सरकार, मेरा इन्साफ़ किया जाय। इनलोगोंने मेरी जान ले ली। बाप रे बाप! इतनी निष्ठुरता, राम! राम!! राम!!!"

निर्दयकी तरह मुस्कुराते हुए रामकिशोर प्रसाद बोले—"कमीना, अभी राम याद आ रहे हैं। शैतानी करते समय यह भोलापन कहां गया था? अब तार भेजो न, अपने बाप मजिस्ट्रेटको। मजदूर-संघके अपने दोस्तोंको कहां छोड़ आये हो? जरा मुझे भी देखना है कि वे किस प्रकारसे तुमको बचाते हैं?"

लड़खड़ाती हुई जबानसे बनवारी बोला—"सरकार, मैं मरा। चुल्हेमें जाय मजदूर-संघ। मेरी रक्षा कीजिये। आप मेरे माँ बाप हैं।"

रामकिशोरबाबू ताना मारते हुए बोले—"आजकल तो लक्ष्मी-नारायण न तुम्हारा बाप बना हुआ है? वह मजिस्ट्रेट साहबके पास तार भेजकर अवश्य ही तुमको बचा लेगा।"

रामकिशोरबाबूकी इन बातोंका बनवारी कोई उत्तर न दे सका। वह रोता रोता वहीं बेहोश हो गया। उसे होशमें लानेके बाद, एक कमरेमें बन्दकर देनेकी आज्ञा दे, बाबूसाहब सोनेके लिये चले गये।

तीसरा अध्याय

रातभर बनवारीको एक सुनसान कमरेमें बन्द रखा गया। उसे वहां कोई पानी देनेवाला भी न था। डण्डोंकी उसपर इतनी गहरी मार पड़ी थी कि उसका सारा बदन सूज गया था। रातभर दर्दसे बेचैन होकर वह ईश्वरको पुकारता रहा। इस बेचैनीकी अवस्थामें उसके हृदयमें नाना प्रकारकी तरंगे उठती रहीं। कभी सोचता कि मैं दारोगा साहब तथा सोना-सिंहसे क्यों उलझ पड़ा? समाजमें हम लोगोंकी जैसी स्थिति है, उसीके अनुसार तो हमें काम करना चाहिये। फिर सोचता कि क्या गरीबोंको ईश्वरने अपमान तथा अन्याय सहनेके लिये ही पैदा किया है? नहीं तो, मेरी इस दुर्दशाका दूसरा कारण ही क्या हो सकता है? यदि मैंने कोई अपराध भी किया है, तो यही न कि अन्य लोगोंकी तरह मैं अपमान तथा अन्यायको चुपचाप न सह सका। पर इसमें मेरा अपराधही क्या है? यदि दरिद्र केवल अपमान तथा अन्याय सहनेके लिये पैदा किये जाते हैं, तो ईश्वर-को उचित है कि वह उनका हृदय भी ऐसा कलुषित बनावे, जिसमें वे चुपचाप पुष्पवृष्टिकी तरह अपमानके बौछारोंको सहते रहें। चूहेके शरीरमें शेरका हृदय देना ईश्वरको कभी उचित नहीं है। यदि शेरकी तरह हृदय हो, तो उसमें शेरका पुरुषार्थ भी होना

चाहिये। इसी प्रकार पागलकी तरह नाना प्रकारको बातें सोचते सोचते, उसने रात काटी।

प्रातःकाल होते ही वह फिर रामकिशोरप्रसादके सामने उपस्थित किया गया। इस समयतक उसकी बेचैनी कुछ कम गयी थी। पर प्यासके कारण वह व्याकुल हो रहा था। अतएव उसने बाबूसाहबसे थोड़ासा जल मंगवा देनेकी प्रार्थना की। पर नक्कारखानेमें तूतीकी आवाजकी तरह उसका कोई फल न हुआ। बाबूसाहबने उसे डपटते हुए कहा कि यहां पानी पिलानेके लिये कोई तुम्हारा नौकर नहीं बैठा हुआ है। पानीके विषयमें इस प्रकार नादिरशाही हुक्म सुनाते हुए उन्होंने उससे पूछा—"तुम लगान क्यों नहीं चुकाते हो ?"

डरते हुए बनवारीने उत्तर दिया—"सरकारका लगान किस तरह रुक सकता है ? लगान चुकानेके लियेही तो बछवाको घरके सभी व्यक्ति बेटेकी तरह प्यार कर रहे हैं। अब वह दो वर्ष चार महीनेका हो गया है। दो-तीन महीनेके बाद उसके दूधके दांत टूटने लगेंगे। तब किसी दाममें बेचारेको बेचकर सरकारकी मालगुजारी अदा करूँगा। आप मां-बाप हैं। अतएव आपके सिवा मेरा दुखड़ा सुननेवाला दूसरा कौन है ?"

रामकिशोर प्रसाद—"शैतान बात बनानेमें बड़ा चौकस है। आजकल तो लक्ष्मीनारायण तुम्हारा बाप बन रहा है। अतएव उसीसे क्यों नहीं मालगुजारी अदा कराते हो ? दारोगा साहबसे झमेला करते समय क्या तुम अपनी गरीबीको भूल गये थे ?"

बनवारी—"सरकार, गरीबी क्या भूलूंगा ? होनेवाली बात होकरही रहती है। यदि बच्चा कोई कसूर करे, तो क्या मां-बाप उसे माफ़ नहीं करते हैं ? अतएव दारोगासाहबवाली बातको सरकार भूल जानेकी कृपा करें।"

गर्जते हुए रामकिशोरप्रसाद बोले—"क्या दारोगासाहबके अपमानको मैं भूल जाऊँ ? शैतान कहींका ? वे मुझे प्राणोंसे भी अधिक प्यारे हैं।"

बनवारी—"पर अब अपराध तो हो चुका है। सरकार, जैसा उचित समझें, दण्ड दें। मैं उसे सहनेके लिये तैयार हूं।"

रामकिशोर प्रसाद—"इसमें तुम्हारी मेहरबानीकी कोई बात नहीं है। उस अपराधका फल तो तुम्हें भोगनाही पड़ेगा। उसे चाहे प्रायश्चित्तके रूपमें भोगो या अत्याचारके रूपमें। पर इससे निकलनेका कोई रास्ता नहीं है।"

बनवारी—"सरकार, मैं प्रायश्चित्त करनेके लिये तैयार हूं। आप जो दण्ड देंगे, मैं बड़ी प्रसन्नताके साथ उसे शिरोधार्य करूँगा। पर सोनासिंहने कल मुझपर बड़ा अत्याचार किया। उन लोगोंने मुझे कुत्तेकी तरह पीटा है। वैसी मार कोई दुश्मन-को भी नहीं मारता है। पर मैं तो आपकी प्रजा हूं, पुत्र हूं।"

रामकिशोर प्रसाद—"मुझे अफसोस है कि उन लोगोंने तुम्हें जिन्दा छोड़ दिया। तुमने कल उन लोगोंके साथ बड़ी शोखी की है। क्या तुम्हारी इतनी हिम्मत हो गयी कि तुम मेरे आद-मियोंके साथ बढ़ बढ़कर बातें करो ? तुमने किस बलपर कल

सोनासिंहको दाँत काटनेका हौसला किया ? क्या तुम्हारा हौसला यहांतक बढ़ गया है ? आज तुम्हारा एक एक दांत तोड़कर मैं उसका मजा चखाता हूँ ।"

बनवारी रोता हुआ बोला—"सरकार, मुझसे पागलपन हो गया। यह सब मेरे भाग्यका दोष है। मैं कसूरवार हूं। माफ किया जाय।"

रामकिशोर प्रसाद—"बड़ा माफ करानेवाला बना है। यदि अधिक बकबक करेगा, तो मारते मारते अभी हड्डी पसली चूर चूर कर दूँगा। हरामजादा कहींका! पूरी मजदूरी लेने चला था।" इस प्रकार बोलते हुए, उन्होंने दो प्यादोंको हुक्म दिया कि इस शैतानके बच्चेको ले जाकर, दिवानखानेके सामने दोपहरतक धूपमें बिठलाओ और इस बातका ख्याल रखना कि यह बदमाश टससे मस न होने पाये।

मालिकका हुक्म पाते ही वे लोग उसे दिवानखानेकी तरफ पकड़कर ले गये।

अब बनवारीके परिवारवालोंके सम्बन्धमें भी कुछ लिखना अनुचित न होगा। रातभर चम्पा तथा चमेली छाती पीट पीटकर रोती रही। न कोई उन्हें ढाढ़स देनेवाला था और न कोई हिम्मत बढ़ानेवाला। उन लोगोंको रोते पीटते देखकर उसकी छोटी बहन तथा चार वर्षका दुधमुँहा भाई भी अनाथकी तरह रोता रहा। कोई उन लोगोंकी सुधबुध लेनेवाला भी नहीं था। उनकी दुर्दशा देखनेवाला भी ईश्वरके सिवा और कोई

दूसरा न था। वे उसीके काल्पनिक चरणोंपर अश्रुवृष्टि कर रहे थे। सचमुच उन लोगोंका रोना पीटना एक बड़ा ही करुणापूर्ण दृश्य उत्पन्न करता था।

प्रातःकाल होते ही अड़ोस पड़ोसकी कई औरतें आकर उन लोगोंको नाना प्रकारकी सम्मति देने लगीं। आगे क्या करना चाहिये, इस विषयपर परस्पर विवाद होने लगा। आखिर सब लोगोंने मिलकर यही निश्चय किया कि बाबूसाहबके यहाँ जाकर छुटकारेके लिये प्रार्थना करनेके सिवा और कोई दूसरा रास्ता नहीं है। यह बात सर्वसम्मतिसे पास हो ही रही थी कि इतनेमें बलदेवकी मां बोल उठी—"लक्ष्मीनारायणको भी इस घटनाकी खबर देनी चाहिये। वह बहुत कुछ सहायता कर सकता है।" पर उसकी बात सुनते ही चम्पा झुलसती हुई बोली—"उस मुँह-झौंसेका क्या नाम लेती हो, बहन। उसी दाढ़ीजारने तो हम लोगोंकी यह दुर्दशा कराई है। वे न उसके फेरमें पड़ते और न बाबूसाहब हम लोगोंपर इतने नाराज होते। उसका संसर्ग करनेसे तो मामला और भी बेढब हो जायगा। मैं तो उसका मुँह भी नहीं देखना चाहती हूं।"

चम्पाकी बातमें हाँमें हाँ मिलाती हुई बद्रीकी मां बोली—"हाँ बहन, तुम्हारा कहना बहुत ठीक है। राजाके राजमें रहकर कोई उसके खिलाफ किस तरह काम कर सकता है? अच्छी लगे या बुरी, उसकी बात तो माननी ही पड़ेगी। पर अब तो जमाना ही बदल गया। लोग राजाकी भी जड़ खोद डालना चाहते हैं।

इसी कारणसे आजकल लोगोंके ऊपर विपत्तिका पहाड़ टूट रहा है।

उसकी बात बीचमें ही काटती हुई कलियाकी माँ बोल उठी —"इसी कारणसे तो देशमें इतना हैजा प्लेग फैला करता है। राजा ईश्वर होता है। अतएव उसकी बात नहीं माननेका तो फल अवश्यही बुरा होगा। पर कुछ मुंहझौंसे इस बातको नहीं समझकर, व्यर्थही हल्लागुल्ला मचाया करते हैं। परन्तु उनके पापका फल सभीको भोगना पड़ता है। बनवारीके दुखकी बात सुनकर मैं रातभर छाती पीटकर रह गयी।"

इस प्रकार वाद विवादका सिलसिला बढ़ने लगा। उपस्थित औरतोंको उसमें काफी मजा मिलता था। पर चम्पा दुखी थी, संतप्त थी, उसे अधिक बातें अच्छी नहीं लगती थीं। अतएव शीघ्रही उसने सब लोगोंसे अन्तिम सम्मति चाही। अन्तमें अधिकांश औरतोंने बाबूसाहबसे प्रार्थना करनेके पक्षमें ही सम्मति दी। कलियाकी माँने भी इसी बातका समर्थन किया। वह उस जगहकी सभी औरतोंमें बुद्धिमती गिनी जाती थी। सभी कोई उसकी बातोंको शान्तिके साथ सुनते थे। अतएव उसका निश्चयही अन्तिम निश्चय रहा। अन्तमें बच्चोंको ईश्वरके भरोसे छोड़कर, ये दोनों माँ-बेटी रोती-पीटती रामकिशोर प्रसादके यहाँ जा पहुँची।

उनलोगोंको देखतेही बाबूसाहब क्रोधसे और भी आग बबूला हो गये और गर्जते हुए बोले—"तुमलोग क्यों मेरी खोपड़ी

चाटनेके लिये आई हो ? अभी यहाँसे भाग जाओ, नहीं तो, तुम लोगोंको भी बन्द करवा दूंगा।"

रोते रोते जमीनपर लोटती हुई चम्पा बोली—"सरकार, उनके कसूरको माफ कर दिया जाय। उनके बदले फाँसीपर चढ़-नेके लिये मैं तैयार हूं। यदि आप उन्हें नहीं छोड़ेंगे, तो रोते रोते मैं यहींपर प्राणत्याग कर दूंगी।"

रामकिशोर प्रसाद—"चुप हरामजादी ? यहाँ क्यों प्राण त्यागेगी ? यह क्या तुम्हारे दादेका मकान है ? ज्यादे बकबक करनेसे मैं तुमलोगोंकी भी खबर लूंगा।"

बाबूसाहबकी यह रंगत देखकर, उनलोगोंका साहस और भी टूट गया और वह दोनों चिल्ला-चिल्लाकर रोने लगीं। किसी प्रकार रोना पीटना बन्द न होते देखकर बाबूसाहबकी आज्ञासे दोनों माँ बेटी भी अलग अलग दो कमरोंमें बन्दकर दी गयीं।

अभी तक रामकिशोर बाबूके विषयमें थोड़ा बहुत जो कुछ लिखा जा चुका है, उसे पढ़कर पाठकोंको अवश्य ही पता लग गया होगा कि वे एक निष्ठुर तथा निरंकुश व्यक्ति हैं। धन तथा शक्तिका वे अधिकसे अधिक दुरुपयोग कर रहे हैं। पर इतनेसे ही उनके चरित्रका वास्तविक परिचय नहीं मिलता। उनमें एक और बड़ा दुर्गुण है, जो उनके अन्य दुर्गुणोंसे कहीं बढ़कर उनके चरित्रको कलंकित तथा कलुषित बनानेवाला है। वे बहुत अधिक बिलासी हैं। पशुवृत्ति मनुष्योंके शरीरपर किस प्रबलतासे अपना अधिकार जमा सकती है, इसके वे ज्वलन्त उदाहरण हैं।

चरित्र-हीनताका दोष इनके स्वरूपको बहुतही कलंकित कर रहा है। परायेकी माँ बहनोंके प्रति बुरी निगाहसे देखना, इनके लिये अदनी सी बात है। ये उसमें इतने अभ्यस्त हो गये हैं कि उसे शायद किसी प्रकारका दोष भी नहीं समझते।

बनवारीकी युवती कन्या चमेलीके साथ व्यभिचार करनेकी लालसा, आज कई वर्षोंसे इनके हृदयमें उठ रही है। चमेली युवती है, सुन्दरी है; उसके रूपमें भोलापन है, आँखोंमें आकर्षण है तथा है चेहरेपर देखनेवालोंको अपनी ओर खींचनेकी शक्ति। किसी गरीबके घरमें इस प्रकारकी रूपवती कन्या संयोगसेही पायी जाती है।

आजसे दो वर्ष पहले रामकिशोर बाबू चमेलीके सामने किसी प्रकार अपने दुष्ट विचारको प्रकटकर चुके थे। पर वह किसी तरह उनके चंगुलसे निकल भागी और लाख चेष्टा करने-पर भी किसी प्रकार उनके वशमें नहीं आयी।

उसके कुछ दिनोंके बाद, वह ससुराल चली गयी। अतएव इस प्रसंगमें किसी प्रकारका अत्याचार करनेका मौका, रामकिशोर बाबूको उस समय न मिला। अब एकाएक चमेलीको अपने सामने पाकर वे किसी प्रकार अपनी दुष्टवृत्तिको नहीं रोक सके और यही कारण है कि उन्होंने उनलोगोंको दो अलग अलग कमरोंमें बन्द करनेकी आज्ञा दी।

चमेली निःसहाय अवस्थामें, अपनेको इस प्रकार देखकर बड़ी चिन्तामें पड़ी। अपने पिताके छुटकारेके प्रलोभनमें पड़कर वह माताके साथ यहाँ आयी थी। अतएव उस समय उसे भूलकर

भी इस बातका कोई ज्ञान न था कि बाबूसाहब उनलोगोंको भी कैदकर रखेंगे। यदि वह ऐसा जानती, तो सम्भवतः कभी इस प्रकारकी भूल नहीं करती। पर अपनेको एक बन्द कोठरीमें पाकर रामकिशोर प्रसादके उस दुर्व्यवहारका स्मरण होतेही वह व्यग्र होने लगी। उसे सतीत्वकी चिन्ता बेतरह सताने लगी। एक तो पिताके कष्टोंकी चिन्ता तथा इसके साथही निःसहाय अवस्था में एक दुष्टके चंगुलसे सतीत्व-रक्षाका प्रश्न। अपनेको इस प्रकार एक पेचीले व्यूहमें पाकर उसकी अवस्था बड़ीही दयनीय हो गयी। यदि इस समय बाबूसाहब किसी तरह उसके साथ दुराचार करनेके लिये उद्यत होंगे, तो उसकी रक्षा किस प्रकार हो सकेगी, यह सोचकर वह व्याकुल होने लगी। भगवानने उसे रूप क्यों दिया, यह विचार कर, वह उन्मादिनीकी नाँई बार बार उन्हें धिक्कारने लगी। उसके हृदयने कहा कि लोग तो कहा करते हैं कि रूप पूर्व जन्मके पुण्योंके फलस्वरूप मिलता है। अतएव इससे सुख तथा शान्ति मिलनी चाहिये। पर सुखकी कौन कहे, इस रूपके कारण ही उसे सदा कष्टोंका सामना करना पड़ता है। क्या पूर्व-जन्मके पुण्यका फल कष्टही होता है? इसी तरह नाना प्रकारकी बातें उसके हृदयमें उठने लगीं। उसकी अपरिपक्व बुद्धि इस सम्बन्धमें कोई निर्णय नहीं कर सकी। अन्तमें भाग्यकी बातें सोचकर उसे थोड़ी बहुत शान्ति मिली। उसके हृदयने कहा कि जब तुम्हारे भाग्यमें दुख ही दुख बदा है, फिर तुम्हें सुख किस प्रकार मिल सकता है? अतएव भगवानका स्मरण करती हुई, वह चुपचाप अपने भाग्यका अन्तिम फैसला देखनेके लिये उद्यत हो गयी।

चौथा अध्याय

चम्पा तथा चमेलीके बन्द किये जानेके बाद इस घटनाका समाचार समूचे ग्राममें फैलने लगा। बनवारीके साथ इस प्रकारकी सख्तीका समाचार सुनकर, प्रायः सभी लोगोंका हृदय दहल उठा। दो चार आदमियोंके इकट्ठा होते ही इसी बातकी चर्चा छिड़ जाती है और लोग इस सम्बन्धमें तरह तरहका विवेचन करने लगते हैं। चरणदास बनवारीका बचपनका साथी है। वह अपने मित्रकी इस विपत्तिका समाचार सुनकर व्यथित हो उठा। शीघ्र ही उसके पड़ोसी रामशरण तथा बनारसीलाल आदि भी वहां इकट्ठे हो गये। वे लोग भी बनवारीके प्रति सहानुभूति दिखलाने लगे। अपने विचारके कई लोगोंको इकट्ठा होते देखकर चरणदासका साहस कुछ बढ़ा और वह इन लोगोंसे इस विषयमें परामर्श करने लगा। बनारसीलालने उसकी बातोंको सुनकर कहा —"प्रत्येक वस्तुकी सीमा होती है। पर रामकिशोर बाबूका अन्याय अब अपनी सीमासे बहुत आगे बढ़ चुका है। अतएव अवश्यही अब उनका पतन होगा। बाप रे बाप, ऐसा अन्धेर!"

उसकी बातोंमें हांमें हां मिलाता हुआ रामशरण बोला— "हां, भाई ऐसा अन्याय तो मैंने आजतक कहीं सुना भी नहीं था। कौन नहीं, किसीका दश-बीस रुपया धारता है? पर क्या रुपयेके लिये कोई किसीकी जान ले सकता है?"

बीचमें ही बात काटकर बनारसीलाल बोला— "अजी तुम्हें क्या पता है ? रुपये-पैसेके लिये कोई किसीको इतना तंग थोड़े ही करता है ? मजदूर संघके आज्ञानुसार परसों बनवारीने दारोगा साहबको पूरी मजदूरी देनेके लिये बाध्य किया था और इसी कारणसे बाबूसाहब उसे इतना कष्ट दे रहे हैं, अतएव यह केवल बनवारीका ही प्रश्न नहीं है। इसके निपटारेपर हमलोगोंके संघके प्रत्येक व्यक्तिकी प्रतिष्ठा अथवा अप्रतिष्ठा निर्भर करती है। अतएव हम लोगोंको उचित है कि सभी आदमी मिलकर बनवारीको इस कष्टमें सहायता दें।"

चरणदास कुछ आश्चर्यसे बोला –"क्या सचमुच ऐसी बात है ? यदि रामकिशोर प्रसाद मजदूर संघमें भाग लेनेके कारण उसे इतना कष्ट दे रहे हैं तो सचमुच उनकी अवस्था दयनीय है। क्या वे नहीं जानते कि अब वह जमाना बीत गया, जब अमीर आदमी गरीबोंके स्वत्वोंको पैरोंसे ठुकराया करते थे। यदि अमीरको ईश्वर पैदा करता है, तो क्या गरीबको भी वही ईश्वर नहीं बनाता है। ऐसी अवस्थामें अहमन्यता क्यों ? अपनी प्रतिष्ठाका झूठा अभिमान क्यों ? क्या किसीको दबानेसे कोई व्यक्ति प्रतिष्ठित हो सकता है ? प्रतिष्ठा तो दूसरोंको सम्हालनेमें है, ठुकरानेमें नहीं।"

बनारसी—"पर इस जमानेमें इन बातोंको सोचता कौन है ? अपनी प्रतिष्ठा चाहनेवालेको दूसरोंकी प्रतिष्ठा करनी चाहिये यह संसारका एक निर्विवाद सिद्धान्त है। पर, आजकल इसे मानता ही कौन है ? अन्धेकी तरह सभी कोई अन्यायके पीछे दौड़ रहे

है, उचित अनुचितका तो अब कोई विचार ही नहीं करता।"

चरणदास—"पर इसी मामलेमें बाबू रामकिशोरका दबदबा भी खतम हो जायगा। अन्याय तथा अत्याचारका क्या फल होता है, इसकी उन्हें पूरी शिक्षा मिल जायगी।"

तुलसी नामक एक वृद्ध व्यक्ति जो आरम्भसे ही एक कोनेमें बैठकर इन लोगोंकी बातें सुन रहा था, चरणदासकी इन बातोंसे ऊबकर बोला-"अब घोर कलयुग आगया। भला, अपने राजाके खिलाफ बोलते हुए इन लोगोंको शर्म भी नहीं आती। बाबू राम-किशोर कैसे भी हैं, तो हम लोगोंके राजा हैं ही। क्या हम लोगोंके बाप दादा उनके बाप दादोंके दिये हुए टुकड़ोंसे नहीं पलते आये हैं? फिर उनके खिलाफ बोलते समय तुम लोगोंकी जिह्वा क्यों नहीं गिर जाती? यह बड़े ही आश्चर्यकी बात है।"

उसकी बातें सुनकर रामशरणने हंसते हुए उत्तर दिया—'तुलसी बाबा भी, एक पुराने ख्यालके आदमी हैं। दुनियाका रुख चाहे किसी ओर हो, पर ये चलेंगे ठीक अपनी नाकके सामने।"

तुलसी कुछ झुंझलाता हुआ बोला—"तुमलोगोंने मुझे सुअर समझ रखा है क्या? क्या जानते हो कि नाकके सामने कौन चला करता है?"

रामशरणने मुस्कुराते हुए कहा—"बाबा, चमड़ेकी जबान ठहरी। जरा बहक ही गयी, तो क्या किया जाय?"

आंखें लाल-पीली करते हुए तुलसीने उत्तर दिया—"धिक्कार है, तुम लोगोंको। तुम्हारी जिह्वा नहीं गिर जाती, इसका मुझे

आश्चर्य है। रामशरण—"तुमभी तो अजीब बातें कह रहे हो। यदि एक दुराचारीका विरोध करनेसे जिह्वा गिर जायगी, तो ईश्वरने क्या इसे पापियोंका गुणगान करनेके लिये बनाया है?"

तुलसी—"अभी तुमलोगोंमें जवानीका जोश है न? इसीसे इस तरहकी बातेंकर रहे हो। जरा, कभी धक्केमें पड़ो, तो आटा दालका भाव मालूम पड़ जाय। अभी बनवारीसे जाकर पूछो कि पहाड़से टक्कर लगानेका कैसा फल होता है? घरमें खानेके लिये तो एक दाना भी नहीं और चले थे बहादुरी दिखलाने। पर ऐसा ठोकर लगा कि एक दिनमें ही चूं बोल गये।"

बनारसीलाल—"अजी, भई! तुमसे क्या बातें करें? बुड्ढोंकी अक्ल सठिया जाती है, इसीसे इस तरह, बे सिर पैरकी बातें कर रहे हो। बनवारी चूं क्या बोल गया? वह तुम्हारे जैसा कायर थोड़े ही है कि जूतियां पड़ने पर भी टससे मस न हो। बहादुर आदमी कष्टोंकी परवाह न कर अपनी प्रतिष्ठा बचानेके लिये लड़ा ही करते हैं।"

तुलसी कुछ बिगड़कर बोला—"बस, बहुत हो चुका। तुम्हारी अक्कका भी अब मुझे थाह लग गया। बड़े बूढ़ोंके सरपर जूती लगानेमें ही आजकलके छोकड़े अपनी प्रतिष्ठा समझते हैं।"

बनारसीलाल—"इस प्रकारकी वेवकूफी मैंने कब की है?"

तुलसी—"क्या तुमने अभी मुझे जूताखोर नहीं बतलाया है?"

बनारसीलाल-" अजी, बाबा! मैंने तो वह एक कायरताका

मिसाल दिया। तुमको थोड़े ही कहा है! क्या इसी बातसे खफा हो गये? मैंने तो कायरोंको जूताखोर बतलाया है। तुम कायर थोड़े ही हो?"

तुलसी-"बड़ा कायर कायर बक रहे हो। क्या बाप दादोंके रास्तेपर चलना कायरता है?"

बनारसीलाल—"प्रत्येक स्थानके लिये भिन्न भिन्न प्रकारके रास्ते होते हैं। समतल भूमिके रास्ते जिस प्रकार सीधे होते हैं; उसी तरह पहाड़ोंके नहीं। वहां बाध्य होकर टेढ़ा मेढ़ा रास्ता बनाना पड़ता है, उसी तरह भिन्न भिन्न युगका भी अलग अलग रास्ता होता है। एक युगका रास्ता दूसरे युगमें उसी रूपमें काम नहीं दे सकता। उसमें अवश्य ही थोड़ा बहुत परिवर्तन करना पड़ेगा। पर यहां तो यह प्रश्न उठता ही नहीं है। क्या हमारे बाप दादे कायरोंकी तरह अन्यायको सहा करते थे? कायरता तो एक ऐसा पाप है, जिसका प्रायश्चित भी नहीं हो सकता।"

तुलसी हंसता हुआ बोला—"इसीको डींग कहते हैं, डींग। तुम लोगोंके जैसे नास्तिक आदमीसे जो न हो वही थोड़ा है। बड़े बहादुर बनने चले हो। इसका फल तो बनवारीकी तरह तुम लोगोंको भी चखना पड़ेगा। बाबा! मेरे छोकड़वाको भी कहीं यही पाठ न पढ़ा देना। आज कई दिनोंसे उसे मैं तुम लोगोंके साथ देखता हूं। यदि वह अब तुम लोगोंके पास आया, तो मारते मारते मैं उसकी हड्डी चूर चूर ही कर दूंगा।

बनारसीलाल—"वाह तुलसी महाराज! इसीको कहते हैं,

सावनके बादलका भादोमें बरसना। बहस अभी तुमसे हमलोगोंने की और हड्डी चूर चूर करोगे बेचारे भोलेकी। यदि हमलोगोंका गुस्सा किसी तरह उसपर निकाला, तो देखना, उसका फल अच्छा न होगा। हमलोग तुम्हारी खोपड़ी चाट डालेंगे।"

बनारसीलालकी इन बातोंको सुनकर बुड्ढा क्रोधके मारे जमीनपर डण्डा पटकता हुआ यह बोलते बोलते चल पड़ा—'यह तो अजीब जमाना आगया। भला, ये लोग मेरे बदले मेरे लड़केके भी बाप बन जाँयगे क्या? जिस तरह ये लोग प्रजापर जमीन्दारोंका कोई अधिकार रहने देना नहीं चाहते, उसी तरह मालूम पड़ता है कि लड़कोंपर अब बापका भी कोई हक नहीं रहेगा, बापरे बाप! घोर कलिकाल आ गया। अब जरूर कलंकी भगवानका अवतार होगा।"

बुड्ढेके चले जानेपर चरणदास गम्भीरता पूर्वक बोला—"अब व्यर्थका समय नष्ट न कर, हम लोगोंको किसी तरह बनवारीकी सहायताका प्रवन्ध करना चाहिये। अच्छा होता, यदि शीघ्रही लक्ष्मीनारायणको भी इस बातकी खबर दे दी जाती।"

उसकी बातोंका समर्थन करता हुआ रामशरण बोला—"अब हमलोगोंको उन्हींके यहाँ चलकर, इस विषयका निर्णय करना चाहिये। क्योंकि वे बुद्धिमान आदमी हैं और हमलोगोंके संघके सेक्रेटरी भी हैं। बेचारा बनवारी आज संघकी प्रतिष्ठाके लियेही कष्टमें पड़ा हुआ है। अतएव लक्ष्मीबाबूसे बढ़कर इस समय उसका कोई दूसरा सहायक नहीं हो सकता है।"

सब लोगोंका लक्ष्मीनारायणके यहाँ जाना ही स्थिर हुआ। अतएव तीनों व्यक्ति उसी समय उनके मकानकी ओर चले। पर लक्ष्मीनारायणको, इनलोगोंके जानेके पहलेही बनवारीके कष्टोंका पता लग चुका था। वे स्वयं इस विषयको लेकर चिन्तित बैठे थे। अतएव चरणदास आदिको देखकर उन्हें बड़ी प्रसन्नता हुई। उन लोगोंने वहाँ पहुंचकर आरम्भसे ही किस्सा शुरू किया। पर लक्ष्मीनारायणने बीचमेंही बात काटकर कहा कि मुझे सब कुछ मालूम है। अतएव व्यर्थका समय नष्ट न कर, हमलोगोंको कानूनी कार्रवाई आरम्भ करनी चाहिये। पर इसके पहले बनवारीकी स्त्रीसे मिल लेना उचित है। वह बेचारी बहुत परेशान होगी।

लक्ष्मीनारायणकी इन बातोंको सुनकर रामशरणने आश्चर्यसे कहा—"भला, उसकी स्त्रीसे आप किस प्रकार मुलाकात कर सकते हैं ?"

लक्ष्मीनारायण—"क्यों ? इसमें रुकावट क्या है ?"

रामशरण—"क्या आपको पता नहीं है कि उस दुष्टने बनवारीकी स्त्री तथा उसकी बड़ी लड़कीको भी बन्दकर रखा है।"

लक्ष्मीनारायण—"यह किस समयकी बात है ?"

रामशरण—"आज प्रातःकालकी।"

लक्ष्मीनारायण—"वे किस प्रकार उसके फन्देमें पड़ीं ?"

बनारसीलाल—'आज प्रातःकालके समय दोनों माँ बेटी बनवारीको छुड़ानेके लिये वहाँ गयी थीं। उसी समयसे उसने इन लोगोंको भी बन्दकर रखा है।"

लक्ष्मीनारायण—"तो यह अत्याचारकी पराकाष्ठा हो गयी। उनलोगोंकी चिन्ता छोड़कर अब मुझे चमेलीकी चिन्ता हो रही है। वह दुष्ट पहलेसे ही उसका सतीत्व अपहरण करना चाहता था। अब चमेलीकी इस समय क्या अवस्था होगी, यह सोच-कर मेरा हृदय व्याकुल हो रहा है। खैर, अब शीघ्र ही हम लोगोंको कोई प्रबन्ध करना चाहिये। यदि इस समय हमलोग उनको किसी प्रकारकी सहायता न कर सके, तो यह बड़ेही कलंककी बात होगी। लोग यह कहकर ताना मारा करेंगे कि चले थे मजदूर संघसे जमीन्दारोंका दबदबा उठाने, पर पहलीही ठोकरसे चूर चूर हो गये।"

इतना कहकर उन्होंने चरणदासको बनवारीकी छोटी लड़की तथा लड़केकी देखभाल करनेके लिये उसके घरपर भेजा और स्वयं रामशरण तथा बनारसीलालके साथ इस मामलेकी डायरी कराने थानेकी ओर चले।

कुछ दूर जानेपर उन लोगोंने सोचा कि दारोगा साहब इन दिनों हमलोगोंके कट्टर शत्रु बने हुए हैं और विशेषकर बनवारीकी मजदूरीको लेकर ही यह झमेला खड़ा हुआ है। अतएव वह हम लोगोंकी बातको अवश्य ही किसी न किसी प्रकार टाल देंगे। यही सोचकर उनलोगोंने सबसे पहले मजिष्ट्रेटके पास इस विषयका एक तार भेजना आवश्यक समझा। अतएव बनारसीलाल तार भेजनेके लिये डाकखानेकी ओर चले गये और लक्ष्मीनारायण रामशरणके साथ थाना पहुंचे।

उस समय तक ग्यारह बज चुके थे। दारोगा साहब भोजन आदि समाप्तकर, अपने एक मित्रके साथ शतरञ्ज खेल रहे थे। इसी समय लक्ष्मीनारायण वहाँ पहुंचकर उनके मजेको किरकिरा करने लगे। उनके पहुंचते ही दारोगा साहबने मुस्कुराते हुए कहा—"कहिये, किस मतलबसे इस धूपमें इतनी तकलीफ की है?"

लक्ष्मीनारायण—"आपको एक मामलेकी खबर देनेके लिये हमलोग यहाँ आये हैं। खेलमें बाधा तो अवश्य पड़ेगी। पर-मामला जरूरी है, इसलिये उसे सुनलेना भी आवश्यक है।"

दारोगा—"बोलिये, क्या कहना है? हमलोगोंका और दूसरा काम ही क्या है?"

लक्ष्मीनारायण "बाबू रामकिशोर प्रसादने बनवारी, उसकी स्त्री तथा उसकी बड़ी लड़कीको गैर कानूनी तरीकेसे अपने मकानमें कैद कर रक्खा है। अतएव इस सम्बन्धमें आप जैसा उचित समझें करें।"

लक्ष्मीनारायणकी बातें सुनकर दारोगा साहब ताना मारते हुए बोले -"अंग्रेजो राज्यमें तो ऐसा अन्धेर कभी नहीं हुआ था। पर मजदूर संघका राज्य शुरू होते ही क्या अमीर आदमी गरीबोंको कैदमें डालने लगे? यह तो आप लोगोंके सिद्धान्तके सर्वथा प्रतिकूल है। यदि ऐसी बात है, तो इसके सबसे बड़े जिम्मेदार आप लोग ही हैं। भला, अपने संघके रहतेही आप पुलिससे क्यों सहायता चाहते हैं? क्या इस मामलेका फैसला करनेकी शक्ति आपमें नहीं

है ? फिर किस बलबूतेपर आप मजदूर राज्य कायम करने चले थे ?"

दारोगा साहबकी बातें सुनकर लक्ष्मीनारायणने कुछ झुल्सते हुए उत्तर दिया -" दारोगा साहब, इस तरह ठठोलबाजी करनेसे कोई लाभ नही है । वह जमाना भी बहुत शीघ्र ही आ रहा है, जब आप लोगोंको भी राष्ट्रीयताके सामने सर झुकानेके लिये बाध्य होना पड़ेगा । अभी आप भलेही गर्वकी बातें कर लें । पर जमाना आपको झुकायेगा और जरूर झुकायेगा ! अन्यायका पर्दा एक न एक दिन अवश्य ही फटता है । अन्यायका आधार ही पाप है । अतएव वह कभी स्थायी हो नहीं सकता । उसका नाश होना सूर्यास्तकी तरह ध्रुव और सत्य है ।"

दारोगा साहब- 'क्या हम लोग अन्यायी हैं ? आपको कोई बात बोलनेके पहले उसपर विचार लेना चाहिये ।"

लक्ष्मीनारायण—" हां, मैं विचारकर बातें कर रहा हूं । आप लोगोंको तो पशुबलका नशा रहता है । पर मुझे किसका नशा है, जो बिना बिचारे बातें करुंगा । आप गरीबोंको सताते हैं, उनका खून पीते हैं, यह अन्याय नहीं, तो और है क्या ? गरीबोंको सताना ईश्वरकी दृष्टिमें एक अक्षम्य अपराध है । गरीब ईश्वरके वास्तविक प्रतिनिधि होते हैं । उनके ऊपर अत्याचार करना' ईश्वरके ऊपर अत्याचार करनेके बराबर है ।

बीचमें ही बात काटते हुए दारोगा साहब बोले —" और आप इस दुनियामें ईश्वरके एजेन्ट बनकर आये हैं ।"

लक्ष्मीनारायण—"मैं आपसे बहस करना नहीं चाहता।"

दारोगा—"आपसे बहस करनेके लिये उतावला कौन हो रहा है? हां, अभी आप बोल रहे थे कि आप लोग पशु बलके नशेमें रहते हैं। फिर उसी पशुबलके सामने आप सिर झुकानेके लिये क्यों आये हैं?"

लक्ष्मीनारायण—"मैंने पशुबलके सामने सिर कब झुकाया?"

दारोगा—"पशुबलसे सहायताकी आशा करना, उसके सामने सिर झुकानेके सिवा और क्या कहा जा सकता है?"

लक्ष्मीनारायण—"मैं आपसे सहायता नहीं चाहता। पर आपको अपना कर्त्तव्य करनेके लिये वाध्य करने आया हूं।"

दारोगा—"आप मुझे वाध्य करनेवाले होते हैं कौन?"

लक्ष्मीनारायण—"दारोगासाहब! ठठोलबाजी छोड़कर, आप अपने पदके उत्तरदायित्वको समझें, जिसपर आपका यह सतरंज और चौपड़ निर्भर करता है।"

दारोगा साहब कुछ गर्माते हुए बोले—"आप मेरे साथ बहुत अनुचित तरीकेसे बातें कर रहे हैं। आपका असल मतलब क्या है? आप मुझसे कुछ काम लेना चाहते हैं या लड़ाई करनेके विचारसे यहां आये हैं? व्यर्थका बकवाद अच्छा नहीं होता।"

लक्ष्मीनारायण—"मैं तो आपके साथ कामकी बातें कर रहा था। पर मजदूर-संघकी दिल्लगी उड़ाकर, आपने खुद ही बे सिर पैरकी बातें आरंभ कर दीं। खैर यदि मुझसे कोई अपराध हुआ हो, तो उसे आप क्षमा करेंगे। अवश्य मेरे मतलबकी बात सुनिये। राम-

किशोर प्रसादने बनवारी, उसकी स्त्री तथा उसकी बड़ी लड़कीको गैर कानूनी तरीकेसे बन्दकर रखा है। मैं मजदूर संघके सेक्रेटरीकी हैसियतसे आपको इस बातकी सूचना देता हूं और जानना चाहता हूं कि आप इस सम्बन्धमें कुछ करना चाहते हैं या नहीं।"

दारोगा—"आप व्यक्तिगत रूपसे सूचना दे सकते हैं, पर वहैसियत एक सेक्रेटरीके, आपको सूचना देनेका अधिकार ?"

लक्ष्मीनारायण—"बनवारी मेरे संघका एक सदस्य है। अतएव उसकी भलाई करनेका, वहैसियत सेक्रेटरीके, मुझे पूरा अधिकार है। आप किस अधिकारपर इस विषयमें आपत्ति करते हैं।"

दारोगा—"चूंकि, मैं आपके संघको संघ नहीं मानता।"

लक्ष्मीनारायण—"आप फिर विवादके रास्तेपर आ रहे हैं। खैर, सेक्रेटरीकी हैसियतसे आप इसको भलेही महत्त्व न दें। पर व्यक्तिगत रूपसे तो आप, अवश्य ही इस सूचनाको मानेंगे।"

दारोगा—"अवश्य, अवश्य।"

लक्ष्मीनारायण—"तो क्या मैं जान सकता हूं कि आप इस सम्बन्धमें क्या करना चाहते हैं।

दारोगा—आप इस मामलेमें चाहते हैं क्या ?"

लक्ष्मीनारायण—"कानूनी कार्रवाई।"

दारोगा—"क्या आप मुदई बनेंगे ?"

लक्ष्मीनारायण—"अवश्य।"

दारोगा—"इस मामलेको हाथमें लेनेपर सबसे पहले रामकिशोर प्रसादके मकानकी तलाशी लेनी पड़ेगी। पर उनके जैसे प्रतिष्ठित व्यक्तिके प्रति इस प्रकार अपमानपूर्ण कार्रवाई करनेके पहले, मैं इस सम्बन्धमें जांच कर लेना आवश्यक समझता हूं। केवल आपकी बातपर विश्वासकर, मैं उनके मकानकी तलाशी नहीं ले सकता हूं। अनुसन्धान करनेपर मैं जैसा उचित समझूंगा, करूँगा, इस समय निश्चित रूपसे, मैं आपको इस सम्बन्धमें कुछ कहनेमें असमर्थ हूं।"

लक्ष्मीनारायण—"यदि मैं अपनी बातको सत्यताको जवाबदेही अपने ऊपर लूं, तो आपको कार्रवाई करनेमें क्या आपत्ति है?"

दारोगा—"पर मैं तो आप जैसे आदमीकी जवाबदेहीको कोई महत्त्व नहीं दे सकता हूं।"

दारोगा साहबकी इन बातोंको सुनकर लक्ष्मीनारायण अपने साथीके साथ उल्टे पैर वहांसे लौट आये और मजिष्ट्रेटके पास इस विषयका एक दूसरा तार भी भेज दिया।

इधर दारोगा साहब भी इस सम्बन्धमें नाना प्रकारके तर्क वितर्क करते रहे। यह तो एक प्रकारसे निश्चयही था कि रामकिशोर प्रसादके विरुद्ध वे कोई कार्रवाई नहीं करेंगे। पर वे यह भी जानते थे कि लक्ष्मीनारायण अपनी धुनके बड़ेही पक्के आदमी हैं। वे अन्ततक जान नहीं छोड़ेंगे, अतएव रामकिशोर प्रसादको इस मामलेसे बेदाग बचानेके लिये वे तरह तरहके उपाय सोचने लगे।

लगभग तीन घंटेके बाद मजिष्ट्रेटका भेजा हुआ, उनके पास एक तार आया, जिसमें बनवारीके मामलेकी उचित छानबीन करनेकी सख्त ताक़ीद की गयी थी। तार पाकर दारोगा साहब कुछ घबड़ाये और लक्ष्मीनारायणकी शरारतपर उन्हें क्रोध भी हुआ। अन्तमें थोड़ी देर सोचने विचारनेके बाद उन्होंने अपना कार्य-क्रम निश्चित कर लिया। उसी समय एक आदमीके द्वारा उन्होंने रामकिशोर प्रसादके पास तारकी खबर भेज दी और कहला भेजा कि मजिष्ट्रेटके आज्ञानुसार वे बाकायदा तलाशी लेनेके लिये आ रहे हैं। अतएव शीघ्रही बनवारी आदि छोड़ दिये जायं।

दारोगासाहबके यहांसे यह समाचार पाकर रामकिशोर-प्रसादने उसी समय उन लोगोंको छोड़ दिया। बनवारी इस समय तक काफी सजा पा चुका था। अतएव उसको छोड़नेका उन्हें कुछ भी दुख न हुआ। पर चमेलीको उन्होंने जिस आशासे बन्द किया था, उनकी वह आशा पूरी न हो सकी। दारोगासाहबने बीचमें ही आशाके क्षेत्रमें निराशाका बीज वपन कर दिया। अतएव उन लोगोंको छोड़ते समय रामकिशोर बाबूको इसी बातका अधिक दुःख हुआ।

पांचवां अध्याय

दोपहरका समय है। सूर्यके प्रचण्ड तापके कारण कोई व्यक्ति भी घरसे बाहर निकलना नहीं चाहता। कचहरीके बाबू आफिसोंसे लौटकर अपने अपने घरमें विश्राम कर रहे हैं। कानपुरके साप्ताहिक पत्र 'निर्भय' के आफिसके समीप कई सरकारी आफिसें भी हैं। पर उनमें पहरेदारके सिवा और कोई भी व्यक्ति नज़र नहीं आता। केवल 'निर्भय' के सम्पादक पं० दीनानाथजी अपने आफिसमें बैठकर पत्रके लिये मैटर लिख रहे हैं। उनके लिये गर्मी अथवा सर्दी कोई अधिक महत्व नहीं रखती। उन्हें तो 'निर्भय'को उसके नामके अनुरूप संसारके सामने रखनेकी चिन्ता बनी रहती है। उनका यही एक उद्देश्य है और इसीकी पूर्त्तिमें वे रात दिन लगे रहते हैं। यदि वे सोते हैं, तो इसी भावनाको लेकर और जगते हैं तो इसी भावनासे सराबोर होकर। इस लक्ष्यकी पूर्त्तिमें यदि वे सफल हुए, तो सूर्यकी प्रचण्डसे प्रचण्ड गर्मी भी उन्हें नहीं सता सकती अन्यथा ठंढीसे ठंढी हवा भी उनके लिये कोई चीज नहीं है। उससे वे अपनेको किसी प्रकार लाभान्वित नहीं कर सकते हैं।

अपने पत्रको सफल बनानेकी इसी धुनमें आज भी दोपहरकी कड़ी गर्मीकी कोई परवाह न कर, अथक रूपसे वे परिश्रम कर रहे हैं। इसी समय दरवानने आकर उनके हाथमें एक कार्ड दिया।

कार्डपर लिखा हुआ था "लक्ष्मीनारायण; सेक्रेटरी मजदूरसंघ, रामपुर।" कार्डको पढ़कर उन्होंने दरवानसे कार्ड देने वाले व्यक्तिको भीतर ले आनेके लिये कहा। उनकी आज्ञासे दरवान शीघ्रही उन्हें उस कमरेमें ले आया। पं० दीनानाथने बगलकी कुर्सीपर उन्हें बिठलाते हुए, उनसे आनेका कारण पूछा। उनके प्रश्नका उत्तर देनेके पहले उन्होंने उनके हाथमें एक पत्र दिया, जो उनके मित्र जयदयाल प्रसादका लिखा हुआ था। पत्रको पढ़कर पं० दीनानाथने बड़ी नम्रतासे कहा—"इस पत्रको पढ़कर मैं बड़ा प्रसन्न हुआ। जयदयाल प्रसाद मेरे बचपनके साथी हैं पर आपने इसको लानेका कष्ट क्यों किया? मैं तो आप लोगोंका सेवक मात्र हूं। यदि आप पत्र न लाते, तब भी मैं आपकी उसी प्रकार सेवा करनेके लिये तैयार होता, जिस प्रकार अभी हूं।"

लक्ष्मीनारायण—"यह आपकी महानता है। मैं आपसे मिलकर धन्य हो गया।"

पं० दीनानाथ—"खैर, अब यह बतलाइये कि मैं किस प्रकार आपकी सेवा कर सकता हूं?"

लक्ष्मीनारायण—"मैं अपने ग्रामके कार्योंमें आपसे कुछ सहायता लेना चाहता हूं।"

पं० दीनानाथ—"किस प्रकारकी सहायता?"

लक्ष्मीनारायण—"हमलोगोंने वहां एक मजदूरसंघ स्थापित किया है। पर वहांके दारोगा साहब तथा जमीन्दार बाबू रामकिशोर प्रसाद उसे कुचल देना चाहते हैं। पहले भी वे हमलोगोंपर

बड़ा अन्याय करते थे। पर इस आन्दोलनसे चिढ़कर तो वे और भी अत्याचार करने लगे हैं। वे लोग शायद गरीबको मनुष्यही नहीं समझते। उनके अत्याचारसे हमलोग बहुत कष्ट पारहे हैं।"

पं० दीनानाथ—"मजदूर-संघकी स्थापनाका समाचार सुनकर मैं बहुत प्रसन्न हुआ। आपलोग निर्भयता पूर्वक ईश्वरका नाम लेते हुए, मैदानमें डटे रहें। अत्याचार तो अवश्य होगा। आप लोगोंको अपार कष्टोंका सामना करना पड़ेगा। पर अन्तमें आप विजयी होंगे। क्योंकि आजतक सत्य तथा न्यायकी विजय होती आयी है। कष्टके बिना कोई शुभ कार्य नहीं हो सकता है। तपस्वियोंकी तपस्यामें भी सदासे दुष्ट लोग विघ्न डालते आये हैं। अतएव आपको भी विघ्न-बाधाओंका सामना करना ही पड़ेगा। यदि आप धैर्यपूर्वक उनका सामना करते रहेंगे, तो अन्तमें आपको अवश्य ही गौरवान्वित होनेका अवसर मिलेगा। मैं समझता हूं कि इस सम्बन्धमें आप 'निर्भय' के द्वारा मेरी सहायता चाहते हैं।"

लक्ष्मीनारायण—"जी हां, इसीके द्वारा मैं इस ओर अधिकारियोंका ध्यान आकर्षित करना चाहता हूं।"

पं० दीनानाथ—"आपका यह विचार गलत है। अधिकारियोंसे आप 'निर्भय' के द्वारा कुछ लाभ नहीं उठा सकते हैं। हां, जनतामें आपके विचारोंका प्रचार अवश्य हो सकता है।"

लक्ष्मीनारायण—"क्या अधिकारी समाचारपत्रोंकी ओर ध्यान नहीं देते हैं?"

पं० दीनानाथ—"ध्यान क्यों नहीं देते ? पर वे उसके अनुसार काम करना नहीं चाहते हैं। यदि हमलोग पूरबका रास्ता बतलावेंगे, तो सीधे पश्चिमकी ओर जानेमें वे अपनी भलाई समझेंगे। कुछ जीहुजूरी अखबारोंकी सम्मतिका वे थोड़ा बहुत ख्याल अवश्य ही करते हैं और कुत्तेकी तरह उन्हें अपने पीछे लगाये रखनेके विचारसे, कभी कभी उनकी एक आध बात मान भी लिया करते हैं। पर 'निर्भय' जैसा पत्र तो उनकी आंखोंका कांटा है, हृदयका शूल है।"

लक्ष्मीनारायण—"पर जनतामें तो हमारे विचारोंका प्रचार हो जायगा, देशके निवासी तो हमारे कष्टोंको पढ़कर दो-चार गर्म आंसू बहा सकेंगे।"

पं० दीनानाथ—"मैं बड़ी प्रसन्नताके साथ आपके द्वारा भेजे गये समाचारोंको अपने पत्रमें प्रकाशित कर दिया करूंगा।"

लक्ष्मीनारायण—"पर मैं इससे अधिककी आशा रखता था।"

पं० दीनानाथ—"साफ साफ, कहिये, आपका मतलब क्या है ?"

लक्ष्मीनारायण—"मैं चाहता था कि आप किसी सम्पादकीय लेखमें दारोगासाहब तथा रामकिशोर प्रसादके अत्याचारोंके विषयमें कुछ लिखें।"

पं० दीनानाथ—"पर इसके लिये आपको विस्तारपूर्वक सभी बातें बतलानी पड़ेंगी।"

पं० दीनानाथकी इन बातोंको सुनकर लक्ष्मीनारायणने आर-

म्भसे अन्ततककी सभी बातें कह सुनायीं। उनकी सारी कहानी सुनकर पं० दीनानाथ बोले—"आवश्यकता पड़नेपर क्या आप प्रमाणोंके द्वारा अपनी बातोंको प्रमाणितकर सकते हैं ?"

लक्ष्मीनारायणने गम्भीरतापूर्वक उत्तर दिया—"मेरे पास कोई कागजी सबूत तो नहीं है। फिर भी जरूरत पड़नेपर हम यथेष्ट संख्यामें गवाहोंको उपस्थितकर सकते हैं।"

पं० दीनानाथ—"क्या वेलोग दारोगा तथा अपने जमीन्दार-के विरुद्ध गवाही देना पसन्द करेंगे ?"

लक्ष्मीनारायण—"हमारा तो ऐसा ही विश्वास है।"

पं० दीनानाथ—"आप किसपर अभियोग लगाना चाहते हैं ? दारोगापर या जमीन्दारपर ?"

लक्ष्मीनारायण—"अत्याचारी तो दोनों ही हैं। पर इस मामलेमें तो मेरे विचारसे अधिक दोष रामकिशोर प्रसादका ही है।"

पं० दीनानाथ—"किस प्रकार ?"

लक्ष्मीनारायण—"दारोगा तो एक वेतनभोगी व्यक्ति है। किसी भी उपायसे अधिकसे अधिक पैसा पैदा करना ही उसका लक्ष्य है। एक सरकारी नौकर होनेके अतिरिक्त उससे हमारा और कोई विशेष सम्बन्ध नहीं है। पर रामकिशोर प्रसाद हमारे ग्रामके जमीन्दार तथा निवासी होकर भी इस प्रकार अत्याचार करते हैं, यह बड़े ही आश्चर्यकी बात है। इसके साथ ही बनवारी पर अत्याचार करना तथा उसकी कन्या चमेलीको बन्दकर, उसके

सामने अनुचित प्रस्ताव पेश करनेका अपराध तो उन्होंने ही किया है। पर मजिस्ट्रेटका तार पहुंचनेके पहले दारोगाने अपनी इच्छासे इस सम्बन्धमें कोई कार्रवाई न की तथा तार पहुंचनेपर भी उसने रामकिशोर बाबूको गुप्त रूपसे तालाशी की खबर पहले ही भेज दी थी, यह दारोगाकी एक बड़ी ज्यादती है।"

पं० दीनानाथ—"संक्षेपतः, आप जमीन्दारके अपराधको प्रधान तथा दारोगाके अपराधको गौण समझते हैं।"

लक्ष्मीनारायण—"बातोंका चुनाव तो आप स्वयं कर लेंगे। इस सम्बन्धमें मैं आपकी किसी प्रकारकी सहायता नहीं कर सकता; सम्भव है इस सम्बन्धमें मेरा ख्याल गलत हो।"

पं० दीनानाथ—"पत्रमें किसी बातके प्रकाशित होनेपर, उस की सारी जिम्मेदारी सम्पादकपर रहती है और विशेषकर ऐसी बातोंके लिये तो वह और भी जिम्मेदार समझा जाता है। अतएव सत्यताका पूरा प्रमाण मिलनेपर ही कोई इस प्रकारकी बात लिख सकता है। पर आपकी बातोंपर मेरा पूर्ण विश्वास हो गया है। मैं उसे सत्य समझ रहा हूं। अतएव हम सम्पादकीय स्तम्भमें इस विषयकी चर्चा करेंगे। लक्षणोंसे विदित होता है कि मामले-मुकदमेके उपस्थित होनेपर, इस सम्बन्धमें आपसे मुझे विशेष सहायता नहीं मिल सकती है। पर इस कारण मैं किसी प्रकार निरुत्साह नहीं हो रहा हूं। मेरा कर्तव्य मुझे इस प्रश्नको अपने हाथमें लेनेके लिये प्रेरित करता है। अतएव किसी विघ्न-

बाधासे न डरकर मैं अवश्य ही आपलोगोंके पक्षमें जोरदार आन्दोलन करूंगा। आपने एक महान कार्य आरम्भ किया है। इसी प्रकारके आन्दोलनोंके ऊपर देशका उज्वल भविष्य निर्भर करता है। इस परीक्षाके समयमें भारतमाता अपने प्रत्येक पुत्रसे कर्तव्य पालनकी आशा रखती है। आपलोग देशके प्रति अपने कर्तव्यका वीरतापूर्वक पालन कर रहे हैं। अतएव आपकी सहायता करना हमलोगोंका धर्म है। ईश्वर आपको विजयी करे।

लक्ष्मीनारायण—"इस समय मैं कुछ अधिक नहीं कह सकता, पर आवश्यकता पड़नेपर अपनी शक्ति भर आपकी सेवा करनेसे हमलोग बाज नहीं आवेंगे। आपके एक एक शब्दके ऊपर अपनी जान हथेलीपर रखना हमलोग अपना प्रधान कर्तव्य समझेंगे। आप जैसे महान आत्माके द्वारा ही किसी व्यक्ति अथवा देशका कल्याण हो सकता है। अतएव आपके द्वारा हमलोगोंका कल्याण होगा, हम सुखी होंगे, इसमें कोई सन्देह नहीं है।"

पं०दीनानाथ—"अच्छा, अपनी बातोंका एक संक्षिप्त विवरण आप मुझे लिखकर दें। जिससे इस विषयपर लिखते समय मुझे सहायता मिल सके।"

पं० दीनानाथजीकी यह आज्ञा पाकर लक्ष्मीनारायणने वहीं पर लिखना आरम्भ किया और लगभग आध घंटेमें सभी बातें लिखकर उनसे पूछा—"क्या मुझे हस्ताक्षर भी करना पड़ेगा?"

इस प्रश्नको सुनकर पं० दीनानाथजी मुस्कुराते हुए बोले

—"हस्ताक्षर करनेपर आप भी इन बातोंके उत्तरदायी हो सकते हैं। पर मैं आपको बलिदानका बकरा बनाना नहीं चाहता। अतएव आपके हस्ताक्षर करनेकी आवश्यकता नहीं है।"

इतना कहकर उन्होंने लक्ष्मीनारायणके हाथसे उस कागजको लेकर अपनी फाइलमें रख लिया। कागज रखते हुए वे बोले—"कोई और दूसरा कार्य तो नहीं है?"

लक्ष्मीनारायण—"जी, नहीं। मैं केवल इसी कार्यके लिये यहाँ आया था।"

पं० दीनानाथ—"आपने बड़ी कृपा की।"

लक्ष्मीनारायण—"आप जैसे महापुरुषका दर्शनकर मेरा जन्म सार्थक हो गया।"

पं० दीनानाथ—"महान तो केवल ईश्वर है। हम लोग तो केवल उसके एक तुच्छ जीव मात्र हैं।"

लक्ष्मीनारायण—"आप जैसे विद्वान हैं, वैसे ही नम्र भी हैं। अच्छा, अब आज्ञा हो।" इस प्रकार उनसे आज्ञा लेकर वे वहांसे विदा हो गये।

छठवाँ अध्याय
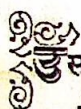
उस दिन मजिष्ट्रेटका तार पाकर दारोगासाहब बाध्य होकर, संध्या समय रामकिशोर प्रसादके मकानकी तालाशी लेनेके लिये गये थे। पर तालाशीका काम केवल रसमकी तरह किया गया था। उसमें न कोई वास्तविकता थी और न सचाई। दारोगासाहबके यहांसे खबर पाकर रामकिशोर प्रसादने पहले ही आसामियोंको छोड़ दिया था। अतएव ढोलमें पोलकी तरह वहाँ कुछ भी न मिला। और दारोगाने मजिष्ट्रेटके पास मामलेके झूठा होनेकी खबर भेज दी। तालाशीका काम बड़ा ही उत्तर-दायित्वपूर्ण होता है। साधारण अवस्थामें समुचित प्रमाण रहने पर ही तालाशी ली जाती है। अतएव रामकिशोर प्रसाद यदि चाहते तो दारोगासाहबकी रिपोर्टके आधारपर लक्ष्मीनारायण आदि-पर मानहानिका दावा कर सकते थे। पर दारोगा साहबकी रायके अनुसार उन्होंने ऐसा करनेका साहस नहीं किया। दारोगा-साहबने उन्हें समझाया कि मामलेको आगे बढ़ानेसे कई प्रकारका खतरा है। क्योंकि मजिष्ट्रेटके सामने बहुतसे आदमी उनकी रिपोर्टके विरुद्ध गवाही देनेके लिये तैयार किये जा सकते थे। ऐसी अवस्थामें सम्भव था कि उनकी रिपोर्ट झूठी प्रमाणित हो जाती। इन्हीं बातोंको सोच कर, यह मामला चुपचाप दबा दिया गया। चुप्पी साध लेनेमें उन लोगोंको कोई हानि भी न थी। क्योंकि

ज्यादती तो इन लोगोंने ही की थी और विरोधी पक्ष इस ज्यादती-का कोई समुचित उत्तर न दे सका था। अतएव वे लोग चुपचाप बैठ गये।

पर लक्ष्मीनारायण आदि इस सम्बन्धमें चुप न थे। वे बड़ी तत्परतासे इनलोगोंके अन्यायको दूर करनेके प्रयत्नमें लगे हुए थे। और इसी कारण दारोगासाहब प्रतिदिन रामकिशोर बाबूके यहां आकर उन लोगोंकी प्रत्येक बातकी छानबीन किया करते हैं।

अन्य दिनोंकी तरह आज भी वे संध्या समय उनसे मिलनेके लिये आये। दारोगासाहबके आते ही, कोई दूसरी बात छेड़नेके पहले, रामकिशोर प्रसाद उनके हाथमें 'निर्भय' की एक प्रति देते हुए बोले—"इस पत्रने हमलोगोंकी बड़ी कड़ी आलोचना की है। बनवारीके प्रश्नको लेकर इसने हमलोगोंको खूब जली कटी सुनाई है। इसके सम्पादकने इस प्रश्नको इतना अधिक महत्व दिया है कि इस अंकमें इसी विषयपर उन्होंने एक अग्रलेख लिख डाला है। अब इसे पढ़कर आप बतलायें कि इसका किस प्रकार प्रतिवाद किया जाय!"

दारोगासाहब नाक भौं सिकोड़ते हुए बोले—"क्या उन-लोगोंका हौसला यहां तक बढ़ गया है कि वे अब खुल्लम-खुल्ला इस बातकी चर्चा अखबारोंमें भी कराने लगे। अच्छा, देखा जायगा। देखूंगा मैं, ये लोग कहां तक आगे बढ़ते हैं।"

रामकिशोर प्रसाद—"पर मुझे आश्चर्य है कि उन लोगोंको

सभी बातोंका पूरा पूरा पता किस प्रकार लग गया ? अखबार पढ़नेसे मालूम पड़ता है, जैसे उसका कोई दूत इन बातोंको अपनी आँखोंसे देखता हो।"

दारोगासाहब—"बाबूसाहब ! आप भी एकदम भोले-भाले आदमी हैं। अखबारवालोंको भला इन बातोंका पता किस प्रकार लग सकता है ? यह सब इन लोगोंकी शैतानी हैं। इन्हीं लोगोंने कानपुर जाकर यह काम कराया है।"

रामकिशोर प्रसाद—"क्या ऐसी बात है ?"

दारोगासाहब—"और नहीं तो क्या ?"

रामकिशोर प्रसाद—"अच्छा, और बातें पीछे होंगी। जरा पहले आप इस लेखको तो पढ़ लीजिये।"

दारोगासाहब—"इस समय मैं अपना चश्मा छोड़ आया हूँ। अतएव कृपया आप ही इसे पढ़ सुनाइये।"

अन्तमें मजबूर होकर बाबू साहब उस लेखको पढ़नेके लिये तैयार हुए और नौकरसे रोशनी मंगाकर उसे पढ़ने लगे। वह इस प्रकार था :—

'बृटिश-राज्य या मजदूर-राज्य" ?

बृटिश जाति अपनेको एक सभ्य तथा सुशिक्षित जाति समझती है। उसका शायद यह भी दावा है कि उसका प्रत्येक कार्य न्यायपूर्ण तथा तर्कसंगत होता है और भारतवर्षके ऊपर अपने प्रभुत्वका आधार भी वे लोग न्याय तथा तर्क ही बतलाते हैं। पर उनका यह दावा कितना भ्रमपूर्ण तथा अतर्कसंगत है, इस

बातको संसारका प्रायः प्रत्येक व्यक्ति जानता है। हम भी कई स्थलोंपर विशद रूपसे इस प्रश्नपर प्रकाश डाल चुके हैं। आज हमें एक ऐसे अत्याचारपूर्ण काण्डका समाचार मिला है, जो किसी भी गवर्नमेण्टके लिये लज्जा और कलंककी बात है। यद्यपि प्रस्तुत घटनाके सूत्रधार तथा अभिनेता, हमारे समाजकेही कलंक-स्वरूप हैं। भारतकी मिट्टीसे ही वे बने हैं, भारतके सूर्यसे उन्हें प्रकाश मिला है तथा भारतकी हवा और भारतका अन्न उनके उपयोगमें आया है। पर उनके कार्योंको देखकर, यह कौन नहीं कह सकता है कि ये लोग अपने विवेक तथा शक्तिका दुरुपयोग कर रहे हैं। अहमन्यताकी वेदी पर सभ्यता तथा मनुष्यताकी बलि दे रहे हैं; फिर भी इस प्रश्नको लेकर हम गवर्नमेण्टको इस लिये दोषी बतला रहे हैं कि उसकी ओरसे ऐसे रोमांचकारी अत्याचारकी अबतक कोई जाँच पड़ताल नहीं की गयी है। इस प्रकारके मामलोंसे उदासीन होकर, सरकार अवश्यही एक भयंकर अपराध करती है और यह निर्विवाद रूपसे कहा जा सकता है कि वह उन लोगोंके अधिकारों तथा सत्वोंको पैरोंसे ठुकरा रही है, जिनका रक्षाका उत्तरदायी वह अपनेको गर्वके साथ बतलाती है। संक्षेपतः मामला इस प्रकार है।

रामपुर नामक ग्रामके, कुछ उत्साही लोगोंने एक मजदूर संघकी स्थापना की है। अधिकतर साधारण श्रेणीके ही व्यक्ति उसमें भाग लिया करते हैं। संघका एक मात्र उद्देश्य यही है कि श्रमजीवियोंको संगठित कर, उनमें परस्पर सहयोग तथा प्रेमकी

वृद्धि की जाय। यह एक ऐसा उद्देश्य है, जिसकी उपयोगिता प्रत्येक व्यक्तिको सच्चे हृदयसे माननी पड़ेगी। पर उन लोगों-का यह संगठन उस ग्रामके जमीन्दार रामकिशोर प्रसाद तथा दारोगाबाबू बलबीर सिंहको अच्छा नहीं लगा। संघके अस्तित्वसे उन लोगोंको अपने अत्याचारपूर्ण कार्योंमें बाधा पड़नेकी सम्भावना मालूम पड़ने लगी और उनके विरोधका सम्भवतः यही सबसे बड़ा कारण है। एक दिन एक बातको लेकर अचानक दारोगा-साहब तथा मजदूर संघके कुछ सदस्योंमें मुठभेड़ भी हो गयी। बात यह थी कि बनवारी नामक एक मजदूरने दिनभर दारोगा साहबका काम किया। पर संध्या समय वे केवल आधी मजदूरी देकर उससे अपना पिण्ड छुड़ाना चाहते थे। परन्तु उसने आधी मजदूरी लेना सर्वथा अस्वीकार कर दिया। अन्तमें मजदूर संघके सदस्योंसे बाध्य किये जानेपर, उन्होंने बनवारीको पूरी मजदूरी दी। पर इसका उनके कलेजेपर गहरा घाव लगा और उस समयसे वे उक्त संघके लोगोंसे और भी जलने लगे। पूरी मजदूरी देनेके कार्यको उन्होंने अपना अपमान समझा और इस अपमानका प्रतिशोध लेनेके लिये, उन्होंने अपने मित्र तथा सहायक रामकिशोर प्रसादसे इस सम्बन्धमें सहायता चाही। रामकिशोर प्रसाद वहांके एक बहुत बड़े जमीन्दार हैं और बनवारी उन्हींकी जमीन्दारीमें रहता है। उसके यहां उनका कुछ लगान बाकी था और इसी बहाने उन्होंने उसपर अत्याचार करना आरम्भ किया।

दूसरे दिन रातके समय अस्वस्थ्य अवस्थामें ही उन्होंने बनवारीको अपने यहां पकड़वा मंगवाया। रास्तेमें उसे उनके प्यादोंने इतना मारा कि वह उनके यहां पहुंचनेके थोड़ी ही देर बाद बेहोश हो गया। होशमें लाये जानेपर, वह एक सुनसान कोठरीमें बन्द कर दिया गया। दूसरे दिन भोरको उसकी स्त्री तथा युवती कन्या, उसे छुड़ानेके लिये आईं। पर हृदयहीन रामकिशोर प्रसादने उन्हें भी कैद कर लिया। इसके साथ ही उस दिन बनवारीको दिनभर धूपमें बिठलाया गया। वह बेचारा प्याससे तड़पता रहा। पर किसीने उसे एक बूंद जल देनेकी कृपा न की।

इस घटनाकी खबर पाकर मजदूर संघके सेक्रेटरीने इस विषयका एक तार मजिष्ट्रेटके पास भेजा तथा थानेमें भी इसकी डायरी करानी चाही। पर दारोगाने इस बातपर कोई ध्यान नहीं दिया और उत्तरमें मजदूर संघकी दिल्लगी उड़ाते हुए वे बोले—"अङ्गरेजी राज्यमें तो ऐसा अन्धेर कभी नहीं होता था। पर क्या मजदूर संघका राज्य आरम्भ होते ही अमीर, गरीबको कैद करने लगे! यदि यह बात सत्य है, तो इसके सबसे बड़े अपराधी आपलोग ही हैं। भला, मजदूर संघके रहते ही आप लोग पुलिससे क्यों सहायता चाहते हैं?"

अन्तमें मामलेकी जांच करनेके लिये मजिष्ट्रेटका तार पाकर, वे इस मामलेमें हाथ डालनेके लिये वाध्य हुए। पर जांच आरम्भ करनेके पहले ही उन्होंने रामकिशोर प्रसादके पास इस

बातकी खबर भेज दी। खबर पाकर उन्होंने बनवारी तथा उसके परिवारको दारोगासाहबके जानेके पहले ही छोड़ दिया। अतएव आसामीको यहां न पाकर दारोगाने मजिस्ट्रेटके पास मामलेके झूठा होनेकी खबर भेज दी।"

उपरोक्त घटना यदि सत्य है, तो अवश्य ही हृदयको कँपा देनेवाली है। इसकी जितनी निन्दा की जाय वह थोड़ी है। रामकिशोर प्रसादने किस बलपर ऐसा अमानुषिक कार्य करनेका साहस किया, यह बतलानेमें हम असमर्थ हैं। एक निरपराध परिवारको इस प्रकार कष्ट देना तथा प्यास लगनेपर पानी आदि भी न देना, कैसा भयङ्कर अत्याचार है, यह प्रत्येक व्यक्ति सोच सकता है। संभवतः अपने पशुबलपर अधिक विश्वास रखनेके कारण, उन्होंने ऐसा अमानुषिक कार्य करनेका साहस किया हो। पर उन्हें स्मरण रखना चाहिये कि ईश्वरकी कचहरीमें उन्हें पशुबलसे किसी प्रकारकी सहायता न मिल सकेगी। ईश्वरके न्यायमें तो दूधका दूध तथा पानीका पानी होता है। अतएव कम-से कम ईश्वरपर विश्वास रखकर, उन्हें उस शक्तिका दुरुपयोग न करना चाहिये, जिसे ईश्वरने उन्हें प्रदान किया है।

परन्तु सबसे अधिक तरस तो हमें, दारोगासाहबकी विद्या बुद्धिपर आती है। दारोगाका पद एक महत्वपूर्ण पद है। वह जनताका शरीर-रक्षक कहा जा सकता है। और यदि सचाईके साथ अपने कर्त्तव्यका पालन किया जाय, तो उस पद पर रहने वाला व्यक्ति बड़ी सफलताके साथ जनताकी सेवा कर सकता है।

पर आजकल जिस प्रकार इस उत्तरदायित्वपूर्ण पदकी मर्य्यादाकी अवहेलना की जा रही है, यह सचमुच बड़े ही दुखकी बात है। इस कटु सत्यको प्रान्तीय सरकारोंने भी कई वार स्पष्ट रूपसे स्वीकार किया है।

रामपुरके दारोगासाहवके द्वारा मजदूर संघकी दिल्लगीका उड़ाया जाना देखकर, हमें उनके ऊपर बड़ी दया आती है। क्या उस समय उन्हें वास्तवमें अंग्रेजी राज्यके अन्त होनेका सन्देह होने लगा था? यदि नहीं, तो उन्होंने मजदूरसंघके राज्यका स्वप्न किस प्रकार देखा? यदि दारोगासाहब अपने उत्तरदायित्वको कुछ भी समझते, तो इस प्रकारकी अनर्गल बातें करनेका साहस वे कभी न करते। इस समय इस विषयपर हम कुछ अधिक न लिखकर, रामकिशोर प्रसाद तथा दारोगासाहबको चेतावनी दे देना, अपना कर्त्तव्य समझते हैं कि भविष्यमें इस प्रकारका जघन्य कार्य करनेकी वे लोग धृष्टता न करें। इसके साथही हम इस प्रश्नका निपटारा गवर्मेन्टपर छोड़ते हुए आशा करते हैं कि शीघ्र ही इस मामलेकी कोई जांच की जायगी। यदि इस सम्बन्धमें सरकार और भी उदासीनतासे काम लेगी, तो भावी इतिहासकार उसे कर्त्तव्यभ्रष्ट सरकार कहकर सम्बोधित करेंगे, इसका उसे स्मरण रखना चाहिये।"

लेखका पढ़ना समाप्तकर,रामकिशोर प्रसादने हांफते हुए कहा "देखा आपने, शैतानने किस तरह हम लोगोंकी बेइज्जती की है। आपको भी अवश्य ही, इस मामलेमें कोई कानूनी कार्रवाई

करनी पड़ेगी । नहीं तो, आपकी बदनामी फैलनेकी बड़ी आशंका है।"

दारोगासाहब—"हां बाबूसाहब! यह तो मेरे खिलाफ बड़ा ही जबर्दस्त चक्र चलाया गया है। खैर, मैं भी एक बड़ा ही बेपरवाह आदमी हूं। आप लोगोंकी कृपासे भगवान्ने थोड़ी बहुत ज़मीन्दारी मुझे भी दी है। यदि नौकरी चली जायगी, तब भी उससे अवश्य ही किसी न किसी प्रकार गुजारा चल सकता है। पर इसके सम्पादकको जेलकी हवा खिलवाये बिना, मैं कभी दम न लूंगा।"

रामकिशोर प्रसाद—"भला, उसने ऐसा कड़ा लेख लिखनेका साहस किस प्रकार किया? क्या इसके सम्पादकको जेलका डर नहीं है?"

दारोगासाहब—"अजी, बाबूसाहब! आप भी कहाँकी बातें करते हैं? सम्पादक और जेलका डर? ये अभागे तो फांसीसे भी नहीं डरते। सम्पादक बननेके पहले ही, ये एक पैर जेलमें तथा दूसरा फांसीके तख्तोपर रख लेते हैं। ऐसी हालतमें भला ये लोग जेलसे किस प्रकार डर सकते हैं?"

रामकिशोर प्रसाद—"तब तो सचमुच ये लोग बड़े ही बहादुर होते हैं। जेल और फांसीके लिये तैयार रहना कोई आसान काम नहीं है।"

दारोगासाहब—"बहादुर क्या खाक होते हैं? यदि बहादुरी दिखलानी रहती तो पलटनमें भर्ती होकर ये कलमके बदले

बन्दूक क्यों नहीं पकड़ते ? ये लोग होते हैं पूरे जाहिल। आँख मूंदकर किसी बातके पीछे लग जाना ही ये लोग अपना प्रधान कार्य समझते हैं।"

रामकिशोर प्रसाद—"नहीं दारोगासाहब! इनकी बहादुरीका तो आपको अवश्य ही कायल होना पड़ेगा। जब ये लोग जेल तथा फाँसीसे भी नहीं डरते, तो फिर इनसे बढ़कर बहादुर दूसरा कौन हो सकता है ? इसके साथ ही ये पूरी निर्भयतासे साफ साफ बातें कह दिया करते हैं। इसमें ये किसीका भी लिहाज नहीं रखते। सरकार तकको जली कटी सुना देना इनके लिये बांये हाथका खेल है।"

दारोगासाहब—"नंगा खुदासे बड़ा-वाला मसला क्या आपने नहीं सुना है ? यही हालत इन मरदूद सम्पादकोंकी भी होती है।"

रामकिशोर प्रसाद—"आपका कहना बहुत ठीक है। ये लोग पूरे नंगे ही होते हैं। देखिये न, हम लोगोंके ऊपर किस प्रकार भूखे शेरकी तरह टूट पड़े हैं। क्या रुपया पैसा देनेसे ये शान्त नहीं हो सकते हैं ?"

दारोगा साहब—"इस दुनियामें भला, ऐसा कौनसा काम है, जो रुपयेके द्वारा न हो सके ? रुपया देनेपर तो ये लोग बिल्लीकी तरह म्याऊँ म्याऊँ करने लगते हैं।"

रामकिशोर प्रसाद—"फिर कुछ रुपया देकर ही क्यों नहीं 'निर्भय' के सम्पादकको अपने वशमें ले आया जाय। किसी अगले अङ्कमें वह हम लोगोंसे क्षमा मांग लेगा।"

दारोगासाहब—"नहीं, बाबूसाहब ! आप घबराते क्यों हैं ? रुपयेकी बात छेड़नेसे उसका हौसला बढ़ जानेका भय है। मैं उस शैतानको जेल कटाऊँगा, जेल।"

रामकिशोर प्रसाद—"तो क्या आपको पूरा पता है कि 'निर्भय' वालोंको इस घटनाकी खबर लक्ष्मीनारायणने दी है ?"

"जी हां, तीन-चार दिन हुए, वही कमबख्त कानपुर गया था। उसीने वहां जाकर यह सब फसाद मचाया है।"

रामकिशोर प्रसाद—"तब तो हम लोगोंको परेशान करनेमें उसने कोई कोर कसर नहीं उठा रखी है।"

दारोगासाहब—"उसकी बदमाशीमें क्या सन्देह है ? बद-माश जैसा तो उसका चेहरा ही है।"

रामकिशोर प्रसाद—"खैर, मैं भी अब इन लोगोंको पस्त करके ही दम लूंगा। देखें, ये लोग कहां तक बहकते हैं ?"

दारोगासाहब—"इधर मैं भी 'निर्भय' के सम्पादकपर नालिश ठोक देता हूं। विलम्ब करनेसे अफसरोंमें बदनामी फैलनेका डर है। उसने लेखमें मेरी बड़ी दिल्लगी उड़ायी है।"

रामकिशोर प्रसाद—"यही मेरी भी राय है। पर मामलेको इस मजबूतीके साथ चलाना चाहिये, जिसमें पीछे कोई गड़बड़ी न होने पाये।"

दारोगासाहब—"इसकी आप कोई चिन्ता न करें। मैं सब ठीक कर लूंगा। आपको केवल इसी बातका प्रयत्न करना पड़ेगा, जिसमें कोई उन लोगोंके पक्षमें गवाही न देने पावे।"

रामकिशोर प्रसाद---"गवाही देनेकी किसकी मजाल है ? उसे कच्चा ही न चबा डालूंगा, जो आपके विरुद्ध बोलनेके लिये जायगा ? गवाहोंकी आप कोई चिन्ता न करें। अपनी शक्तिभर मैं कोई बात उठा न रखूंगा। भविष्यका मालिक परमात्मा है। उसकी कृपासे सब भला ही होगा।"

इस प्रकार बातें करते करते कुछ रात बीत गयी। अतएव प्रातःकालके समय फिर मिलनेकी प्रतिज्ञाकर दारोगासाहब वहांसे चले गये।

सातवां अध्याय

उपरोक्त घटनाको बीते एक सप्ताह हो गया। पं० दीनानाथ 'निर्भय' के आफिसमें बैठकर कुछ काम कर रहे हैं। इसी समय फौजदारी महकमेका एक चपरासी इनके नामका एक सम्मन ले आया। सम्मन एक फौजदारीके सम्बन्धमें था, जिसे रामपुरके दारोगाने भारतीय दण्ड विधानके ५०० दफाके अनुसार उनपर चलाया था। उनके मामलेकी पेशी प्रथम श्रेणीके डिप्टी मजिस्ट्रेट पं० उमाशंकरके इजलासमें इसी महीनेकी सोलहवीं तारीखको होनेवाली थी। अतएव उस दिन अपने गवाहोंके साथ कचहरीमें उपस्थित होनेके लिये उन्हें सम्मन दिया गया था।

जिस बातकी वे आशा रखते थे, वही हुई। दारोगासाहब तथा रामकिशोर बाबूके विरुद्ध लिखनेके समय ही उन्हें विश्वास हो गया था कि इस मामलेको लेकर उन्हें अवश्य ही कानूनी झमेलेमें फंसना पड़ेगा। अतएव उपरोक्त सम्मनको पाकर उन्हें किसी प्रकारका आश्चर्य न हुआ। मामलेकी प्रतीक्षा पहले हीसे करते रहनेपर भी, सम्मन पढ़कर, वे एक बड़ी चिन्तामें पड़े। इसका कारण यह था कि उनका मामला पं० दीनानाथके सुपुर्द किया गया था। पंडित जी उनके लँगोटिया यार हैं। विद्यार्थी जीवनसे ही इन लोगोंका बड़ा घनिष्ट सम्बन्ध रहा है। इन लोगोंके पारस्परिक प्रेमको देखकर शत्रुओंको भी यह कहनेके लिये

बाध्य होना पड़ता है कि वास्तवमें दो शरीरोंमें एक ही आत्मा निवास करती है। आवश्यकता पड़नेपर ये लोग एक दूसरेके लिये जान लड़ा देनेके लिये भी उद्यत देखे गये हैं। ऐसी अवस्थामें, निष्पक्ष न्यायके द्वारा उनके मित्र अपने पदकी मर्य्यादाको स्थिर रख सकेंगे या नहीं, इसका उन्हें सन्देह होने लगा।

उस दिनसे मामलेकी पेशीमें केवल दश दिन बच रहे थे। अतएव अपने सहकारी सम्पादकपर, पत्रका भार छोड़कर, वे मामलेकी तैयारीमें लग गये। इस सम्बन्धमें उन्होंने सबसे पहले रामपुर जाना उचित समझा। क्योंकि वहींसे गवाह आदि मिलनेकी सम्भावना थी। अतएव दूसरे ही दिन वे रामपुर जा पहुंचे और लक्ष्मीनारायणसे मिलकर, इन्होंने सारा समाचार कह सुनाया। उन लोगोंके कारण ही उन्हें इस झमेलेमें फँसना पड़ा था। अतएव लक्ष्मीनारायण आदिने भी भरपूर सहायता देनेका वचन दिया। लक्ष्मीनारायण वचन देकर चुपचाप बैठ जानेवाले आदमी न थे। अतएव उसी समयसे वे पंडितजीके लिये गवाहोंका प्रबन्ध करने लगे। इस कार्यके लिये उन्होंने दूसरे ही दिन मजदूर संघके सदस्योंकी एक बैठक बुलाई और उसमें सम्मिलित होनेके लिये, उन्होंने एक दिनके लिये पं० दीनानाथको भी रोक रखा।

दूसरे दिन बड़ी धूमधामके साथ मजदूर संघका विशेष अधिवेशन किया गया। लोगोंने पं० दीनानाथसे सभापतिका आसन ग्रहण करनेके लिये बड़ा आग्रह किया। पर वे इस कार्यके लिये किसी प्रकार तैयार न हुए। उन्होंने कहा कि मैं तो सेवक हूं, एक

साधारण सिपाही हूं। अतएव सभापति बननेके बदले, मैं व्यक्तिगत रूपसे ही अधिक कार्य कर सकता हूं। उनकी अस्वीकृतिसे विवश होकर लोगोंने लाला हरिकिशुनको सभापति बनाया। वे उस ग्रामके एक बड़े ही उत्साही व्यक्ति हैं और मजदूर आन्दोलनमें सदा बड़ी दिलचस्पीके साथ भाग लिया करते हैं।

नियमित समयके बहुत पहले ही, लोग यथेष्ट संख्यामें आने लगे और कुछ ही देरमें सभास्थल मनुष्योंसे खचाखच भर गया। निर्धारित समयपर सभापतिके साथ पं० दीनानाथजी भी उपस्थित हुए और सभाकी कार्यवाही आरम्भ हुई। सभापतिने अपने संक्षिप्त भाषणमें लोगोंको संघका उद्देश्य बतलाया। इसके साथ ही उन्होंने दारोगासाहब तथा रामकिशोर प्रसादके अन्यायपूर्ण कार्यों-का विरोध किया। अन्तमें उन्होंने जनतासे 'निर्भय'के सम्पादक पं० दीनानाथजीको वर्तमान मुकदमेमें, दिल खोलकर, सहायता करनेकी प्रार्थना की। सभापतिके भाषणके बाद लक्ष्मीनारायण भी थोड़ी देरतक बोले। उनके बाद पं० दीनानाथ भाषण देनेके लिये बुलाये गये। वे लगभग एक घंटातक बोलते रहे। उन्होंने अपने विस्तृत भाषणके द्वारा जनताको मजदूर संघका उद्देश्य आदि स्पष्ट रूपसे बतलाया। अपने जोरदार भाषणका अन्त करते हुए उन्होंने कहा—"माननीय सभापति महोदय तथा उपस्थित सज्जनो! अपने स्थानपर बैठनेके पहले, मैं आप लोगोंका ध्यान इस प्रश्नके एक आवश्यक पहलूकी ओर आकर्षित करना चाहता हूं। देशमें इस समय मजदूर संघ तथा इस प्रकारकी दूसरी संस्थाओंके प्रति यह

भ्रान्ति फैली हुई है कि इनके द्वारा साधारण श्रेणीके लोग उच्च श्रेणी तथा मध्यम श्रेणीके लोगोंका अस्तित्व ही मिटा देना चाहते हैं। हम नहीं जानते कि किस आधारपर लोग ऐसी भ्रान्ति फैलानेकी चेष्टा करते हैं। पर इसमें कोई सन्देह नहीं कि इस भ्रान्तिके चतुर निर्माता हमारी राष्ट्रीयताके शत्रुगण ही हैं, जिनका स्वार्थ हमारी भलाईके सर्वथा विपरीत है। उस श्रेणीके आदमीके सिवा इस प्रकारकी भ्रान्ति और दूसरा कौन फैला सकता है ? इसके विषम फलका अनुभव हमें प्रत्येक क्षेत्रमें हो रहा है। आपके ग्रामका वर्त्तमान आन्दोलन भी इसीका फलस्वरूप है। यदि ऐसा न होता, तो आपके ग्रामके प्रतिष्ठित जमींदार बाबू रामकिशोर प्रसाद अपनी शक्ति आपके विरुद्ध न लगाकर, उसे आपकी सहायतामें लगाते। ऐसी अवस्थामें हम आज उन्हें तथा उनके साथी अन्य जमींदारोंको यहां निमंत्रित लोगोंकी श्रेणीमें उपस्थित पाते। पर आज इस सभामें एक भी जमींदारको न देखकर, मुझे हार्दिक वेदना हो रही है।

सज्जनो ! जमींदार-रैयत तथा पूँजीपति-मजदूरका सम्बन्ध परस्पर ठीक उसी प्रकारका है, जैसा कि एक मोटर ड्राइवरका अपनी गाड़ीके साथ रहता है। यदि गाड़ीके पुर्जे अच्छी अवस्थामें तथा परस्पर पूर्ण रूपसे संगठित रहें, तो ड्राइवर बड़ी आसानीके साथ उसे चला सकता है। अपने कार्यको करनेमें उसे किसी प्रकारकी बाधा न पड़ेगी। पर पुर्जेके असंगठित रहनेपर उसे पग-पगपर कठिनाइयोंका सामना करना पड़ता है। ठीक यही अवस्था

जमींदारों तथा पूँजीपतियोंकी भी होती है, जब उनकी रैयत तथा मजदूर असंगठित रूपमें रहते हैं। यदि मजदूरोंके संगठित हो जानेसे उन लोगोंको कोई असुविधा है, तो यही कि उन्हें किसी अन्यायपूर्ण कार्यमें सफलता नहीं मिल सकती। पर कोई भी विचारवान व्यक्ति किसी प्रकारका अन्याय करना स्वयं नहीं चाहता है। अतएव जमींदारों तथा पूँजीपतियोंको यदि मजदूर संगठनसे अन्यायपूर्ण कार्य करनेमें वाधा पड़ती है, तो इसके लिये उन्हें इसका विरोध न कर, समर्थन करना चाहिये। क्योंकि किसी व्यक्तिके अन्यायमें वाधा डालना उसे पापके रास्तेसे बचाना है, जो किसी भी अवस्थामें प्रशंसनीय कार्य कहा जा सकता है।

इसके प्रतिकूल आप देखें कि उन लोगोंको मजदूर संगठनसे कितना लाभ हो सकता है ? यदि किसी पूँजीपतिको मजदूरोंके किसी आचरणकी शिकायत करनी हो, तो उसे प्रत्येक मजदूरके लिये पृथक पृथक कार्रवाई नहीं करनी पड़ेगी। वह इस बातकी एक सूचना मजदूर संघके सेक्रेटरीके पास भेज देगा। वस, इसी कार्यवाहीसे उसका सारा काम चल जायगा। सेक्रेटरी स्वयं अपने सदस्योंको उचित मार्गपर ले आवेगा। इससे देखिये, पूँजी-पतिकी कितनी असुविधाओंसे रक्षा हुई। यदि मजदूर सङ्घ नहीं रहता, तो उसे कानूनी कार्रवाई करनी पड़ती, जिसमें व्यर्थ ही समय, शक्ति तथा धनका दुरुपयोग होता और उसकी शिकायत भी कुछ दिनोंके बाद दूर होती। पर मजदूर सङ्घके रहनेपर उसके

द्वारा उसकी शिकायत चन्द घंटों या चन्द दिनोंके भीतर ही दूर की जा सकती है।

इसके साथ ही मजदूर सङ्घसे और भी कई लाभ हैं। अमेरिका, जापान तथा इंगलैंडकी श्रीवृद्धिका कारण वहांका मजदूर संगठन ही है। इसके फलस्वरूप दोनों ही सुखी हैं। पूंजीपतियों-की जेबमें भी काफी पैसे रहते हैं तथा मजदूर भी आरामके साथ अपनी रोटीका प्रबन्ध कर लेते हैं। पर हमारे अभागे देशमें यह बात नहीं है। हम लोगोंने सहनशीलताको सर्वथा भुला दिया है। इसके फलस्वरूप हम दूसरेकी उन्नतिके मार्गको अपने लिये बाधक समझते हैं। जैसे एक रोगी दूसरे रोगीका अच्छा होना देखना नहीं चाहता, उसी प्रकार हम भी एक दूसरेकी श्रीवृद्धि तथा उन्नति नहीं देख सकते हैं। पर यह एक ऐसी संकीर्णता है, जिसका वर्णन नहीं हो सकता।

अतएव हम यहां जमींदारोंसे अपील करना चाहते हैं कि कृपया वे मजदूर संघके प्रति उठे हुए अपने बुरे विचारोंको छोड़ दें। वे प्रकाशमें आवें तथा 'रहो और रहने दो' के सिद्धान्तका महत्व समझते हुए मजदूरोंको अपने उचित अधिकार प्राप्त करनेमें सहायता दें। इसीमें दोनोंका कल्याण है, मंगल है। वैमनस्यसे आजतक किसीको लाभ नहीं हुआ है।

इसके साथ ही हम स्थानीय मजदूरोंसे अपील करना चाहते हैं कि वे भी अपने हृदयमें किसी प्रकारकी प्रतिहिंसाका भाव न आने दें। यदि एक दल गलत रास्तेपर हो, तो इसके आधारपर

दूसरा दल भी जान बूझकर गलत रास्तेका अवलम्बन नहीं कर सकता है। अतएव आप लोग वही काम करें, जो न्याय हो; सभ्यता तथा मनुष्यता जिसे करनेकी आज्ञा देती हो। यदि मेरे मामलेमें गवाही देनेसे वैमनस्य बढ़नेका भय हो, तो हरगिज मुझे किसी गवाहकी आवश्यकता नहीं है। आप मुझे अपने भाग्यपर छोड़ दें। मेरे लिये आप ऐसी स्थिति न उत्पन्न होने दें, जिससे आपके भविष्यके सङ्कटापूर्ण होनेकी सम्भावना हो। आप-लोग सद्भावपूर्वक रहें, इसीमें आपका मंगल है, आपके मंगलसे ही देशका मंगल है, और देशके मंगलको ही हम अपना मंगल समझते हैं।

सज्जनो! मैंने आपका बहुत समय बरबाद किया। इतनी देर बोलनेकी इच्छा भी न थी। पर आपके प्रेमने मुझे इस समय अपना हृदय खोलकर, आपके सामने रखनेके लिये बाध्य किया है। आप लोगोंके उद्योग तथा देशकी अवस्था सुधारनेके प्रशंसनीय प्रयत्नको देखकर, मुझे हार्दिक प्रसन्नता हो रही है। देशकी इस नाजुक परिस्थितिमें आपलोग जो आदर्श उपस्थित कर रहे हैं, वह वास्तवमें देशके उज्ज्वल तथा गौरवपूर्ण भविष्यका लक्षण है। आपने जिस महान कार्यको आरम्भ किया है, उसकी पूर्तिमें ईश्वर अवश्य ही आपकी सहायता करेगा। ऐसे प्रशंसनीय कार्यको आरम्भ करनेके लिये हम आपको हृदयसे बधाई देते हैं। ईश्वर आपको सफल करे।" इतना कहकर वे बैठ गये।

पं० दीनानाथके भाषणका लोगोंके ऊपर बड़ा ही अच्छा

प्रभाव पड़ा। सबने मुक्तकण्ठसे आपके हृदयकी स्वच्छताको प्रशंसा की। उनके भाषणके बाद सभापतिने अपना अन्तिम भाषण दिया और उसके पश्चात सभाकी कार्यवाही समाप्त हुई। सभाके समाप्त होनेपर लक्ष्मीनारायणने खास खास लोगोंकी एक बैठक की, जिसमें 'निर्भय' के मामलेपर विचार किया गया।

गवाहीके साथ साथ कुछ आर्थिक सहायता स्वीकार करनेके लिये वाध्य किये जानेपर पं० दीनानाथजीने कहा कि अभी आपका संघ कलका बच्चा है। अतएव मैं आप लोगोंपर किसी प्रकारका आर्थिक बोझ लादना उचित नहीं समझता हूं। आप-लोग यदि किसी विशेष परिश्रमके बिना कुछ गवाह भेज सकें, तो इसीको मैं यथेष्ट सहायता समझूँगा।

पंडितजीकी इन बातोंको सुनकर लोगोंको आर्थिक सहायताका हठ छोड़नेके लिये वाध्य होना पड़ा। इसके बाद सभी लोगोंके परामर्शसे लक्ष्मीनारायण एक कागजपर गवाहोंके नाम लिखने लगे। थोड़ी देरमें लिखना समाप्त कर उन्होंने वह कागज पं० दीनानाथजीके सुपुर्द किया। उसमें निम्नलिखित व्यक्तियोंके नाम थे :—

१—लक्ष्मीनारायण।

२—बनवारी।

३—रामशरण।

४—चरणदास।

५—बनारसी लाल।

६—रामरूप पाण्डे।

गवाहोंकी नामावली देखकर, पं० दीनानाथने बहुत संतोष प्रकट करते हुए, उन लोगोंको धन्यवाद दिया। सभी लोगोंके साथ नियमित तिथिपर कानपुर पहुंच जानेका भार लक्ष्मीनारायण-ने अपने ऊपर लिया और सन्ध्या समय पंडितजी बड़ी प्रसन्नताके साथ वहांसे विदा हुए।

आठवां अध्याय

मजदूर संघकी बैठक हुए आज एक सप्ताह हो गया। पं० दीनानाथके मामलेकी पेशी होनेमें अब केवल तीन दिन बचे हैं। इस बीचमें बाबू रामकिशोर प्रसादने अपने विरोधी दलके गवाहोंको मिलानेकी भरपूर चेष्टा की और इस प्रयत्नमें वे बहुत अंशोंमें सफल भी हुए। रामरूप पांडे इनके पुरोहितके मौसेरे भाई हैं। अतएव अपने पुरोहित जयराम पाण्डेके द्वारा इन्होंने बहुत जल्द उनको अपने पक्षमें मिला लिया। केवल दो सौ रुपये लेकर वे विश्वासघात करनेके लिये तैयार हो गये। उन्होंने बाबू साहबको कचहरीमें उल्टी बातें कह देनेका वचन दिया।

इसके साथही बनारसी लालको रामकिशोर प्रसादने अपने एक इलाकेका तहसीलदार बना दिया। वह इस पदको पाकर मजदूर संघकी सारी बातें भूल गया। पहले उसकी आत्मा विश्वासघात करनेके लिये तैयार न होती थी। पर अपनी स्त्रीके दबावमें पड़कर, उसे ऐसा करनेके लिये वाध्य होना पड़ा। अन्तमें उसकी आत्माने भी कमजोरीके साथ स्त्रीकी इन बातोंको स्वीकार किया—"भूखों मरते समय मजदूर संघवाले थोड़े ही पूछने आवेंगे ? तहसीलदारी मिलने-पर बालबच्चोंको तो चैनके साथ दो रोटियां मिल सकेंगी। फिर देखा जायगा। इसी तहसीलदारीके लिये तो हमलोग कितने दिनों-से तरसते आ रहे हैं। अतएव इस अवसरको कभी नहीं छोड़ना

चाहिये।" इसी प्रकारकी बातोंके चक्रमें पड़कर उसने तहसीलदारी-की वेदीपर अपने कर्त्तव्यको, अपनी प्रतिष्ठाको बलिदान कर दिया।

बेचारे चरणदास तथा रामशरण गरीब आदमी थे। बाबू-साहबके सौ सौ रुपयेके थैलेके सामने उन लोगोंको भी अपना मस्तक झुकाना पड़ा। गरीबोंके लिये सौ रुपये थोड़े नहीं—बहुत होते हैं। उन लोगोंने स्वप्नमें भी शायद यह न सोचा होगा कि वे कभी सौ रुपयेके स्वामी बन सकेंगे। वे अशिक्षित हैं। कर्त्तव्या-कर्त्तव्यका उन्हें कोई ज्ञान नहीं है। जब रुपयाका थैला पालिंया-मेन्टके मेम्बरोंको भी अपने सिद्धान्तके विरुद्ध मत देनेके लिये वाध्य करता है तथा बड़े बड़े धुरन्धर सम्पादक जब थैलेको पाकर उल्टी गंगा बहानेके लिये प्रस्तुत हो जाते हैं; ऐसी अवस्थामें यदि चरणदास तथा रामशरणने विश्वासघात करना उचित समझा, तो इसमें आश्चर्यकी कौनसी बात है? रुपया! तुम धन्य हो। तुम्हीं अनर्थोंकी जननी तथा इस संसारमें बढ़ते हुए दुरा-चारकी प्रतिमा हो। यहाँ जितने व्यभिचार, दुराचार तथा अनाचार होते हैं, सब तेरी प्रेरणाके फल हैं। धन्य है तेरी माया!

इस प्रकार बनवारी तथा लक्ष्मीनारायणको छोड़कर प्रायः सभी गवाहोंको रामकिशोर प्रसादने किसी-न-किसी रूपसे अपनी ओर मिला लिया। लक्ष्मीनारायणके मिलनेकी तो उन्हें कोई आशा न थी और न उन्होंने इसके लिये कोई प्रयत्न ही किया। उन्होंने समझा कि एक चना भाड़ नहीं फोड़ सकता। अतएव केवल उसकी

गवाहीसे कुछ बन विगड़ नहीं सकता है; यदि कोई दूसरा साथ देनेवाला न हो। पर बनवारीको अपनी ओर मिलानेकी इन्होंने बड़ी चेष्टा की। वह गरीब आदमी था। अर्थाभावके कारण उसे उपवास करना पड़ रहा था। अतएव इन्हें आशा थी कि वह अवश्य ही किसी न किसी लालचमें पड़कर उनकी ओर मिल जायगा। इसी उद्देश्यसे इन्होंने उसे कई प्रकारका प्रलोभन भी दिया। पर वह किसी तरह विश्वासघात करनेके लिये राजी न हुआ। परन्तु अभीतक रामकिशोर प्रसाद उसकी ओरसे सर्वथा निराश न हुए थे। अतएव उसे बुलानेके लिये आज प्रातःकाल ही उन्होंने एक आदमी भेजा।

कुछ ही देरके बाद बनवारी रामकिशोर प्रसादके एकान्त कमरे-में उपस्थित किया गया। उसे देखते ही उन्होंने बड़े प्रेमसे उससे पूछा—"क्या तुम किसी तरह मेरी लाज नहीं रख सकते हो ?"

बनवारी—"सरकार! ऐसा विश्वासघात तो नहीं किया जाता है। मेरे ही लिये वे इस संकटमें पड़े हैं और मैं ही बात पलट दूँ, यह कहांका इन्साफ है ?"

रामकिशोर प्रसाद—"तुम्हें मैं पांच सौ रुपये दूंगा। इतने रुपयोंसे तुम्हारा कायापलट हो सकता है। बोलो—अब तैयार हो ? इसके साथ ही भविष्यमें, मैं तुम्हारे ऊपर बराबर ख्याल रक्खूँगा।"

बनवारी—"आपकी आशा तो हर समय बनी ही रहती है। हम लोगोंका सम्बन्ध आजसे नहीं—सैकड़ों-हजारों वर्षोंसे चला

आता है। हमारे बाप दादा सरकारके बाप दादोंके दिये हुए टुकड़ोंसे पलते थे।"

रामकिशोर प्रसाद—"इसी नाते, तो मैं तुमसे सहायताकी पूरी आशा रखता हूँ।"

बनवारी—"पर इस सम्बन्धमें सरकारकी बात माननेसे मैं असमर्थ हूँ।"

जरा गर्म होते हुए रामकिशोर प्रसाद बोले—"क्या पाँच सौ रुपयेको तुम ठुकरा देना चाहते हो ?"

बनवारी—"सरकार, मेरे लिये तो एक पैसा भी बड़ी चीज है। पाँच सौ तो सात जन्ममें भी नहीं पा सकता हूँ।"

रामकिशोर प्रसाद—"पर मैं तो तुम्हें मुफ्तमें पाँच सौ रुपये दे रहा हूँ। उसे स्वीकार करना या ठुकराना तुम्हारी इच्छापर निर्भर करता है।"

बनवारी—"सरकार, मैंने तो गरीबके घरमें जन्म लिया है। गरीबीमें ही इतनी अवस्था काटी और रात-दिन ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ कि इसी अवस्थामें, वह मुझे आजन्म रहने दे। भला, रुपये लेकर मैं क्या करूँगा ?"

रामकिशोर प्रसाद—"क्या रुपयेसे तुम्हें कोई लाभ नहीं दीखता ?"

बनवारी—"सरकार, बेअदबी माफ हो। रुपयेसे हानिके सिवा, आजतक किसीको लाभ नहीं हुआ है। रुपयेसे अभिमान तथा अभिमानसे सर्वनाश होता है।"

रामकिशोर प्रसाद कुछ क्रोधित होते हुए बोले—"क्या तुम मेरी बात माननेके लिये तैयार न हो ?"

बनवारी—"सरकार, ईश्वरके लिये, इस जन्ममें तो नहीं। हां, इसके अतिरिक्त यदि आपकी कोई दूसरी आज्ञा हो, तो अपनी जान देकर भी मैं अवश्य उसका पालन करूंगा ?"

रामकिशोर प्रसाद बन्दूककी ओर इशारा करते हुए बोले—"देखो, अब अधिक जिद करनेपर तुम्हें इसीका निशाना बनना पड़ेगा।"

बनवारी—"सरकार, मैं तैयार हूं। इस दुनिया में सभी कोई मरनेके लिये ही जन्म लेते हैं।"

रामकिशोर प्रसाद—"पर तुम्हारी तरह कुत्तेकी मौत मरनेके लिये नहीं।"

बनवारी—"क्या सत्यके लिये मरना कुत्तेकी मौत कहलाती है ?"

रामकिशोर प्रसाद—"और नहीं तो क्या ?"

बनवारी—"सरकार, यदि सचाईके रास्तेपर मरना, कुत्तेकी मौत है, तो मुझे यही मौत मुबारक हो। मैं कुत्तेकी इस मौतको छोड़कर, तपस्वीकी मौतको भी पसन्द नहीं करता।"

रामकिशोर प्रसाद—"एक बार फिर सोचो। मैं तुम्हें समय देता हूँ। पागलकी तरह बातें करनेसे कोई लाभ नहीं है।"

बनवारी—"मैं सोच चुका हूं। अधिक क्या सोचूं ? आपकी बात माननेसे मैं सर्वथा असमर्थ हूं।"

रामकिशोर प्रसाद—"तुम्हारी अन्तिम राय क्या है ?"

बनवारी—"इन्साफके रास्तेपर मर मिटना ।"

बन्दूक सम्हालते हुए रामकिशोर प्रसाद बोले—"तो फिर भगवानका स्मरण करो ।"

बनवारी—"मैं तैयार हूं । सत्य, न्याय तथा धर्मकी वेदीपर अपनेको बलिदान करनेके लिये तैयार हूं ।"

इतनेहीमें दारोगासाहब उस कमरेमें आ पहुंचे । उनके वहां पहुंचते ही रामकिशोर बाबूने उनसे सारी बातें कह सुनायीं और इस सम्बन्धमें उनकी राय चाही । उनकी बातें सुनकर दारोगा-साहबने एक लम्बी सांस लेते हुए कहा—"क्या यह किसी प्रकार आपकी बात माननेके लिये तैयार नहीं है ?"

रामकिशोर प्रसाद—"मैं इसे समझाकर थक गया ।"

दारोगासाहब—" क्या पांच सौसे कुछ अधिकका लालच देनेपर भी यह नहीं मानेगा ?"

रामकिशोर प्रसाद—"आदमी रहे, तब तो माने । यह तो है पूरा जानवर । इसकी लम्बी चौड़ी बातें सुनकर मुझे इतना क्रोध हुआ कि यदि आप यहां एक मिनट भी देरकर आते, तो मैं इसे अभी बन्दूकका शिकार बना देता ।"

दारोगासाहब—"इसकी हत्या करनेसे बात बढ़ जानेका भय है । अतएव आवेशमें आकर आप यह अनुचित कार्य कर रहे थे ।"

रामकिशोर प्रसाद—"फिर इसकी कौनसी दवा की जाय ।"

दारोगासाहब—"आप इसे दो-चार दिनके लिये कहीं बन्द कर दे सकते हैं, जिसमें यह मामलेके दिन कचहरीमें हाजिर न हो सके। हमलोगोंका मतलब भी तो केवल इसीसे है।"

रामकिशोर प्रसाद—"पर छुटकारा पानेपर यदि यह कहीं फिर कोई गड़बड़ी मचावे ?"

दारोगासाहब—"इन बातोंकी चिन्ता आप न करें। यह क्या गड़बड़ी कर सकता है ?"

रामकिशोर प्रसादको भी दारोगासाहबकी बात पसन्द आ गयी और दो विश्वासी नौकरोंको बुलाकर, उन्होंने उसे एक गुप्त स्थानमें बन्द कर देनेकी आज्ञा दी। पर लक्ष्मीनारायणको इस बातका सन्देह न होने पावे, इसके लिये उन्होंने चरणदास तथा बनारसीलालके द्वारा यह समाचार ग्राममें फैला दिया कि बनवारी मुकदमेमें गवाही देनेके भयसे अपने किसी रिश्तेदारके यहां जाकर, छिप गया है और मामलेके समाप्त होनेपर फिर लौट आयेगा। उन लोगोंके विश्वासघातका अभीतक किसीको पता न था। अबतक वे लोग मजदूर दलके ही आदमी समझे जाते थे। अतएव उन लोगोंके द्वारा फैलाये गये, इस समाचारपर बहुत लोगोंको विश्वास होने लगा।

——

नवां अध्याय

आज प्रथम श्रेणीके डिप्टी मजिस्ट्रेट पं० उमाशंकरके इजलासमें 'निर्भय' सम्पादक पं० दीनानाथके मामलेकी पेशी है। मामलेकी चर्चा समूचे शहरमें फैली हुई है। अतएव दर्शकोंकी गैलरी आदमियोंसे खचाखच भर गयी है। लक्ष्मीनारायण बहुत प्रयत्न करनेपर भी अपने केवल तीन गवाहोंको लेकर उपस्थित हो सके। बनारसी लालने आनेसे साफ साफ इन्कार कर दिया तथा बनवारी तो दो दिन पहलेसेही लापता था। दो दिनोंसे उसके विषयमें कोई खबर न मिल सकी थी। केवल कुछ लोगोंके मुँहसे वे सुना करते थे कि गवाही देनेके भयसे वह कहीं छिप रहा पर बनवारी ऐसा जघन्य कार्य करेगा, इस बातपर विश्वास करनेके लिये उनकी आत्मा किसी प्रकार तैयार नहीं थी। बनवारी ही प्रधान गवाह था। अतएव उसका आना अत्यन्त आवश्यक था। किन्तु लाचारी थी, वे टूटे हुए हृदयको लेकर चरणदास, रामशरण तथा रामरूप पाण्डेके साथ सीधे कानपुर चले आये।

ठीक ग्यारह बजे डिप्टी मजिस्ट्रेट साहब कचहरी आ पहुंचे और सबसे पहले इस मामलेकीही पेशी हुई। प्रारम्भमें दारोगासाहबके वकीलकी बहस हुई। उन्होंने 'निर्भय'के लेखका कई अंश न्यायाधीशके सामने पढ़ सुनाया, जो उनकी सम्मतिमें सर्वथा

आपत्तिपूर्ण थे। उन्होंने बड़े बड़े शब्दोंमें उस लेखका प्रतिवाद किया तथा उसको प्रत्येक बातको बनावटी तथा अपमानपूर्ण बतलाया। अपनी बहसके अन्तमें उन्होंने न्यायाधीशका ध्यान आकर्षित करते हुए कहा—"अभियुक्तने अनुचित तरीकेसे रामपुरके दारोगा बाबू बलवीर सिंहको जनता तथा सरकारकी दृष्टिसे गिरानेकी चेष्टा की है। उस लेखके द्वारा उनके व्यक्तिगत तथा राजकीय मर्यादाको मिट्टीमें मिलानेकी चेष्टा की गयी है। लेखमें उन्होंने अपनी बातोंकी पुष्टिमें किसी प्रकारका प्रमाण नहीं दिया है। यदि उनके पास कोई दलील अथवा प्रमाण होता, तो अवश्यही उसका समावेश अपने लेखमें करते। बिना किसी प्रमाणके इस प्रकारकी बातें लिखकर, किसीको किसीके प्रति भ्रम तथा द्वेष फैलानेका कोई अधिकार नहीं है। एक सम्पादककी जिम्मेदारी बहुत अधिक होती है और उसके इशारेपरही जनता अपने कर्त्तव्यका निर्णय करती है। पर अपने पदके उत्तरदायित्वका कुछ भी विचार न कर, अभियुक्तने दारोगासाहबको झूठी बातोंके द्वारा संसारके सामने गिरानेकी चेष्टा की है। अतएव भारतीय दण्ड विधानके ५०० धाराके अनुसार वे अधिकसे अधिक दण्डके भागी हैं। उन्होंने जानबूझकर एक प्रतिष्ठित व्यक्तिको अपमानित करनेकी चेष्टा की है। अतएव न्यायका तकाजा है कि उन्हें अधिकसे अधिक दण्ड दिया जाय।"

दारोगासाहबके वकीलकी बहस समाप्त होनेपर पं० दीनानाथके गवाहोंकी गवाहियां ली जाने लगीं। सबसे पहले लक्ष्मी-

नारायणकी गवाही हुई। उन्होंने अपने बयानमें बड़ी योग्यताके साथ 'निर्भय'की बातोंका समर्थन किया। डिप्टी मजिस्ट्रेट साहबके एक प्रश्नके उत्तरमें उन्होंने कहा—"दारोगासाहबको रामकिशोर प्रसादसे बड़ी घनिष्ठता है। उनके इशारे परही उन्होंने बनवारीके परिवारको बन्द कर रखा था। अनुसन्धान करनेके लिये मजिस्ट्रेट साहबका तार पानेपर, तलाशीके लिये जानेके पहले दारोगासाहबने इस बातकी सूचना रामकिशोर प्रसादके पास भेज दी थी।"

लक्ष्मीनारायणके बाद चरणदास गवाही देनेके लिये बुलाया गया। वह रामकिशोर बाबूसे पहलेही मिल गया था। अतएव प्रारम्भसेही वह अपने बयानमें झूठी बातें कहने लगा। अपने पक्षके वकीलके द्वारा दारोगासाहबके विषयमें पूछे जानेपर उसने कहा—"दारोगाजी बड़ेही अच्छे आदमी हैं।"

वकील—"लोग उनसे खुश रहते हैं या नहीं?"

चरणदास—"जी हाँ, सभी कोई उनसे खुश रहते हैं।"

वकील—"क्या उनसे कोई नाराज नहीं रहता?"

चरणदास—"जी हाँ, कुछ लोग उनसे रंज भी रहते हैं।"

वकील—"क्या तुम उनका नाम बतला सकते हो?"

चरणदास—"नाम तो नहीं बतला सकता। पर साधारणतः चोर, बदमाश तथा इस श्रेणीके आदमी उनसे रंज रहा करते हैं।"

(अदालतमें हँसी,)

वकील—"क्या तुम बनवारीको जानते हो?"

चरणदास—"जी हां, वह मेरेही ग्राममें रहता है।"

वकील—"उसके साथ रामकिशोर प्रसादका कैसा सम्बन्ध है ?"

चरणदास—"वह उनकी जमीन्दारीमें बसता है ।"

वकील—"क्या रामकिशोर बाबूका उसके यहाँ किसी प्रकारका रुपया भी बाकी है ?"

चरणदास—"जी हाँ, उसके यहाँ उनका लगान बकाया पड़ा है ।"

वकील—"वह लगान क्यों नहीं चुकाता है ?"

चरणदास कुछ सोचकर बोला—"अच्छा, इसका उत्तर उससे पूछकर दूंगा ।"

(अदालतमें हँसी ।)

वकील—"क्या बनवारीको रामकिशोर बाबूने अपने यहाँ बन्दकर रखा था ?"

चरणदास—"हुजूर ! इसका पता मुझे नहीं है ।"

डिप्टी मजिस्ट्रेट साहबने दाँतसे उंगली काटते हुए पूछा—"रामकिशोर बाबूका दारोगासाहबके साथ कैसा सम्बन्ध रहता है ।"

चरणदासने कुछ रुककर उत्तर दिया—"सरकार, दोनों आदमियोंमें खूब गाढ़ी दोस्ती है ।"

डि० मजिस्ट्रेट—"क्या दारोगा साहबने कभी रामकिशोर बाबूके मकानकी तलाशी ली थी ?"

चरणदास—"जी हाँ ।"

डि० मजिस्ट्रेट—"तलाशी लेनेका कारण क्या था ?"

चरणदास—"यह मुझे नहीं मालूम है।"

डि० मजिस्ट्रेट—"तुम पं० दीनानाथको जानते हो?"

चरणदास—"जी नहीं।"

इसके बाद वकील साहबके द्वारा दो चार प्रश्न और पूछे जानेके बाद उसका बयान समाप्त किया गया। उसके पश्चात रामशरण तथा रामरूप पाण्डेकी गवाही ली गयी। इनलोगोंने भी सरासर झूठी गवाही देकर दारोगासाहबके पक्षको मजबूत कर दिया। इनलोगोंका विश्वासघात देखकर, लक्ष्मीनारायण तो आश्चर्यमें पड़ गये। यदि इस विश्वासघातका उन्हें कुछ भी पता रहता, तो वे इनलोगोंको भूलकर भी गवाही देनेके लिये न लाते। इनलोगोंके पापके कारण अब पं० दीनानाथजी कष्टमें पड़ेंगे, यह सोचकर उनकी आत्मा व्यथित हो उठी। अब उन्हें बनवारीपर भी कुछ कुछ सन्देह होने लगा। जिनलोगोंके लिये यह बात इस सीमा तक बढ़ाई गयी, वे ही लोग अब इस समय विश्वासघात कर रहे हैं, यह देखकर वे सन्नाटेमें आ गये। इस संसारका व्यापार कितना कलुषित तथा पापपूर्ण है, इसकी अवस्था कितनी विचित्र है; कभी कभी यहाँ नेकोका भी कैसा भयंकर प्रतिफल मिलता है, यह देखकर वे आश्चर्यमें पड़ गये। इस प्रकारकी बातोंका शायद उन्हें पहला ही अनुभव था। अतएव यह कलुषित व्यापार देखकर उन्हें संसारके प्रति घृणा होने लगी।

खैर, गवाहोंका बयान समाप्त होनेपर पं० दीनानाथने अपना लिखित बयान दिया। जिसमें उन्होंने अपनेको सर्वथा निर्दोष तथा

'निर्भय'में प्रकाशित सारी बातोंको सत्य और पूर्ण उत्तरदायित्वका विचार करके लिखा हुआ बतलाया।

इसके पश्चात् उनके वकील लाला सीताराम बहस करनेके लिये उठे। वे लगभग दो घंटे तक बोलते रहे। तर्कके द्वारा उन्होंने बड़ी खूबीके साथ 'निर्भय'में प्रकाशित सारी बातोंका समर्थ किया। अपनी बहसके अन्तमें न्यायाधीशका ध्यान आकर्षित करते हुए उन्होंने कहा—"इस मामलेपर विचार करते समय, महाशय! कृपया आप हमारी उन कठिनाइयोंका विचार करेंगे, जिनका सामना करते हुए, हमें अपने पक्षके प्रमाणोंको इकट्ठा करना पड़ा है। हमारे कई गवाहोंके उल्टे बयान ही हमारी कठिनाइयोंके यथेष्ट प्रमाण हैं। हमारे विपक्षी किस प्रकार अपनी प्रभुताके द्वारा, हमारे कई गवाहोंको अपने पक्षमें मिलानेमें समर्थ हुए, यह भी एक विचारणीय प्रश्न है।"

वे इतना बोलही रहे थे कि विपक्षी दलके वकीलने आपत्ति करते हुए कहा—"मुझे अपने विद्वान मित्रके इस तर्कपर खेद है। किस प्रमाणके आधारपर वे गवाहोंपर दोषारोपण कर रहे हैं? कृपया वे अपने शब्दोंको वापस लें।"

डि० मजिष्ट्रेट—"अभियुक्तके विद्वान वकीलको उपरोक्त शब्द वापस लेना चाहिये।"

लाला सीताराम—"माननीय महोदय! उपरोक्त शब्दोंके द्वारा मैं केवल यह बतलाना चाहता था कि हमारे मोव्वकिलको प्रमाणोंके संग्रह करनेकी कोई सुविधा न थी। इस सीधी सादी

बातके सिवा, हम गवाहोंपर किसी प्रकारका दोषारोपण करना नहीं चाहते हैं। खैर, अब मैं अपने विषयपर आता हूं। महोदय! विपक्षी दलके विद्वान् वकीलने इस बातको प्रमाणित करनेकी कोई भी चेष्टा नहीं की है कि पं० दीनानाथका रामपुरके दारोगा साहबके साथ किसी प्रकारकी शत्रुता थी। यदि वे इस बातपर कुछ भी प्रकाश डालते, तो हम समझते कि पं० दीनानाथने शत्रुताके कारण इस तरहकी झूठी बातें लिखी है। पर किसी प्रकारके पुराने वैर भावके नहीं रहनेपर भी पं० दीनानाथ सरीखे जिम्मेवार व्यक्तिने दारोगा साहबके प्रति गलतफ़हमी फैलानेकी चेष्टा क्यों की, यह समझनेमें हम सर्वथा असमर्थ हैं। सांप भी कुचले जानेपर ही किसीको काटता है। पर पं० दीनानाथने बिना किसी कारणके दारोगासाहबके प्रति भ्रम फैलाया, इस बातपर कौन विश्वास कर सकता है? पागलके सिवा कोई भी व्यक्ति, अकारण किसीपर दोषारोपण नहीं करता है। अतएव तर्क तथा न्यायके द्वारा यह बात स्पष्टतया प्रमाणित होती है कि अन्य कारणोंके अभावमें 'निर्भय'में प्रकाशित बातोंकी सत्यताही दारोगा साहबपर दोषारोपण करनेका कारण है। इसके साथही यदि दारोगासाहबके न्यायमें लोगोंको पूर्ण विश्वास रहता, तो लक्ष्मीनारायण आदि मामलेकी जांचके लिये मजिस्ट्रेट साहबके पास तार क्यों भेजते? इस सम्बन्धमें यह कहा जाता है कि तारमें लिखी बातें बनावटी थीं। पर यदि ये बातें बनावटी रहतीं, तो दारोगा साहबके साथही रामकिशोर प्रसाद भी अवश्यही पं० दीनानाथपर मानहानिका दावा

करते। पर वे अपनी कमजोरीको समझकर, खुली अदालतमें अपना रहस्योद्घाटन होनेके भयसे चुप हैं। पर दारोगासाहबने अफ़सरोंके सामने अपनी निर्दोषिता प्रमाणित करनेके लिये ही यह, मुकदमा चलाया है। इस अभियोगकी रचनाका तो हम इसके सिवा और कोई दूसरा कारण नहीं देखते हैं। अन्तमें महोदय! हम इस आशा और विश्वासके साथ अपने स्थानपर बैठते हैं कि मामलेका फैसला करते समय हमारी प्रत्येक कठिनाईपर ध्यान रख कर, हमारे साथ समुचित न्याय किया जायगा, जिसका बृटिश न्यायालयोंको सदासे गौरव रहा है।" इस प्रकार अपनी बहस समाप्त-कर वे अपने स्थानपर बैठ गये। उस समय तक पांच बज चुका था। अतएव डिप्टी मजिस्ट्रेट साहबने दूसरे दिन फैसला सुनानेका वचन देते हुए, उस दिनकी कार्य्यवाही समाप्त की।

दसवां अध्याय

सूर्यास्त हो चुका है। सड़कोंपर कहीं कहीं रोशनी भी जलने लगी है। बाबू लोग अपने अपने मित्रोंके साथ हवाखोरीके लिये निकल चुके हैं। कानपुरके डिप्टी मजिस्ट्रेट पं० उमाशंकर भी संध्याके समय प्रतिदिन टेनिस खेलनेके लिये क्लबमें जाया करते थे। पर आज लाख प्रयत्न करनेपर भी वे वहाँ न जा सके। रोशनी हो जानेपर अन्य दिनोंकी तरह बैठकखानेमें न जाकर वे सीधे अपने बिछौनेपर लेट रहे। इस समय उनका चेहरा देखकर कोई अनजान व्यक्ति भी आसानीसे यह कह सकता है कि ये किसी मानसिक कष्टसे पीड़ित हो रहे हैं। आज संध्याके समय उन्होंने कुछ जलपान भी नहीं किया था। कई मित्र इनसे मिलनेके लिये आये, पर अस्वस्थ्यताका बहानाकर, इन्होंने किसीसे भी मुलाकात नहीं की।

पं० उमाशंकरजीकी यह अवस्था देखकर, उनकी स्त्री कलावती भी बड़ी चिन्तामें है। कुछ देरके बाद दबे पांव जाकर, उसने अपने पतिसे चिन्ताका कारण पूछा। थोड़ी देरतक तो उन्होंने बहुत टालमटोल की। पर स्त्रीका अधिक आग्रह देखकर उन्होंने उससे पं० दीनानाथके मामलेकी बात कह सुनायी।

अपने पतिकी चिन्ताका कारण सुनकर कलावती मुस्कुराती हुई बोली—"मामला जब आपके ही हाथमें है, फिर चिन्ता किस

बातकी ? उनके छुटकारेका तो आपको अवश्यही कोई न कोई प्रबन्ध करना पड़ेगा।"

पं० उमाशंकर--"पर गवाहोंने उलटा बयान दिया है।"

कलावती—"ऐसा क्यों ?"

पं० उमाशंकर—"मालूम पड़ता है कि उन लोगोंने कुछ लालच देकर या दबाव डालकर, गवाहोंको अपनी ओर मिला लया है।"

कलावती—"क्या उनलोगोंने पंडितजीके विरुद्ध गवाही दी है ?"

पं० उमाशंकर—"हां।"

कलावती—"पर इससे क्या ? कानूनका जाल तो बहुत पेचीला होता है। ढूंढ़नेपर उन्हें बचाने लायक अवश्य ही कोई न कोई रास्ता मिल जायगा।"

पं० उमाशंकर—"पर ऐसा करना अन्याय होगा।"

कलावती—"क्या दुनियाकी सभी चीजोंसे बढ़कर आप उन्हें नहीं चाहते हैं ?"

पं० उमाशंकर—"निःसन्देह। मैं उनके लिये तथा केवल उन्हींके लिये धधकती हुई अग्निमें भी कूद सकता हूं।"

कलावती—"फिर इस छोटीसी बातमें तर्क वितर्कका कारण ?"

पं० उमाशंकर—"कारण और कुछ नहीं, केवल कर्त्तव्य तथा न्यायका भय मुझे इस सम्बन्धमें कुछ करनेसे रोकता है।"

कलावती—"क्या आप नहीं जानते कि पंडितजी निर्दोष हैं ?"

पं० उमाशंकर—"हां, मैं यह अवश्य जानता हूं। पर हमारी यह जानकारी व्यक्तिगत रूपसे है। कानूनके अनुसार मुझे उन्हें निर्दोष बतलानेका कोई अधिकार नहीं है।"

कलावती—"उन्हें निर्दोष जानते हुए भी, उन्हें दण्डित करना, क्या अन्याय नहीं है?"

पं० उमाशंकर—"अन्याय अवश्य है।"

कलावती—"फिर अन्यायके बदले न्याय करनेसे आप क्यों हिचकते हैं?"

पं०उमाशंकर—"कानूनी झमेलोंके कारण।"

कलावती—"क्या न्याय तथा कानून परस्पर विरोधी चीजें हैं?"

पं० उमाशंकर—"स्वभावतः विरोधी होना तो नहीं चाहिये, पर वर्त्तमान अवस्थामें ये कभी कभी एक दूसरेके विरोधी भी हो जाते हैं।

कलावती—"आप भी तो विचित्र बातें कर रहे हैं। न्याय तथा कानून एक दूसरेके विरोधी किस प्रकार हो सकते हैं?"

पं० उमाशंकर—"सुननेसे यह बात विचित्र अवश्य मालूम पड़ती है; पर वास्तवमें बात ऐसी ही है। यहां अपराधी मनुष्य जिसे न्यायतः दण्ड मिलना चाहिये, प्रमाणोंके अभावमें कानूनके अनुसार बेदाग छोड़ दिया जाता है तथा निर्दोष व्यक्ति भी अपने विरोधीकी चतुराई तथा षड़यन्त्रके द्वारा कानूनके अनुसार दंडित किया जाता है। आजके अदालती न्यायका यही संक्षिप्त दिग्दर्शन है।"

कलावती—"पर आप न्याय तथा कानूनमें किसको अधिक महत्वपूर्ण समझते हैं ?"

पं० उमाशंकर—"अधिक महत्वपूर्ण स्थान तो न्यायका ही है। पर वर्तमान समयमें चूंकि न्याय कानूनपर निर्भर करता है, इसलिये कानूनकी ही प्रधानता माननी पड़ती है।"

कलावती—"पर पंडितजीके लिये क्या आप न्यायकी वेदी-पर कानूनको वलिदान नहीं कर सकते हैं ?"

पं० उमाशंकर—"मैंने तो पहले ही कह दिया कि उनके लिये मैं सभी कुछ कर सकता हूं। यहाँ तो उन्हें मुक्त करनेमें कोई दोष भी नहीं है। जब मैं जानता हूँ कि वे सर्वथा निर्दोष हैं, फिर उन्हें छोड़ देनेमें कोई हर्ज नहीं मालूम पड़ता है।"

कलावती—"इस बातको जानते हुए भी आप व्यर्थ ही चिन्तित हो रहे थे ?"

पं० उमाशङ्कर—"अब चिन्ताकी कोई बात नहीं है। मैं उन्हें निःसंकोच रूपसे छोड़ सकूंगा। कानूनकी क्या मजाल है कि वह न्यायके पथमें वाधा डाले।"

कलावती—"पर कानूनकी मर्यादाकी अवहेलना करनेकी आवश्यकता क्या है ? ढूँढ़नेपर अवश्य ही कोई न कोई ऐसी वात मिल जायगी, जिसके आधारपर आप उन्हें छोड़ सकते हैं।"

अपनी स्त्रीका मुख चूमते हुए पं० उमाशङ्कर बोले—"तुम्हारा कहना बहुत ठीक है। दीनानाथको बचानेके लिये मैं अवश्य ही कानूनका कोई नवीन पहलू ढूँढ़ निकालूँगा।"

वे इस प्रकार बातें कर ही रहे थे कि अरदलीने आकर उनके हाथमें एक पत्र दिया। पत्रको देखते ही वे समझ गये कि यह उनके हृदयके साथी पं० दीनानाथका लिखा हुआ है और उत्सुकतावश उन्होंने उसी समय, उस पत्रको खोलकर, पढ़ना आरम्भ किया। पत्र इस प्रकार था—

"प्रिय उमाशङ्कर,

बहुत तर्क वितर्कके बाद आज मैं तुम्हारे पास यह पत्र भेज रहा हूं। कई दिनोंसे पत्र लिखनेकी इच्छा थी, पर कई अज्ञात कारणवश मैं आजतक अपनी इच्छाको पूरा करनेमें असमर्थ रहा। आज एकाएक कर्त्तव्यकी ध्वनि अंतरात्मामें सुनाई पड़ी; प्रेमके सागरसे हृदय प्लावित हो उठा; सत्यका प्रत्यक्ष स्वरूप आंखोंके सामने नाचने लगा; आत्माने एक नवीन शक्ति तथा हृदयने एक नवीन ज्योतिका दर्शन किया; और मैं इसी अवस्थामें यह पत्र लिखने बैठा हूं। तुम कृपया ठंढे हृदयसे, निष्पक्ष भावसे तथा प्रेम जगतके सच्चे प्रतिनिधिकी हैसियतसे, इस पत्रको पढ़ना और शान्त हृदयसे इसपर मनन करना।

आजसे नहीं, विद्यार्थी जीवनसे ही, हम लोगोंके बीच प्रेमपूर्ण सम्बन्ध रहा है। उस अवस्थामें ही हम लोगोंके प्रेमने कुछ लोगोंके हृदयमें स्पर्द्धाका भाव पैदा कर दिया था। इसके साथ ही कुछ ऐसे भी सहृदय थे, जो हम लोगोंके प्रेमको आदर्श समझकर, उसके आधारपर चलना अपना कर्त्तव्य समझते थे। मुझे याद है, तुम्हें भी अवश्य ही स्मरण होगा कि हम लोगोंके बीच भ्रम

फैलानेके लिये कुछ लोगोंने कितना अपार परिश्रम किया था। पर हम लोगोंके पारस्परिक प्रेमपर उसका कुछ भी प्रभाव न पड़ा और हमारी मित्रता अटल भावसे स्थिर रही। कई नाजुक परिस्थितियोंमें हमलोगोंने अपने प्रेमकी पवित्रता निबाही है और मुझे पूर्ण आशा तथा विश्वास है कि भविष्यमें भी हम लोगोंका प्रेम पवित्र आधारपर ही अवलम्बित रहेगा।

मेरे हृदयके साथी! आज ईश्वरकी कृपासे हम लोगोंके प्रेमकी एक बड़ी परीक्षा होनेवाली है। अबतक हम लोगोंकी जितनी परीक्षायें हुई हैं, उनका प्रभाव इने गिने लोगोंपर ही पड़ा है। पर इस परीक्षाका प्रभाव समूचे संसारपर पड़े बिना नहीं रहेगा। अतएव इस स्थलपर यदि तुम तनिक भी दृढ़तासे काम लो, तो हम लोगोंका प्रेम पथभ्रष्ट संसारके लिये पथ-प्रदर्शकका कार्य कर सकता है।

आज प्रेमके नामपर संसारमें क्या हो रहा है? जितने व्यभिचार, दुराचार तथा पापमय कर्म होते हैं, सबोंमें प्रेम हीकी तो दुहाई दी जा रही है। संसार अन्धा है, इसके निवासी अन्धे हैं; तभी तो दुनियामें पवित्र प्रेमके नामपर इतना अन्धेर हो रहा है। प्रेमकी सृष्टि करते समय भगवानने भूलकर भी, यह न सोचा होगा कि हमारे पुत्र कभी इसका इस प्रकार दुरुपयोग करेंगे। पर संसारमें आज खुले आम प्रेमके नामपर ही बेचारे प्रेमकी हत्या हो रही है। क्यों? कारण यही कि सिद्धान्तके रूपमें वास्तविक प्रेमकी व्याख्या करनेवाले बहुत मिलते हैं, पर उसे कार्यरूपमें परिणत

करनेका साहस वे नहीं रखते। संसारकी वर्तमान हीनताका यही कारण है।

ईश्वरकी कृपासे प्रेमका वास्तविक रूप संसारके सामने दिखलानेका आज तुम्हें एक बड़ा ही अच्छा अवसर हाथ लगा है। लोग बड़ी उत्सुकताके साथ यह देखनेकी प्रतीक्षा कर रहे हैं कि हमारे मामलेमें तुम कर्त्तव्यका पालन करते हो या नहीं? कुछ लोगोंकी यह भ्रान्त धारणा है कि प्रेम तथा कर्त्तव्य दोनों एक साथ नहीं, निवाहे जा सकते हैं। एकके पालन करनेपर अवश्य ही दूसरे-की हत्या करनी पड़ेगी। अपने पक्षकी पुष्टिमें वे इसी प्रकारकी परिस्थितिको पेश करते हैं, जो हमारे मामलेको लेकर तुम्हारे सामने उपस्थित हुई है। उन लोगोंका कहना है कि तुम यदि वास्तविक न्यायकर मुझे दण्डित करोगे, तो ऐसी अवस्थामें हम लोगोंके प्रेमका धागा टूट जायगा और यदि तुम मेरे प्रेमका विचारकर, मुझे अपराधी पाते हुए भी दण्डमुक्त कर दोगे, तो तुमको अवश्य ही कर्त्तव्यसे भ्रष्ट होना पड़ेगा। पर तनिक विचारकर देखनेसे उन लोगोंकी बातोंकी निःसारता स्पष्ट रूपसे प्रमाणित हो जाती है।

प्रेमसे सुखकी उत्पत्ति होती है तथा कर्त्तव्यपालनसे भी सुख प्राप्त होता है। जब दोनोंके फलोंमें समानता है, फिर उनके कारण किस प्रकार परस्पर विरोधी हो सकते हैं? अतएव मैं इस बातको समझनेमें सर्वथा असमर्थ हूं कि प्रेम तथा कर्त्तव्यकी एक ही कसौटी रहनेपर भी किस प्रकार दोनोंकी सचाई एक साथ प्रमाणित नहीं की जा सकती है?

क्या मर्यादा पुरुषोत्तम रामचन्द्रजीने अपने जीवनकी घटना-ओंसे उपरोक्त विवादका अन्त नहीं कर दिया है ? क्या सीताके सम्बन्धमें उन्होंने प्रेमके साथ साथ कर्त्तव्यका भी पालन नहीं किया ? प्रजाके प्रति अपने कर्त्तव्यका पालन करनेके लिये सीताको निर्दोष जानते हुए भी, उन्हें बन भेजकर क्या रामचन्द्रने प्रेमके साथ साथ कर्त्तव्यकी सचाई भी नहीं निवाही है ? क्या बन भेजने-के समय रामचन्द्रके हृदयमें सीताके प्रति प्रेमकी मात्रा कम हो गयी थी अथवा सीताहीके हृदयमें रामचन्द्रके प्रति प्रेमकी न्यूनता हो गयी थी ? नहीं, ऐसा तो कुछ भी नहीं हुआ। यदि सीताके मोहमें पड़कर रामचन्द्र उन्हें बन न भेजते, तो प्रजाकी दृष्टिमें वे सदाके लिये गिर जाते और इस प्रकार मोह-मिश्रित प्रेमके कारण उन्हें दुखी होना पड़ता, जो वास्तविक प्रेमके लक्षणसे सर्वथा प्रति-कूल है। पर सीताको बन भेजनेसे उन लोगोंके प्रेममें तनिक भी धब्बा नहीं लगा। आज उनका कर्त्तव्यमिश्रित सच्चा प्रेम संसारके सामने एक आदर्श काम कर रहा है तथा प्रेमके विद्यार्थियोंको इसका वास्तविक रहस्य बतला रहा है।

ठीक इसी प्रकार तुम भी वर्तमान परिस्थितिमें प्रेम-सम्बन्धको दृढ़ रखते हुए अपने कर्त्तव्यका पालन कर सकते हो। कौन कहता है कि ऐसा करनेसे हमलोगोंके प्रेममें बाधा पड़ेगी ? थोड़ी देरके लिये मान लो कि तुमने कर्त्तव्यका कुछ भी विचार न कर, हमारे मामलेमें पक्षपातसे काम लिया। पर ऐसा करनेपर क्या कर्त्तव्यसे भ्रष्ट होनेके कारण तुम दुखी न होगे ? पर प्रेमके कारण किसीको

दुखी होना पड़े, यह किस प्रकार सम्भव हो सकता है ? प्रेमका पुरस्कार तो सुख होता है और कर्त्तव्यपालनसे भी सुखकी प्राप्ति होती है। जब इन दोनोंके फलोंमें समानता है, तो फिर इनके कारण किस प्रकार परस्पर विरोधी हो सकते हैं ? अतएव तुम्हें भी यह मानना पड़ेगा कि प्रेम और कर्त्तव्यमें गहरा सम्बन्ध है। एककी सचाई दूसरेकी सहायतापर निर्भर करती है। ये परस्पर सहायक हैं—विरोधी नहीं।

उमाशङ्कर ! कुछ इतिहासकार भी प्रेमके नामपर कई प्रकारके कलङ्क लगाया करते हैं। उनका कहना है कि पृथ्वीराज यदि संयोगिताके प्रेमके पीछे पागल न होते, तो भारतवर्षको आज हम इस हीन अवस्थामें न पाते। हम भी मानते हैं कि पृथ्वीराज यदि संयोगिताके पीछे पागल न होते तो भारतवर्ष आज इस प्रकार गुलाम नहीं रहता। पर इसके साथ ही पृथ्वीराजके इस पागलपनको हम संयोगिताका प्रेम कैसे मान लें ? कुछ लोग प्रेम तथा मोहका मिश्रण कर देनेके कारण भयङ्कर भ्रममें पड़ जाते हैं। मोहका बाहरी स्वरूप भी प्रेमहीके ऐसा होता है। पर प्रेमके आन्तरिक स्वरूपसे मोहका कोई सम्बन्ध नहीं है। मोहमें कर्त्तव्य परायणताके बदले कर्त्तव्यभ्रष्टता है; दृढ़ताके बदले इन्द्रियोंको तृप्त करनेकी लालसा है, पवित्रताके बदले चरित्रहीनता है तथा सात्विकताके बदले व्यर्थाडम्बर है। अतएव लक्षणोंसे विदित होता है कि पृथ्वीराज संयोगिताको प्रेमके बदले मोहकी दृष्टिसे देखते थे।

उमाशङ्कर ! मैं चाहता हूं कि तुम भी प्रेम तथा मोहके इस स्पष्ट भेदको समझो। मोहके जालमें पड़कर कभी प्रेमके कलेवर-को कलुषित न करना। वास्तविक प्रेम वही है जो दूध जैसा स्वच्छ, गंगाजल जैसा निर्मल, बर्फ जैसा शीतल, गुलाब जैसा सुन्दर, कामनियोंके हृदय जैसा कोमल तथा ईश्वर जैसा स्थायी हो। हम लोगोंका प्रेम भी आजतक इसी श्रेणीका रहा है और मुझे आशा है कि भविष्यमें भी ऐसा ही रहेगा।

अब हम विदा होते हैं। तुम स्वयं बुद्धिमान हो। अधिक लिखनेकी कोई आवश्यकता नहीं है। मुझे विश्वास है कि हमारे मामलेमें तुम एक सच्चे प्रेमीकी हैसियतसे अपने कर्त्तव्यका पालन करोगे, जिससे संसार वाध्य हो जाय—हम लोगोंके प्रेमकी ओर अपना ध्यान आकर्षित करनेके लिये। इसीमें हमलोगोंके प्रेमकी महानता है, सार्थकता है। मेरे सच्चे प्रेमी ! ईश्वर तुम्हें अपने कर्त्तव्यके पालन करनेमें सहायता दे और तुम सदा सुखी रहो।

तुम्हारा प्रेमी—

दीनानाथ"

उपरोक्त पत्रको पढ़ते पढ़ते पं० उमाशङ्करकी आंखोंसे आंसूकी धारा बह चली। पत्रको सिरहानेमें रखते हुए, पागलकी तरह आवेशपूर्ण शब्दोंमें वे इस प्रकार बोलने लगे—"दीनानाथ ! तुम मनुष्य नहीं—साक्षात देवता हो। ओफ ! इतनी विशालता, इतनी गम्भीरता, इतना सात्विक विचार; ईश्वरने अवश्य ही तुम्हें अपना प्रतिनिधि बनाकर इस संसारके कल्याणके लिये भेजा है।

तुम धन्य हो। तुम्हारे प्रेमका अधिकारी होकर मैं भी धन्य हो गया।"

कलावती वहीं बैठी बैठी चुपचाप सब कुछ देख रही थी। अपने पतिकी ऐसी अवस्था देख, कुछ चिन्तित होकर वह बोली—"पत्रमें क्या लिखा हुआ है, जिससे आप इतना व्यग्र हो गये?"

पं० उमाशङ्कर—"पत्रको पढ़कर मैं व्यग्र नहीं हुआ हूं। इससे तो मुझे सच्ची शान्ति मिली है। यह पत्र शान्तिका संदेशा देनेवाला है।"

कलावती—"जटिल समस्याके उपस्थित होनेपर, धैर्य धारण करना आवश्यक है। आपको मेरे सिरकी सौगन्ध है। आप व्यग्रताको छोड़कर, धैर्यका सहारा लें।"

पं० उमाशङ्कर—"तुम किसी बातकी चिन्ता न करो। अब मेरा हृदय सदाके लिये शान्त हो गया है। तुम जरा नौकरसे कह दो कि वह कोचवानके द्वारा गाड़ी तैयार करावे। मैं जरा दीनानाथसे मिलना चाहता हूँ।"

उनकी आज्ञाके अनुसार शीघ्र ही गाड़ी तैयार हो गयी और वे उसी समय अपने मित्रसे मिलनेके लिये चल दिये।

ग्यारहवां अध्याय

दूसरे दिन सब कोई बड़ी उत्सुकताके साथ पं० दीनानाथके मामलेके फैसलेकी प्रतीक्षा करने लगे। अधिकांश लोगोंके मुखसे यह बात सुनाई पड़ रही थी कि पंडितजी डिप्टी मजिस्ट्रेट साहबके घनिष्ट मित्र हैं। अतएव वे अवश्य ही बेदाग छोड़ दिये जांयगे। दारोगासाहब भी उन लोगोंकी मित्रताका समाचार सुनकर बड़े ही चिन्तित हो रहे हैं। उन्हें भी कुछ कुछ सन्देह हो रहा है कि मामलेका फैसला कहीं उनके प्रतिकूल न हो।

खैर, नियमित समयपर पं० उमाशङ्करजी कचहरी आ पहुंचे। आते ही उन्होंने पं० दीनानाथके मामलेका फैसला सुना दिया। फैसला सुनकर सभी कोई आश्चर्यमें पड़ गये। उनका फैसला लोगोंके अनुमानके सर्वथा प्रतिकूल निकला। पं० दीनानाथको ६ महीने सपरिश्रम जेलकी सजा दी गयी थी। अपने विस्तृत फैसलेमें उन्होंने कानूनके कई पहलुओंका बड़ी योग्यताके साथ विवेचन किया था। स्थान स्थानपर भारतीय दण्डविधानकी कई बातोंको अपूर्ण बतलाते हुए, अपने फैसलेके अन्तमें उन्होंने लिखा था—'मेरी समझमें अभियुक्तकी बातें सत्य तथा तर्कसंगत हैं। पर अपने पक्षकी पुष्टिमें उसके वकील कोई भी महत्वपूर्ण प्रमाण पेश करनेमें सफल नहीं हुए। उनकी सारी सफलता गवाहोंके बयानोंपर निर्भर करती थी। पर एकको छोड़कर और

किसी भी गवाहने उनके पक्षका समर्थन नहीं किया। प्रधान गवाह बनवारीकी अनुपस्थिति भी एक महत्वपूर्ण बात है। सम्भव है कि भविष्यमें उसकी अनुपस्थितिका कोई रहस्य खुले। पर वर्तमान परिस्थितिमें उसकी अनुपस्थितिसे होनेवाले लाभका अधिकारी हम मुद्दईको ही समझते हैं। अतएव अभियुक्तकी निर्दोषितामें विश्वास रखते हुए भी हम कानूनी पहलुओंसे बाध्य होकर दुःखके साथ उसे ६ महीने सश्रम कैदकी सजा देते हैं।"

फैसला सुननेपर पं० दीनानाथ हंसते हुए लक्ष्मीनारायण आदिसे विदा होने लगे। 'निर्भय' का सारा कार्य उन्होंने अपने सहकारी सम्पादकके हवाले कर दिया। अन्तमें लक्ष्मीनारायणकी ओर मुख करके वे बोले—"आप लोग किसी प्रकार दुःखित न हों। यह आप भूलकर भी न सोचें कि आपलोगोंके लिये मैं जेल जा रहा हूं। यदि गवाहोंने किसी प्रकारका विश्वासघात किया, तो इसके लिये देशकी अवस्थाके सिवा और कोई भी व्यक्ति अपराधी नहीं है। मैं गवाहोंपर दोषारोपण करना नहीं चाहता। देशमें शिक्षाके अभावके कारण, साधारण जनता अपने कर्त्तव्यको समझनेमें भी असमर्थ है और इसी कारण अच्छे कामोंमें इस प्रकारकी गड़बड़ी खड़ी हो जाती है। एक सम्पादककी हैसियतसे सच्ची बातें लिखना मेरा कर्त्तव्य था और मुझे इसका गौरव है कि मैं अपने कर्त्तव्यका पालन करनेमें समर्थ हुआ।"

लक्ष्मीनारायणके द्वारा मजदूर आन्दोलनके सम्बन्धमें प्रश्न किये जानेपर उन्होंने कहा—"आप लोग अपने कामको जारी

रखें। मेरा हृदय आपलोगोंकी सफलताके लिये सदा ईश्वरसे प्रार्थना करता रहेगा। जेलसे लौटनेपर, मैं अधिक उत्साह तथा तत्परताके साथ एकबार फिर आपलोगोंकी सेवामें उपस्थित होऊँगा। अपनी विजयमें आप किसी प्रकारका सन्देह न रखें। विघ्न शुभका लक्षण है। अच्छे कामोंमें विघ्नका पड़ना स्वाभाविक ही है। पर अन्तमें सत्यकी विजय होती है, इसका आप विश्वास रखें।"

इस प्रकार सभी लोगोंको समझा बुझाकर, वे हँसते हँसते जेलकी ओर चले। पर जनताको पं० उमाशंकरके फैसलेको देख-कर बड़ा ही आश्चर्य हुआ। पं० दीनानाथके कुछ भक्त उनके प्रति अपशब्दका भी प्रयोग करने लगे। कुछ लोग व्यंगसे कहने लगे—"प्रभुता पाइ काहि मद नाहीं।" कुछ लोग कहते थे—"अब ये कुछ दिनोंमें मजिस्ट्रेट हो जांयगे। ऐसी अवस्थामें इन्हें पं० दीनानाथ सरीखे गरीब मित्रोंसे क्या प्रयोजन? ये तो अब अंग्रेजोंका जूठा पत्तल चाटनेमें ही अपने जीवनकी सार्थकता समझते हैं।"

इसके साथ ही कुछ ऐसे लोग भी थे, जो इस फैसलेके कारण पं० उमाशंकरकी निष्पक्षताकी हृदयसे प्रशंसा करने लगे। प्रेमके साथ साथ उन्होंने किस प्रकार कर्त्तव्यका पालन किया, यह देखकर उन लोगोंके मुँहसे 'वाह वाह' निकल पड़ा। इस तरह अपनी बुद्धिके अनुसार सभी कोई पं० उमाशंकरके फैसलेकी आलोचना करने लगे।

दारोगासाहबको फैसलेसे जो प्रसन्नता हुई इसके सम्बन्धमें कुछ लिखना व्यर्थ है। साधारण स्थितिमें उन्हें इतनी प्रसन्नता नहीं होती। पर पं० दीनानाथ तथा पं० उमाशंकरकी मित्रताकी बातें सुनकरके वे अपने पक्षमें फैसला होनेकी आशाको छोड़ चुके थे। ऐसी स्थितिमें उन्हें जो प्रसन्नता हुई, वह स्वाभाविकही थी।

बारहवां अध्याय

सोना सिंहके सम्बन्धमें दूसरे अध्यायमें थोड़ा-बहुत लिखा जा चुका है। उस दिन विवश होकर बनचारीने उसकी बांहमें दांत काट लिया था। पहले तो उसने इस ओर कोई ध्यान नहीं दिया, पर दिनों दिन उसका घाव सूखनेके बदले बढ़ता ही गया। लगभग एक सप्ताहके बाद उसकी समूची बांह फूल गयी। धीरे धीरे उसकी बांहमें वेदना भी होने लगी, जिससे वह बराबर बेचैन रहने लगा। जो सोना सिंह कठिनसे कठिन बीमारीको भी कुछ नहीं समझता था, वहो इस घावसे परेशान हो गया।

रामपुरमें एक छोटासा अस्पताल भी है। रामकिशोर प्रसादने वहींके डाक्टरसे सोनासिंहके इलाजका प्रबन्ध कर दिया। घावको देखकर डाक्टरने पहलेही दिन कहा कि मनुष्यके दांतमें बहुत भयंकर विष रहा करता है। इनकी बांहमें दांत अधिक घुस जानेके कारण, इनके खूनमें विषका प्रवेश हो गया है। अतएव इनके घावका आराम होना बड़ाही कठिन कार्य है, फिर भी वे यथाशक्ति उसकी चिकित्सा करते रहे।

सोनासिंह लगभग दो सप्ताह तक अस्पतालमें पड़ा रहा। पर उसकी अवस्था सुधरनेके बदले और भी जटिल होती गयी। वेदनासे वह रात-दिन बेचैन रहने लगा। अन्तमें डाक्टरने भी

उसके सम्बन्धमें अपनी निराशा प्रकट की। एक दिन संध्या समय उसके लड़के महावीरको बुलाकर खेद प्रकट करते हुए उन्होंने कहा—"अब तुम्हारे पिताके बचनेकी मुझे कोई आशा नहीं है। दो-तीन दिनोंके भीतर उनकी मृत्यु हो जानेकी सम्भावना है।"

ठीक ऐसा ही हुआ। दूसरे ही दिन रात्रिके समय बनवारीसे बदला चुकानेका अन्तिम सन्देशा अपने पुत्रको देकर सोनासिंह सदाके लिये सो गया। अपने परिवारमें केवल वही एक कमानेवाला था। महावीरकी अवस्था इस समय १५-१६ वर्षसे अधिककी न थी। अतएव सोनासिंहकी मृत्युने उसके परिवारके सभी लोगोंको अनाथ बना दिया। कौन जानता था कि निःशस्त्र तथा बलहीन बनवारीके हाथोंसे सोनासिंहकी मृत्यु होगी, जो अवसर पड़नेपर उसके जैसे दर्जनों आदमियोंका काम तमाम करनेकी शक्ति रखता था। पर ईश्वरकी इच्छाके सामने किसीका भी कुछ वश नहीं चलता। वह जब चाहे, असम्भवको सम्भव तथा सम्भवको भी असम्भव बना सकता है। केवल उसकी इच्छा चाहिये। यदि ऐसा न होता, तो फिर ईश्वरीय तथा मानवीय शक्तिमें भेद ही कौनसा रह जाता?

सोनासिंहका पुत्र दूसरे ही दिन प्रातःकाल अपने पिताकी मृत्युका समाचार सुनानेके लिये रामकिशोर प्रसादके यहां आया। महावीरके मुखसे सोनासिंहकी मृत्युका समाचार सुनकर रामकिशोर प्रसादको बहुत ही दुःख हुआ। वह सदैव उनके अन्याय-

का साथी, अत्याचारका साधन तथा पाशविकताका सहचर बना रहता था। उसे अपने साथ रखनेपर रामकिशोर प्रसाद अपनेमें एक अपूर्व शक्तिका अनुभव करते थे। उसकी मृत्युसे उनके अन्यायका एक सहारा ही टूट गया। अतएव उनका दुःखी होना स्वाभाविक ही था। महावीरको उन्होंने श्राद्ध आदिमें यथा-शक्ति सहायता देनेका वचन दिया, अन्तमें उसने रामकिशोर बाबूसे अपने पिताका अन्तिम सन्देशा कह सुनाया, जो उसने बनवारीके सम्बन्धमें दिया था। उसकी बातें सुनकर उनका खून खौल उठा और प्रतिहिंसाकी प्रवृत्तिने उन्हें पागलसा बना दिया। महावीरके सिरपर हाथ रखते हुए वे बोले—"बेटा ! बनवारीने ही तुम्हारे पिताका खून किया है। मैं अपनी सारी शक्ति लगाकर भी तुम्हारे पिताकी रक्षा न कर सका ; इसका मुझे खेद है। अत-एव तुम्हें मैं आज्ञा देता हूं कि आज रातको बनवारीका खूनकर, तुम अपने पिताकी अन्तिम आज्ञाका पालन करो। वह हत्यारा आज चार पांच दिनोंसे मेरे तहखानेमें बन्द है। अतएव तुम आसानीसे अपने पिताकी आज्ञाका पालन कर सकोगे और आजसे मैं तुमको तुम्हारे पिताके स्थानपर नियुक्त करता हूं।"

अपनी नियुक्तिसे कुछ प्रसन्नताका भाव दिखलाता हुआ महावीर बोला—"सरकार, मुझे कौनसा काम करना पड़ेगा ?"

रामकिशोर प्रसाद—"अभी तुम्हारी अवस्था बहुत थोड़ी है। अतएव दो-चार वर्षों तक तुम्हें कोई कठिन काम नहीं दिया जायगा। इन बातोंसे तुम निश्चिन्त रहो। सोनासिंह

मुझे प्राणोंसे भी अधिक प्यारा था और उस सम्बन्धके कारण मैं तुम्हें सभी प्रकारकी सुविधा दूँगा।

बाबू साहबके मुखसे इस प्रकार आश्वासनयुक्त बातें सुनकर, महावीरको बहुत कुछ शान्ति मिली और अपनी नियुक्तिपर हार्दिक कृतज्ञता प्रकाशित करता हुआ वह अपने घर चला गया।

महावीरके चले जानेपर रामकिशोर प्रसादने दारोगासाहबको बुलानेके लिये एक आदमी भेजा। लगभग आधा घंटेके बाद वे वहाँ आ पहुंचे। उनके आते ही रामकिशोर प्रसादने उन्हें सोनासिंहकी मृत्युका समाचार कह सुनाया। यह समाचार सुनकर हार्दिक खेद प्रकट करते हुए दारोगासाहब बोले—"वह एक हीरा था, जिसे हमारे खजानेसे लुटेरोंने लूट लिया है। ओफ, कठिनसे कठिन कामको भी वह चुटकीसे मसल डालता था।"

रामकिशोर प्रसाद—"उसकी वीरतामें क्या सन्देह है? उसे मैं अपना दाहिना हाथ समझता था।"

दारोगासाहब—"उसकी मृत्यु होनेसे तो अब वही पक्ष विजयी मालूम पड़ता है। क्योंकि उन लोगोंने एक खून भी कर डाला। पर हमलोग तो अभी कुछ करनेही नहीं पाये हैं। हमलोगोंके प्रयत्नसे केवल एक निर्दोष सम्पादक जेल भेजा गया है। असल शैतान तो अभी मूँछोंपर हाथही फेर रहे हैं। सोनासिंहकी मृत्युसे वास्तवमें हमलोगोंका दाहिना हाथ टूट गया।"

रामकिशोर प्रसाद—"इसमें क्या सन्देह है? शैतान अनवारोंका खून पीनेके लिये अब मेरा हृदय तरस रहा है।
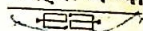
सोना सिंह भी मृत्युके समय अपने पुत्रको इसी आशयका एक सन्देशा दे गया है।"

दारोगासाहब रुग्ध कंठसे बोले—"क्या मृत्युके समय उसे बनवारीकी घटना याद थी ?"

रामकिशोर प्रसाद—"हां। अन्तिम समयमें वह महावीरको बनवारीसे बदला चुकानेकी बात कह गया है।"

दारोगासाहब-"अफसोस! सोना सिंहकी मृत्यु बनवारी जैसे कायर तथा शक्तिहीन व्यक्तिके द्वारा हुई। यदि वह कहीं वीरता दिखलाता हुआ मारा जाता, तो इतना अफसोस मुझे कभी नहीं होता।"

रामकिशोर प्रसाद—"इसीका दुख तो मुझे भी है।"

दारोगासाहब—"भगवानकी यही इच्छा थी।"

रामकिशोर प्रसाद—भगवानकी माया तो है ही। मनुष्यके दांत काटनेसे किसी मनुष्यकी मृत्युका होना तो मैंने आज तक सुना भी नहीं था।"

दारोगासाहब—"इस बातको बहुत कम आदमी जानते हैं।"

रामकिशोर प्रसाद—·क्या आपको पहलेसे ही यह बात मालूम थी ?"

दारोगासाहब—"यह कोई नयी बात तो नहीं है। पर इस प्रकारकी घटना बहुत कम हुआ करती है। आप यदि किसी वैद्य या डाक्टरसे पूछें, तो वह आपको बतलावेगा कि मनुष्यका दांत बहुत जहरीला होता है। उसके जहरका प्रभाव खूनपर पड़ जानेसे भाग्यसेही मनुष्य बचता है।"

रामकिशोर प्रसाद—"तब तो दाँत काटना भी एक बड़ा अपराध है।"

दारोगासाहब—"इसमें क्या सन्देह है?"

रामकिशोर प्रसाद—"क्या बनवारीपर अब खूनका मामला नहीं चल सकता है?"

दारोगासाहब मुस्कुराते हुए बोले—"आप तो एकदम बच्चे की तरह बातें कर रहे हैं। आपका यह भोलापन देखकर मुझे बड़ी हँसी आ रही है।"

रामकिशोर प्रसाद—"सो क्या?"

दारोगासाहब—"बनवारीपर अब मामला किस प्रकार चल सकता है? वह महीनों बीमार रहा और अस्पतालमें उसकी मृत्यु हुई है। अस्पतालके कागजोंमें दाँत काटनेका कहीं जिक्र भी नहीं है। फिर मामला किस आधारपर खड़ा किया जायगा?"

रामकिशोर प्रसाद—"फिर आप बनवारीसे बदला लेनेका कौनसा उपाय सोचते हैं?"

दारोगासाहब—उसने खून किया है। खूनकी सजा होती है फाँसी, अतएव चुपचाप उसका काम तमाम कर, उसकी लाशको कहीं गड़वा देना चाहिये। इसमें कोई दोष भी नहीं है।"

रामकिशोर प्रसाद—"मेरी भी तो यही राय है।"

दारोगासाहब-"बस,देर करनेकी कोई आवश्यकता नहीं है।"

रामकिशोर प्रसाद—"क्या आज ही उसका काम तमाम कर दिया जाय?"

दारोगासाहब—"हां, आजही।"

रामकिशोर प्रसाद—"मैंने भी यही निश्चय किया था।"

दारोगासाहब—"पर यह काम किसी विश्वासी आदमीके द्वारा होना चाहिये।"

रामकिशोर प्रसाद—"यह काम मैं सोना सिंहके पुत्र महावीर-के द्वारा कराऊँगा। उसके हाथोंसे यह कार्य होनेपर सोनासिंहकी आत्माको भी शान्ति मिलेगी।"

दारोगासाहब—"हां, आपका विचार ठीक है। अब चल-कर जरा उस हत्यारेको दो चार लात जूता लगा आना चाहिये।"

दारोगासाहबकी यह बात सुनकर, रामकिशोर प्रसाद उनके साथ तहखानेमें गये, जहां बनवारी पं० दीनानाथके मामलेके समयसेही बन्द था। बनवारी आज आठ दिनोंसे वहां बन्द है। भूख प्यास तथा चिन्ताके कारण उसका बदन सूखकर प्रमेहके रोगीकी तरह हो गया है। उसे खानेके लिये दिनभरमें केवल एक वार दिया जाता है। वह भी यथेष्ट मात्रामें नहीं। कुत्तेकी तरह कभी एक आध सूखी रोटी उसके सामने फेंक दी जाती है। ईश्वर-की सृष्टिमें—ईश्वरके साम्राज्यमें, इस प्रकारका अन्धेर होते देख बनवारीको आश्चर्य हो रहा है। इसके लिये वह अपराधी समझता है अपने भाग्यको। पर ईश्वरकी दयामें भी अब उसे कभी कभी सन्देह होने लगा है। उसके हृदयमें कभी कभी यह प्रश्न उठने लगता है, कि यदि ईश्वर दयाशील है, तो वह तुम्हारे कष्टोंको दूर क्यों नहीं करता? इस प्रश्नके उठनेपर उसका आस्तिक हृदय

और भी बेचैन हो जाता है। अपने भाग्यको कोसते हुए बड़ी कठिनाईके साथ वह किसी प्रकार अपने हृदयके इस सन्देहको दूर करनेमें समर्थ होता है।

अब उसने जीवनकी आशा भी त्याग दी है। इस नर्कमय जीवनसे वह मृत्युको ही अधिक पसन्द करता है। कई दिनोंसे वह यही सोच रहा है कि बाबूसाहबके पैरोंपर गिरकर भी प्रार्थना करूँगा कि कृपया इतना कष्ट न देकर मेरे जीवनका ही अन्त कर दें। अभी भी वह इसी प्रकारकी बातें सोच रहा है। इतनेमें दारोगासाहबके साथ रामकिशोर प्रसादको उसने आते देखा। उन लोगोंके नजदीक आते ही हाथ जोड़कर उसने कहना आरम्भ किया - "सरकार, अब अधिक कष्ट नहीं सहा जाता। कृपाकर मेरी मृत्युका अब कोई प्रबन्ध कर दिया जाय। इस कष्टसे मैं मृत्युको ही अच्छा समझता हूं।"

त्योरियाँ चढ़ाते हुए रामकिशोर प्रसादने उत्तर दिया—"हत्यारा कहींका! अभीतक हत्याके पापसे बचनेके लिए मैंने तुम्हें जीवित रखा था। पर एक खूनीको मारनेमें कोई पाप नहीं है। अतएव आज रात्रिको तुम्हारा काम तमाम किया जायगा।"

लड़खड़ाती हुई जबानसे बनवारीने उत्तर दिया—"मैं और खूनी? यह कैसा अन्धेर? सरकार, मुझपर खूनका इल्जाम क्यों लगाया जा रहा है?"

कुछ उत्तेजित होकर रामकिशोर प्रसाद बोले—"खूनी! खूनी!! खूनी!!! तुम खूनी है। तुमने सोना सिंहका खून किया है।"

निर्भयतापूर्वक बनवारी बोला—"सरकार, इस जन्ममें तो नहीं, किसी और जन्ममें खून किया होगा।"

दारोगासाहब—"क्या सोना सिंहको तुमने दाँत नहीं काटा था ?"

बनवारी—"हाँ, काटा था और अवश्य काटा था। पर इसमें मेरा कोई अपराध न था।"

दारोगासाहब—"तो अपराध क्या मेरा था ?"

बनवारी—"दारोगासाहब ! काँटा भी किसीके पैरमें स्वयं नहीं चुभता। जब मनुष्य अपने पैरसे उसे कुचलता है, तो उसके पैरके अन्दर घुसनेके सिवा, काँटेके लिये और कोई दूसरा रास्ता ही नहीं रह जाता। हुजूर ,ऐसी अवस्थामें काँटेका क्या अपराध ?"

रामकिशोर प्रसाद—"अब जाकर, कलसे यमदूतोंको यह बहस सुनाना। पापी, मरनेपर तुम्हें नर्कही मिलेगा।"

उन्मादयुक्त शब्दोंमें बनवारी बोला—"मैं मरूंगा और आनन्दके साथ मरूंगा। इस दुनियामें सभी मरनेके लिये आते हैं। मरेंगे एक दिन आपलोग भी। पर आप कायरकी मौत मरेंगे—अन्यायीकी मौत मरेंगे।"

रामकिशोर प्रसाद—"चुप, हरामजादा ! खूनी !!"

बनवारी—"हाँ, ईश्वरके लिये मुझे खूनी न कहिये। दांत काटना कभी खून करना नहीं कहला सकता है, और वह भी विवशताकी अवस्थामें।"

दारोगासाहब—"पागलकी तरह बातें न करो। क्यों इस

मरणासन्न अवस्थामें भी मार खाकर, व्यर्थ कष्ट उठाना चाहते हो ? तुम्हारे दांतोंके जहरसे ही कल सोना सिंहकी मृत्यु हो गयी। अतएव मरनेके पहले तुम इस पापका प्रायश्चित्त कर लो, जिससे तुम्हारी आत्माका कल्याण हो।"

बनवारी—"दारोगासाहब ! आप मेरी चिन्ता न करें। मेरी आत्मा पवित्र है। अतएव मृत्युके बाद मुझे दुखित होनेका कोई भय नहीं है। यदि सोना सिंहकी वास्तवमें मृत्यु हुई है,तो यह उसके पापका प्रायश्चित्त है, जो उसने मेरे साथ अत्याचार करके किया था। उसकी मृत्युका भागी मैं कदापि नहीं हो सकता।"

दारोगासाहब—"जब तुम्हारे द्वारा दाँत काटे जानेके कारण उसकी मृत्यु हुई है, तब उसका भागी दूसरा कौन हो सकता है ?"

बनवारी—"हुजूर ! यदि कोई आवेशमें आकर जहर खा लेता है,तो उसकी मृत्युका भागी उसका क्रोध बनेगा न कि जहर ?"

बीचमें ही बात काटते हुए रामकिशोर प्रसादने कहा—"चुप शैतानका बच्चा ! ज्यादे बहस न कर। अब भगवानका नाम ले। रातमें सोना सिंहके पुत्र महावीरके द्वारा तेरी हत्या होगी।"

बनवारी—"मैं इसके लिये पहले हीसे तैयार हूं।"

रामकिशोर प्रसाद—"तुम्हें कुछ कहना भी है ?"

बनवारी—"मुझे कुछ भी कहना नहीं है। यदि कहना भी होगा, तो दयामय भगवानसे कहूंगा, जिसके यहां मेरी बातोंकी सुनवाई होगी।"

उसकी बातोंसे क्रोधित होते हुए रामकिशोर प्रसाद बोले—"मरते वक्त भी तुम्हारी शैतानी न गई ? अच्छा, बक लो ।"

इतना कहकर वे दारोगासाहबके साथ वहाँसे चले आये और बनवारी पागलकी तरह हँसता हुआ इस प्रकार बोलने लगा—"अब मैं संसारसे चलूँगा। कई घंटोंके अन्दर ही मेरी यहाँसे बिदाई होगी। संसारमें क्या देखा ? ओफ ! मोह, अन्धकार और अन्धेर। इन्हींका आजकल यहांपर बोलबाला है। संसारके निवासी इन्हींके फेरमें पड़कर अपने जीवनको संकटपूर्ण बना रहे हैं। अफसोस ! दुनियामें मेरा आना व्यर्थ हुआ। मैं कोई काम न कर सका। गरीबीमें बड़ा आनन्द है। पर हमारे गरीब भाई उसका उपयोग करना नहीं जानते। यही कारण है कि उनका जीवन सदा संकटपूर्ण रहता है। अजीब अन्धेरकी दुनिया है। बेचारा निर्दोष दीनानाथ आज जेलकी चक्की पीस रहा होगा। चम्पा, चम्पा ! मुझे बिदाई दो। चमेली, प्यारी मुन्नी, ईश्वर तुम लोगोंका कल्याण करे। हा, बिदाई ! बिदाई !! बिदाई !!! अत्याचार, तेरा बुरा हो ! अन्याय चल, तुम्हें भी मैं इस दुनियासे अपने साथ लेता चलूं। ईश्वर ! न्याय करो गरीबोंका। इस संसारमें अन्यायका बोलबाला तुम्हारे स्वरूपको कलंकित करनेवाला है। मातु मेदिनी ! प्रणाम, अन्तिम प्रणाम ! बनवारी चला !! बिदाई दो !!!

इस प्रकार पागलकी तरह बोलता हुआ वह कमरेमें एक कोनेसे दूसरे कोनेतक दौड़ने लगा।

——

तेरहवां अध्याय

पंडित दीनानाथको जेल गये, आज पन्द्रह दिन हो गये। कानपुर शहरमें अब उनके मामलेकी सनसनी धीरे धीरे कम हो चली है। लोग एक प्रकारसे अब उनके मामलेकी बात भूल रहे हैं। पर पं० उमाशंकरके हृदयमें जुदाईका दर्द दिनों दिन अधिक हो रहा है। अब कचहरीका काम उनके लिये एक बोझसा हो गया है। बात बातमें वे वकीलों तथा मुख्तारोंसे झुंझला झुंझलाकर बातें करने लगते हैं। अरदलीसे किसी प्रकारकी गलती होनेपर तुरत उसपर गर्म हो जाते हैं। यदि किसी गवाहने जरा भी बेतुकी की, तो उसी समय उसे कचहरीसे बाहर निकलवा देते हैं। बेचारी कलावती भी उनके इस परिवर्तनसे परेशान हो रही है। उनका यह परिवर्तन देखकर सब कोई आश्चर्य्यमें हैं। पर कारणका किसी-को भी पता नहीं लग रहा है। हाँ, कलावती अनुमानसे कुछ कुछ समझ रही है कि अपने मित्रके जेल जानेके कारण इनका इस प्रकार परिवर्तन हो रहा है। पर वह बेचारी क्या करे ? इस स्थल-पर उसकी कोई कला काम नहीं करती।

प्रति दिनकी तरह आज भी वे संध्या समय टाउन क्लबसे टेनिस खेलकर लौटे। लौटनेपर अपने आफिसमें जाते ही उन्होंने टेबुलपर 'निर्भय'का एक नया अंक रखा पाया। देखते ही सभी

कामोंको छोड़कर, वे उसे पढ़नेमें लग गये। थोड़ी देर पढ़नेके बाद उनका ध्यान अग्र लेखके नीचे छपे हुए 'आवश्यक निवेदन' की ओर गया। उसे पढ़कर वे बहुत चिन्तित हुए। चिन्तासे इनका खिला हुआ मुख-मण्डल मुर्झा गया। इसी समय कलावती चायका प्याला लेकर आई। पहले तो उन्होंने चाय पीनेसे अनिच्छा प्रगट की; पर कलावतीके बहुत आग्रह करनेपर उन्हें चाय पीनेके लिये बाध्य होना पड़ा। चाय पीनेके पश्चात् वे उसे 'निर्भय'में छपे हुए "आवश्यक निवेदन"को पढ़कर सुनाने लगे। वह इस प्रकार थाः—

"आवश्यक निवेदन।"

'निर्भय' के यशस्वी सम्पादक तथा संस्थापक पं० दीनानाथजीकी जेल-यात्रासे हमें कई कठिनाइयोंका सामना करना पड़ रहा है। पंडितजी सरीखे कर्मवीर तथा धुनके पक्के व्यक्तिके लिये इस कठिन समयमें भी सभी बातोंका प्रबन्ध कर लेना कोई कठिन कार्य न था। पर अपने दुर्बल कन्धोंपर 'निर्भय' का सारा बोझ उठा लेनेके कारण, हमें पंडितजीकी अनुपस्थिति घोर रूपसे पीड़ित कर रही है। विशेषकर आर्थिक कठिनाइयोंको देखते हुए, हमें सन्देह हो रहा है कि जेलसे लौटने समयतक हम पंडितजीके इस धरोहरकी रक्षा कर सकेंगे या नहीं। अतएव हम 'निर्भय' के प्रेमियों तथा विशेषकर पंडितजीके शुभ चिन्तकोंसे सादर निवेदन करना चाहते हैं कि इस अवसरपर किसी न किसी रूपमें हमारी सहायताकर, पंडितजीके प्रति अपने कर्त्तव्यका पालन करें। विपत्ति ही मनुष्योंकी कसौटी होती है। ऐसे ही अवसरपर अपने

और परायेकी जांच की जाती है। अतएव मुझे पूर्ण आशा तथा विश्वास है कि जिस प्रकार अपने कर्त्तव्य पालनके लिये पंडितजी जेलके कष्टोंको सह रहे हैं, उसी तरह सहृदय सज्जनगण इस अवसरपर हमारी सहायताकर अपने कर्त्तव्यका पालन करेंगे; जिससे पंडितजीकी कीर्ति उनकी अनुपस्थितिमें किसी भी प्रकार रक्षित रह सके और लौटनेपर गर्वके साथ हमलोग उनका स्वागत कर सकें।

निवेदक—

स्थानापन्न सम्पादक।

'आवश्यक निवेदन' का पढ़ना समाप्त करते हुए पं० उमाशंकर बोले—"क्या इस समय 'निर्भय' के प्रति हम लोगोंका कोई कर्त्तव्य नहीं है ?"

कुछ रुकती हुई कलावती बोली—"अवश्य ही इस समय हमलोगोंको इस पत्रकी गुप्त रूपसे आर्थिक सहायता करनी चाहिये।"

पं० उमाशंकर—"क्या इसीको तुम यथेष्ट समझती हो ?"

कलावती—"इससे अधिक हमलोग और कर ही क्या सकते हैं ?"

आश्चर्यका भाव दिखलाते हुए पं० उमाशंकर बोले—"कर क्यों नहीं सकते ? जो हमें प्राणोंसे भी अधिक प्यारा है, उसके लिये जीवन अर्पण कर देना कौनसी बड़ी बात है ?"

कलावती—"मैं भी तो कहती हूं कि इस पत्रको यथाशक्ति भरपूर सहायता दी जाय।"

पं० उमाशंकर—"पर तुम तो केवल आर्थिक सहायताकी बात कर रही हो?"

कलावती—"इसके सिवा हम लोग और दूसरी सहायंता किस प्रकार कर सकते हैं?"

पं० उमाशंकर—"फिर वही बात? क्या उसके लिये हम अपना जीवन अर्पण नहीं कर सकते?"

कलावती—"आपकी इन बातोंका मतलब समझनेमें मैं असमर्थ हूं।"

आवेशके साथ पं० उमाशंकर बोले—"अर्थ साफ है और वह यह है कि इस समय हमें 'निर्भय' की तन मन धनसे सहायता करनी चाहिये। केवल आर्थिक सहायतासे काम नहीं चल सकता।"

आश्चर्यके साथ कलावती बोली—"अपनी बातोंको जरा और स्पष्ट कीजिये।"

उमाशंकर—"मेरी बातें बिलकुल स्पष्ट हैं। मैं अपने मित्रके पदपर काम करना चाहता हूं।"

कलावती—"ऐसा आप किस प्रकार कर सकते हैं?"

पं० उमाशंकर—"इसमें अड़चन ही क्या है?"

कलावती—"कोई डिप्टी मजिस्ट्रेट 'निर्भय' जैसे गर्म पत्रका सम्पादन किस प्रकार कर सकता है?"

जरा मुस्कुराते हुए पं० उमाशंकर बोले—"क्या ईश्वरने मुझे जन्मसे ही डिप्टी कलक्टर बनाया है ?"

कलावती—"यदि जन्मसे नहीं, तो कर्मसे तो आप डिप्टी कलक्टर अवश्य हैं।"

पं० उमाशंकर—"पर इससे अलग होना कौनसी बड़ी बात है ?"

कलावती—"यह किस प्रकार ?"

पं० उमाशंकर—"इस्तिफा देकर।"

कलावती—"क्या आप इस्तिफा देंगे ?"

पं० उमाशंकर—"अवश्य।"

इन बातोंको सुनकर कलावती चौंकती हुई कुछ बोलने लगी। पर एकाएक उसका मुंह बन्द हो गया। लाख चेष्टा करने-पर भी वह कुछ बोल न सकी।

उसकी यह अवस्था देखकर पं० उमाशंकर उसकी बांह पकड़ते हुए बोले—"क्या इतने हीमें चेहरा उतर गया ? जरा अपनी बहन सरस्वतीकी अवस्थाका विचार करो, जिसका पति उसे अनाथ छोड़कर, अपने कर्त्तव्यका पालन करनेके लिये जेलकी चहारदिवारीके अन्दर बन्द है। वह भी स्त्री है, भगवानने उसका भी हृदय कोमल बनाया है। फिर तुम मेरी इस्तिफाकी बात सुनकर सन्नाटेमें क्यों आ गयी ?"

कलावती—"आपको कुछ कहनेमें मैं असमर्थ हूं। कोई भी आवेशपूर्ण कार्य अच्छा नहीं होता। क्षणिक आवेशमें आकर

अपने तथा अपने बच्चोंके भविष्यको बिगाड़ना बुद्धिमानीका काम कभी नहीं कहला सकता है। आप स्वयं सोचें। मैं क्या कहूं।"

पं० उमाशंकर—"तुम स्वार्थका चश्मा उतारकर, इस बातपर फिरसे विचार करो।"

कलावती—"मैं स्वार्थकी वातें नहीं कर रही हूं। अभी आप जरा आवेशमें हैं, इसी कारण मेरी उचित बातोंको स्वार्थपूर्ण समझ रहे हैं।"

पं० उमाशंकर—"तुम्हें यह कैसे पता लगा कि इस्तिफा देनेका मेरा विचार आवेशपूर्ण है ?"

कलावती—"आपने 'निर्भय'में अभी 'आवश्यक निवेदन' पढ़ा और इसी समय इस्तिफा देनेके लिये तैयार हो गये। फिर इसे आवेशपूर्ण विचारके सिवा और क्या कहा जा सकता है?"

पं० उमाशंकर—"पर मैं कहता हूं कि मेरे निश्चयके प्रति तुम्हारा यह विचार ही आवेशपूर्ण है।"

कलावती—"यह कैसे ?"

पं० उमाशंकर—"भला, तुम्हें यह कैसे पता लगा कि इस्तिफा देनेका निश्चय मैंने अभी 'निर्भय' का निवेदन पढ़नेपर किया है ?"

कलावती—"आपने तो पहले कभी इसका जिक्र नहीं किया था।"

पं० उमाशंकर—"अभी तक इस सम्बन्धमें मैंने कोई अन्तिम निश्चय नहीं किया था। मेरा मन दुविधामें पड़ा हुआ था। इसी कारण मैं सदैव चञ्चल तथा चिन्तित रहा करता

था। पर 'निर्भय' का निवेदन पढ़नेके बाद मैंने अपना यह अन्तिम फैसला कर लिया है। ऐसी स्थितिमें मेरे फैसलेको आवेशपूर्ण बतलाना क्या मेरे साथ अन्याय करना नहीं है ?"

कलावती—"आपके साथ तर्क करनेकी क्षमता मैं नहीं रखती। वही कार्य कीजिये, जिसमें आपका कल्याण हो। मैं तो आपकी अर्द्धाङ्गिनी हूं। आपके सुख दुःखकी संगिनी हूँ। अतएव आपके कल्याणमें ही मेरा भी कल्याण है। पर क्या आप समझते हैं कि आपके इस्तिफाका समाचार सुनकर पण्डित दीनानाथजी दुःखित न होंगे ?"

पं० उमाशंकर—"दीनानाथ मूर्ख नहीं, बुद्धिमान है। सांसारिक कार्योंका उसका अध्ययन विशाल है। जिस पाठको उसने स्वयं मुझे पढ़ाया, उसीके लिये वह खेद किस प्रकार कर सकता है ? यदि मामलेके समय उसे दण्डित करना मेरा कर्त्तव्य था, तो एक सच्चे प्रेमीकी हैसियतसे उसकी अनुपस्थितिमें उसके कार्यको सम्हालना भी मेरा परम कर्त्तव्य है। इस बातमें तो विवादकी कोई गुंजाइस ही नहीं है। अतएव मेरे इस्तिफाका समाचार सुनकर वह दुःखित किस प्रकार हो सकता है ?"

कलावती चुप रही। इच्छा रहते हुए भी वह कुछ न बोल सकी। कमरेमें एक प्रकारका सन्नाटा छा गया और इस सन्नाटेसे लाभ उठाकर पं० उमाशंकर वहाँसे बाहर चले आये। बाहर आकर, गाड़ीको तैयार करा, वे उसी समय कलक्टर साहबकी कोठीकी ओर चल दिये।

उनका तेज घोड़ा दस मिनटके अन्दर ही कलक्टरसाहबकी कोठीपर पहुंच गया। उस समय वे अपनी मेमसे बातें कर रहे थे। एकाएक उनका कार्ड देखकर वे आश्चर्यमें पड़ गये। आश्चर्यके साथ वे स्वयं बाहर आकर पण्डितजीको अपने कमरेमें ले गये। उनके बैठनेपर उन्होंने मुस्कुराते हुए उनके असमय आनेका कारण पूछा। उत्तरमें पण्डितजी कुछ झेंपते हुए बोले—"मैं एक बहुत आवश्यक कार्यसे अभी आपके यहां आया हूं, जिसे सुनकर शायद आपको आश्चर्यमें पड़ना पड़ेगा।"

विस्मित भावसे कलक्टर साहबने पूछा—"वह कौन सा कार्य है?"

पं० उमाशंकर--"बतलानेका साहस तो नहीं होता है।"

कलक्टर साहब--"फिर भी बतलाइये,वह कौन सा कार्य है?"

पं० उमाशंकर—"मैं कल इस्तिफा देना चाहता हूं।"

चौंकते हुए कलक्टर साहबने कहा—"दिल्लगी करनेका यह तरीका आपने कब सीखा?"

गम्भीर भावसे पं० उमाशंकर बोले—"मैं आपसे मजाक नहीं कर रहा हूं। वस्तुतः मैं कल अपना इस्तिफा दाखिल करूँगा और इसी सम्बन्धमें बातें करनेके लिये अभी आपके पास आया हूं।"

कलक्टरसाहब—"इसका कारण?"

पं० उमाशंकर—"मेरे एक मित्र जेलकी सजा काट रहे हैं। मैं उनके बदले उनके पत्रका सम्पादन तथा संचालन करना चाहता हूं।"

विस्मित भावसे कलक्टरसाहब बोले—"क्या आप पं० दीनानाथ तथा उनके साप्ताहिक पत्र 'निर्भय'की बातें कर रहे हैं ?"

पं० उमाशंकर—"जी हाँ।"

कलक्टरसाहब—"उनके मामलेके सम्बन्धमें मैं आपकी वहुत तारीफें सुन चुका हूँ। परन्तु आपने गलती की। जब आपका उनके साथ इतना घनिष्ट सम्बन्ध है, तो आपको कानूनका उदार अर्थ लगाना चाहिये था।"

पं० उमाशंकर—"पर कर्त्तव्यने मुझे वैसा करनेसे रोका।"

कलक्टरसाहब—"कानूनका तो कई प्रकारका आशय होता है। यदि उनके मामलेमें आप उदार आशयसे काम लेतें, तो इसमें कोई हर्ज नहीं था।"

पं० उमाशंकर—"पर ऐसा करनेसे लोग मुझे कर्त्तव्य भ्रष्ट समझते।"

कलक्टरसाहब—"फिर आप उनके लिये इस्तिफा क्यों दे रहे हैं ?"

पं० उमाशंकर—"वही कर्त्तव्य-ज्ञान मुझे ऐसा करनेके लिये वाध्य कर रहा है।"

कलक्टरसाहब—"पर आप उनके बदले अपने खर्चसे योग्य सम्पादक रख सकते हैं। आपको तो किसी तरह काम निकालनेकी जरूरत है। इसके लिये इस्तिफा देनेको क्या आवश्यकता है ?"

पं० उमाशंकर—"किरायेकी मोटरसे घरका तांगा ही अच्छा

होता है तथा बाजारकी मिठाईसे घरका सत्तू ही स्वादिष्ट मालूम पड़ता है। अतएव किसी दूसरे योग्य-से-योग्य व्यक्तिके बदले मैं स्वयं काम करना उचित समझता हूं।"

कलक्टरसाहबने हँसते हुए कहा--"आप इस समय बहुत आवेशमें हैं। जरा ठंढे दिलसे इन बातोंको फिर सोचिये।"

पं० उमाशंकर—मैंने खूब सोच लिया है। मेरी बातें आवेश-पूर्ण नहीं हैं।"

कलक्टरसाहब—"क्या सचमुच आप ईस्तिफा देनेका विचार कर रहे हैं?"

पं० उमाशंकर—"जी हाँ।"

कलक्टरसाहब--"क्या केवल पं० दीनानाथके लिये?"

पं० उमाशंकर—उनके लिये नहीं; पर उनके मित्र होनेकी हैसियतसे अपने कर्त्तव्यके लिये।"

कलक्टरसाहब--"यदि ऐसी बात है, तो मैं गवर्नरसाहबसे लिखा-पढ़ीकर, एक सप्ताहके भीतर ही आपके मित्रको जेलसे मुक्त करा देता हूँ। आप धैर्य रखें।"

पं० उमाशंकर—"पर ऐसा करनेसे पं० दीनानाथका अपमान होगा। अकारण किसीका दयापात्र बनना उनके सिद्धान्तके विरुद्ध है। अतएव मैं किस तरह जान बूझकर उनका अपमान कराऊँ?"

कलक्टरसाहब--"आप फिर सोचें।"

पं० उमाशंकर—"मैं सैकड़ों बार सोच चुका हूँ।"

हँसकर उनके हाथमें एक सिगार देते हुए कलक्टरसाहब

बोले—"आपलोगोंकी मित्रता भी विचित्र ही है। उनसे आपका कितने दिनोंका परिचय है ?"

पं० उमाशंकर—"वे मेरे विद्यार्थी-जीवनके साथी हैं।"

कलक्टरसाहब—"मेरी समझमें आप उनको अपने प्राणोंसे भी अधिक प्यार करते हैं।"

पं० उमाशंकर—"अवश्य, आवश्यकता पड़नेपर मैं उनके लिये अपनी जान भी दे सकता हूं।"

कलक्टरसाहब—"आपका प्रेम धन्य है! मुझे भी विद्यार्थी अवस्थामें एक मित्र था, जिसे मैं प्राणोंसे भी अधिक प्यार करता था। पर पीछे मुझे उसके प्रेमसे निराश होना पड़ा। कुछ दिनोंके बाद मेरे पत्रोंका भी उत्तर देना उसके लिये एक बोझसा हो गया। पीछे मेरे प्रति उसकी बेपरवाही इतनी बढ़ी कि बुलानेपर भी मुझसे मुलाकात करना उसके लिये एक कठिन कार्य हो गया। अतएव आप प्रेमके जालमें फँसकर इस प्रकार अपने जीवनको मिट्टीमें न मिलावें। व्यक्तिगत दृष्टिसे आपके प्रति मेरी बड़ी अच्छी भावना है। इसीसे मैं आपको हठ छोड़नेके लिये इस प्रकार बाध्य कर रहा हूं। आपके इच्छानुसार मैं आपके मित्रकी हर प्रकार-से सहायता करनेके लिये तैयार हूं।"

पं० उमाशंकर—"आपकी कृपाके लिये मैं आपको हृदयसे धन्यवाद देता हूँ। पर पागल समझकर मुझे आप सदाके लिये भूल जांय। व्यक्तिगत रूपसे तो हमलोगोंका सम्बन्ध बना ही रहेगा। पर मुझे खेद है कि मेरा कर्त्तव्य मुझे अपने वर्त्तमान

पदसे सम्बन्ध विच्छेद करनेके लिये वाध्य करता है ।"

कलक्टरसाहब—"मुझे अफसोस है कि आप अपने हठको छोड़नेके लिये तैयार नहीं हैं । मैं आपसे एकबार फिर इस विषयपर विचार करनेका अनुरोध करता हूँ । आपका व्यक्तिगत प्रेम मुझे ऐसा करनेके लिये वाध्य करता है ।"

पं० उमाशंकर—"ईश्वरकी प्रेरणाके सामने किसीका कुछ वश नहीं चलता । आप मुझे क्षमा करें । मैं लाचार हूँ ।"

कलक्टरसाहब—"इस विषयपर मैं आपसे कल फिर बातें करूँगा । आप क्षणिक आवेशमें न पड़ें ।"

कलक्टरसाहबकी इन वातोंको सुनकर पं० उमाशंकर अपनी कोठीको लौट आये । रातभर उन्हें नींद न आई । भविष्यकी बातें सोचते सोचते वे करवटें वदलते रहे ।

चौदहवाँ अध्याय

पंडित दीनानाथके मामलेके बाद रामपुरमें खासा आन्दोलन मच गया। मामलेमें गवाहोंने खुली कचहरीमें विश्वास-घात किया था। उनके इस विश्वासघातके कारण लक्ष्मीनारायणके हृदयपर कितनी चोट लगी, यह बतलानेकी कोई आवश्यकता नहीं है। इस घटनाके कारण वे संघसे अपना सम्बन्ध तोड़ लेना चाहते थे। पर कई लोगोंके समझाने बुझानेपर उन्होंने अपने विचारको बदला। लाला हरिकिशुनने उन्हें सम्मति दी कि उस नाजुक स्थितिमें विश्वासघात करनेवालोंका सामाजिक बहिष्कार किया जाय। उन लोगोंके साथ हमलोग बोल-चाल, खान-पान तथा रोटी-बेटी आदिका सम्बन्ध न रखें। जो बाहरवाले उनके यहां सम्बन्ध करनेके लिये आवें, उन्हें समझा बुझाकर, हम-लोगोंको सम्बन्ध करनेसे रोकना चाहिये। ऐसी परिस्थिति उत्पन्न कर देनेपर, उन लोगोंको अवश्य ही अपने विश्वासघातका योग्य पुरस्कार मिल जायगा।

लाला हरिकिशुनके इस प्रस्तावको सभी लोगोंने पसन्द किया और इसीके अनुसार काम करनेका निश्चय सब लोगोंने एक स्वरसे किया। दूसरे ही दिन कुछ उत्साही लोगोंकी एक सभा की गयी, जिसमें रामशरण, चरणदास, बनारसीलाल तथा रामरूप पाण्डेके सामाजिक बहिष्कारका प्रस्ताव यथानियम पेश किया गया और सर्व सम्मतिसे पास हुआ।

इधर बनवारीके गुम होनेकी बात भी कोई कम महत्वकी न थी। लोगोंकी आत्माने कभी इस बातपर विश्वास नहीं किया था कि बनवारी मामलेमें धोखा देनेके लिये अकारण इस प्रकार गायब हो जायगा। पर मामलेके समाप्त होनेपर भी बनवारी-को न लौटते देखकर, लोगोंको और भी सन्देह होने लगा। समूचे ग्राममें इस बातकी चर्चा फैलने लगी कि रामकिशोर प्रसादने फिर बनवारीको कहीं बन्द कर रखा है।

बनवारीके गायब होनेके पश्चात उसके परिवारकी क्या दशा हुई, इस सम्बन्धमें कुछ कहना व्यर्थ है। एक तो बेचारोंको खानेके लिये अन्न नहीं, पहननेके लिये वस्त्र नहीं और तिसपर भगवानका यह प्रकोप ! करैलेमें नीमका संयोग। बेचारी चम्पाका शरीर चिन्ताके कारण इतना खिन्न हो गया कि वह पहचानी भी नहीं जाती। चमेलीका अधखिला चेहरा मुरझाकर असमय मुरझाई हुई कलीकी तरह सूख गया है। रोते रोते उन लोगोंकी आंखें सूज गयी हैं। हाय हाय करते करते उनका दम घुटने लगा है। इन दिनों न उनकी आंखोंमें नींद है और न हृदयमें शान्ति। भाग्यको कोसना तथा हृदयको पीटना ही उनका एक काम रह गया है। पर इससे लाभ ही क्या हो सकता है ?

पं० दीनानाथके मामलेसे छुटकारा पाकर, लक्ष्मीनारायणने भी बनवारीको ढूढ़नेकी बहुत चेष्टा की। पर उसका कोई पता न लग सका। उसके प्रायः सभी सम्बन्धियोंके यहां उसकी खोज की गयी। पर कुछ फल न हुआ। अतएव लक्ष्मीनारायणको अब इस

बातका पूरा विश्वास हो गया कि रामकिशोर बाबूने बनवारीके साथ अवश्य ही किसी प्रकारका विश्वासघात किया है और वे गुप्त-रूपसे उनके मकानकी निगरानी मजदूर संघके स्वयंसेवकों द्वारा रखने लगे। विशेषकर रातमें पूरी चौकसीके साथ स्वयंसेवक लोग निगरानी रखा करते हैं।

आज रात्रिके समय जगदेव इस कामके लिये भेजा गया है। वह भोजन करनेके उपरान्त रामकिशोर प्रसादके मकानके सामने एक बगीचेमें जाकर छिप रहा। उसे अपने कर्त्तव्यका पूरा ज्ञान था। अतएव बड़ी सावधानीके साथ वह रामकिशोर प्रसादके मकानकी ओर देखता रहा। लगभग एक बजे रात्रिके समय उसने तीन आदमियोंको उनके मकानसे निकलते देखा। अनुमानसे उसने उनलोगोंको चोर समझा। धीरे धीरे वे लोग उसी बागीचेमें आ गये और उनलोगोंका चेहरा भी साफ साफ दीख पड़ने लगा। दो आदमी एक बड़े बस्तेमें किसी चीजको ले जा रहे थे और तीसरेके हाथमें लोहेका कोई हथियार था। उन लोगोंको इस अवस्थामें देखकर, जगदेवको इनके चोर होनेमें कोई सन्देह न रहा। पर अकेले वह तीन आदमियोंके साथ छेड़छाड़ करनेका साहस न कर सका। अतएव वह कुछ दूर जाकर जोरसे चोर-चोर चिल्लाने लगा। उसके बहुत कोलाहल करनेपर कुछ लोग दौड़कर आने लगे। लोगोंको अपनी ओर आते देखकर वे तीनों आदमी बस्ता तथा हथियारको छोड़, चुपचाप जान लेकर वहांसे भागे। कई लोगोंने उनका पीछा भी किया। पर कोई फल न

हुआ। वे जानकी बाजी लगाकर भाग ही गये। उन लोगोंको पकड़नेमें असमर्थ होनेपर सब लोग उस चीज़के नज़दीक आये जिसे छोड़कर वे लोग भागे थे।

एक आदमीने उसी समय जाकर रामकिशोर प्रसादको भी यह खबर दे दी कि कई चोर उनके यहाँ चोरीकर, भागे जा रहे हैं। रास्तेमें हमलोगोंके द्वारा पीछा किये जानेपर वे खेतमें चीजोंको छोड़कर भागे जा रहे हैं। पर रामकिशोर प्रसादने उनकी बातोंको अनसुनी करते हुए उत्तर दिया कि हमारे यहाँ चोरी नहीं हुई है। चोरलोग किसी दूसरेका सामान लिये जाते होंगे। उनसे इस प्रकारका उत्तर पानेपर, सभी लोगोंने उत्सुकतावश उस बस्ताको खोलना आरम्भ किया। पर खोलते ही उन लोगोंके होश-हवाश उड़ गये। उसके भीतर एक लाश पाकर लोगोंको आश्चर्यमें पड़ जाना पड़ा। जगदेव अभीतक इन बातोंमें कोई दिलचस्पी नहीं ले रहा था। वह एक कोनेमें बैठकर, चुपचाप इन बातोंको देख रहा था। पर लाशका नाम सुनते ही उसके रोंगटे खड़े हो गये। अनिष्टकी आशंकासे उसका कलेजा धड़कने लगा। शीघ्र ही वह लाशके नजदीक जाकर उसे ध्यानपूर्वक देखने लगा। लाशको देखते ही उसे पता लग गया कि यह बनवारीकी ही लाश है। कई और लोगोंने भी उसकी बातका समर्थन किया। इस प्रकार एक आश्चर्यजनक रहस्य का उद्घाटन होते देखकर सभी कोई आश्चर्यमें पड़ गये। कुछ लोग तो व्यर्थके झमेलेमें पड़नेके भयसे उल्टे पैर वहांसे खिसकने लगे।

अब जगदेव बड़ी पेशोपेशमें पड़ा। इसी बातका पता

लगानेके लिये स्वयं-सेवक लोग कई दिनोंसे अपार परिश्रम कर रहे थे। अतएव जगदेव दो-तीन विश्वासी आदमियोंको लाशके पहरेपर छोड़कर, उसी समय लक्ष्मीनारायणको सभी बातोंकी खबर देनेके लिये चल पड़ा। उस समयतक काफी रात बीत चुकी थी। अतएव लक्ष्मीनारायण घोर निद्रामें सोये हुए थे। एकाएक इस दुखद समाचारको सुनकर वे बहुत दुःखी हुए। मामला संगीन था। अतएव उन्होंने लाला हरिकिशुनके साथ लाशके समीप जाना उचित समझा। इसके साथ ही बनवारीको स्त्रीको भी इस घटनाका समाचार देना आवश्यक था। अतएव जगदेवको बनवारीकी स्त्रीके यहां भेजकर, वे स्वयं लाला हरिकिशुनके मकानकी ओर चले।

वहां पहुंचनेपर उन्होंने उनसे सभी बातें कह सुनायी। इस रहस्यपूर्ण समाचारको सुनकर वे भी बड़े आश्चर्यमें पड़े और लक्ष्मी-नारायणके साथ जगदेव द्वारा बतलाये हुए स्थानकी ओर चले। वहाँ पहुंचनेपर उन लोगोंने सचमुच बनवारीकी लाशको पड़ा पाया।

खूनका मामला था। अतएव उन लोगोंने सबसे पहले थानेमें खबर देना उचित समझा। इसी विचारसे चार-पांच व्यक्तियोंको उस लाशकी निगरानीमें छोड़कर वे उल्टे पैर थानेकी ओर चले। दारोगासाहब भी उस समय सो रहे थे। बड़ी मुश्किलसे वे जगे। जागनेपर उन लोगोंकी बातें सुनकर चार-पांच कान्स-टेबलोंके साथ वे उसी समय घटनास्थलपर आ पहुँचे। वहाँ पहुँचकर वे सबसे पहले लोगोंकी गवाहियां लेने लगे। उस समय तक जगदेव भी वहीं लौट आया था। उसके साथ ही बनवारीकी

स्त्री तथा लड़की रोती-पीटती वहाँ पहुँच गयी। उन लोगोंका भयंकर क्रन्दन दर्शकोंके हृदयको भी विचलित कर रहा था। चम्पा बार बार अपने पतिके मृतक शरीरसे लिपट जानेकी चेष्टा करती थी। पर कई लोग बड़ी कठिनाईके साथ उसे वैसा करनेसे रोक रहे थे। सचमुच वह बड़ा ही दर्दनाक दृश्य था।

खैर, सबसे पहले जगदेवकी गवाही ली गयी। अपना नोट बुक खोलते हुए दारोगासाहबने उससे पूछा—"तुम इस बागीचेमें किस कामके लिये आये थे?"

जगदेव—"मेरा यहां कोई काम न था?"

दारोगासाहब—"फिर तुम यहाँ आये किस प्रकार?"

जगदेव—"मैं रखवाली करनेके लिये अपने खेत जा रहा था। पर इन बातोंको देखकर मुझे रास्तेमें ही रुक जाना पड़ा।"

दारोगासाहब-"क्या तुम रोज रखवालीके लिये जाया करते हो?"

जगदेव—"रोज तो नहीं जाता। पर जिस दिन मेरे पिता या बड़े भाई नहीं जाते, उस दिन मुझको ही जाना पड़ता है।"

दारोगासाहब—"बागीचेमें तुमने क्या देखा?"

जगदेव—"कई आदमी इस लाशको बस्तेमें बन्दकर चोरकी तरह ले जा रहे थे।"

दारोगासाहब—"वे लोग कितने आदमी थे?"

जगदेव—"केवल तीन।"

दारोगा०—"अन्धकारमें तुम्हें उन लोगोंकी संख्याका किस प्रकार पता लगा?"

जगदेव—"वे लोग मेरे समीप आ गये थे।"

दारोगा०—"क्या उन लोगोंने पहले तुमको नहीं देखा ?"

जगदेव—"मैं एक पेड़की बगलमें छिपा था। अतएव उन लोगोंको शायद मेरा कुछ भी पता न लग सका।

दारोगा०—"वे लोग किधरसे आ रहे थे ?"

जगदेव—"रामकिशोर प्रसादके मकानकी ओरसे।

दारोगा०—"क्या तुम उन लोगोंको पहचान सकते हो ?"

जगदेव—"नहीं।"

दारोगा०—"कोलाहल करते समय क्या उन लोगोंने तुम्हें मारनेकी धमकी न दी थी ?"

जगदेव—"नहीं, उस समय वे मुझसे कुछ आगे बढ़ गये थे ?"

दारोगा०—"क्या तुमने उन लोगोंको रामकिशोर प्रसादके मकानसे निकलते देखा था ?"

जगदेव—"नहीं।"

दारोगा०—"फिर तुम यह कैसे जान गये कि यह लाश रामकिशोर प्रसादके यहाँसे निकली है ?"

जगदेव—"मैंने ऐसा तो नहीं कहा है। पर उन लोगोंको मैंने रामकिशोर प्रसादके मकानकी ओरसे आते अवश्य देखा।"

दारोगा०—"कोलाहल करनेपर वे लोग किस ओर भागे ?"

जगदेव—"जिधर जिसको रास्ता मिला, उसी तरफ वह भाग गया।"

दारोगा०—"वे लोग जवान या बुड्ढे थे ?"

जगदेव—"यह मैं नहीं बतला सकता।"

दारोगा०—"क्या तुमको यह पहले ही पता लग गया कि वे लोग लाश लिये जा रहे हैं?"

जगदेव—"नहीं, मैंने उन्हें पहले चोर समझा।"

दारोगा०—लाशके बस्तेको किसने खोला?"

जगदेव—"यह मैं न देख सका। उस समय मैं एक किनारेमें बैठा था।"

दारोगा०—"लाशको देखनेपर तुमने क्या किया?"

जगदेव—"निगरानीके लिये दो-तीन आदमियोंको छोड़कर मैं इस बातकी खबर देने लक्ष्मीनारायण बाबूके यहाँ चला गया।"

दारोगा—"तुमने उन्हें खबर देना आवश्यक क्यों समझा?"

जगदेव—"क्योंकि वे बनवारीके मित्र और शुभचिन्तक हैं।"

इस प्रकार जगदेवका बयान लेनेके पश्चात और भी कई आदमियोंकी गवाहियाँ ली गयीं, जिनमें सभी लोगों ने एक दूसरेकी बातका समर्थन किया। गवाहियाँ लेते लेते भोर हो गया। अतएव दारोगासाहबने उसी समय लाशको डाक्टरी-परीक्षाके लिये कानपुर भेज दिया। लाशके चले जानेके बाद, वे इस सम्बन्धमें अन्य प्रमाणोंके संग्रह करनेकी चेष्टा करने लगे।

डाक्टरी-परीक्षाके बाद बनवारीका दाह-संस्कार कानपुरमें ही करनेके विचारसे लक्ष्मीनारायणने उसकी स्त्री तथा परिवारके अन्य लोगों के साथ कानपुरके लिये प्रस्थान किया।

—

पन्द्रहवाँ अध्याय

आज दारोगासाहबका यह रूप देखकर रामकिशोर बाबू आश्चर्यमें पड़ गये। जिसके लिये उन्होंने इतनी परेशानी तथा बदनामी उठायी, वही अवसर आनेपर इस तरह आंखें फेर लेगा, इसका अनुमान उन्होंने स्वप्नमें भी नहीं किया था। बनवारी-के प्रकरणमें जो कुछ हुआ, वह तो दारोगासाहबके अपमानका बदला चुकानेके लिये ही किया गया था; मजदूर संघके द्वारा दी गयी चुनौतीके उत्तरमें दारोगासाहबकी ओरसे उन्होंने बनवारीके साथ इस प्रकार अमानुषिक व्यवहार किया था। नहीं तो बनवारी भला उनका किस जन्मका शत्रु था? वह तो उनके पैरकी धूलिको सदा अपने मस्तकपर चढ़ानेवाला, उनकी आज्ञापर मर मिटनेवाला, उनका सेवक मात्र था। पर दारोगासाहबको खुश करनेके लिये उनके हृदयपर अपना अधिकार जमानेके लिये तथा उनके अप-मानका बदला चुकानेके लिये ही तो उन्होंने अपने माथेपर बन-वारीके अत्याचारका यह कलंक लगाया। उसीका यह फल? और वह भी दारोगासाहबके हाथोंसे? आखिर बनवारीका खून भी तो दारोगासाहबकी सम्मतिसे ही किया गया था; उसमें उनका पूरा जोर था।

आज उसी खूनके अपराधसे उन्हें बचानेके लिये दारोगा-साहब उनसे दस हजारकी थैली मांग रहे हैं। लज्जासे खुद तो

नहीं मांगा, पर अपने जमादारके द्वारा यह अभिप्राय प्रकट किया। उनका यह अभिप्राय जानकर रामकिशोर बाबू दंग रह गये। आश्चर्य तथा विस्मयने उन्हें परेशान कर दिया। आश्चर्य-की बात भी थी। एक सुखी परिवारमें जन्म लेकर वे लाड़-प्यारसे पले थे। यथेष्ट धन-वैभवके स्वामी रहनेके कारण वे आसानीके साथ अपनी प्रत्येक अभिलाषाकी पूर्ति कर लिया करते थे। अतएव दुनियाकी प्रवृत्तिका,उन्हें वास्तविक ज्ञान नहीं था। संसार-की विचित्रताके सामने आनेका उन्हें कभी अवसर ही नहीं मिला था। अतएव दारोगासाहबका यह रूप देखकर वे चकाचौंधमें पड़ गये।

आजकल संसारकी जो प्रगति है, दुनिया जिस दिशाकी ओर तेजीके साथ अग्रसर हो रही है, उसे ध्यानमें रखते हुए तो दारोगासाहबका यह कार्य बहुत आश्चर्यपूर्ण नहीं दीख पड़ता। अपने मतलबके लिये किसीको तलवारकी धारपर खड़ा कर देना तथा उसके सङ्कटमें पड़ जानेपर उसे सहायता देनेके बदले, उल्टे उसकी संकटापूर्ण स्थितिसे लाभ उठाना तो आजकल इस संसारके लिये साधारणसी बात है। व्यक्तिगत प्रश्नोंका तो कहना ही क्या, अन्त-र्राष्ट्रीय राजनैतिक चालोंमें भी हमें इसी मनोवृत्तिका पता लगता है। चीनके प्रति अङ्गरेजोंकी वर्तमान राजनीतिको हम किस दृष्टिसे देखें? और तो और, हिन्दू-मुस्लिम समस्याके प्रति अंग्रेजोंकी वर्तमान चालसे हमें और किस मनोवृत्तिका पता लगता है? पर बेचारे रामकिशोर बाबूको संसारकी इस स्थितिका पता

ही क्या था ? अतएव दारोगासाहबके इस प्रस्तावसे उनका आश्चर्यमें पड़ जाना स्वाभाविक ही है।

जमादारके लौटनेपर, रामकिशोर प्रसादने दारोगासाहबको बुलानेके लिये एक आदमी भेजा। पर कई कामोंका बहाना बनाकर वे न आये। यह पहला ही अवसर था, जब रामकिशोर बाबूकी बुलाहटका उन्होंने इस प्रकार अपमान किया हो। उनके इस व्यवहारसे भी बाबूसाहबको बड़ी चोट लगी। दारोगासाहबके प्रति उनके हृदयमें घृणाका भाव प्रज्वलित हो उठा। पर इस समय वे करें क्या ? खूनके मामलेको लेकर उनकी प्रतिष्ठा दारोगा-साहबकी कृपापर ही निर्भर करती है। संध्याके समय तहकी-कातमें पुलिस सुपरिन्टेण्डेन्ट साहब आनेवाले थे। उनके आनेके पहले ही दारोगासाहबके साथ सभी बातोंका निश्चय कर लेना आवश्यक था। अतएव कोई दूसरा रास्ता न देखकर वे स्वयं दारोगासाहबसे मिलनेके लिये चले।

उन्हें देखते ही दारोगासाहबने बड़े आदर सत्कारसे उनको बिठलाया। थोड़ी देरतक तो कमरेमें सन्नाटा रहा। पर शीघ्र ही सन्नाटेको भंग करते हुए दारोगासाहब बोले—"बाबूसाहब ! बनवारीका मामला तो बड़ा संगीन हो रहा है।"

रामकिशोर प्रसाद—"यह सब तो आपके अखतियारकी बात है। आपके हुक्मसे ही तो सब कुछ किया गया है।"

दारोगासाहब—"इस बातको मैं स्वीकार करता हूँ। पर मैंने यह कभी नहीं सोचा था कि मामला इस प्रकार खुल

जायगा। आप लोगोंकी गलतीसे तो अब इसका रूप ही बदल गया।"

रामकिशोर प्रसाद—"फिर उस गलतीको सम्हालना क्या आपका काम नहीं है?"

दारोगासाहब—"अपनी शक्तिभर मैं आपकी सेवा करनेके लिये तैयार हूं।"

रामकिशोर प्रसाद—"फिर आपने इस सम्बन्धमें जमादार साहबके द्वारा क्या कहला भेजा था?"

दारोगासाहब—"बाबूसाहब! आप तो रईस आदमी ठहरे। हम लोगोंकी सभी बातें जानते ही हैं। आपसे छिपा ही क्या है?"

रामकिशोर प्रसाद—"साफ साफ बातें क्यों नहीं करते?"

दारोगासाहब—"अक्लमन्दोंके लिये इशारा काफी है। आपसे इस सम्बन्धमें बातें करनेमें मुझे बड़ा संकोच हो रहा है।"

रामकिशोर प्रसाद—"किस सम्बन्धमें?"

दारोगासाहब—"लेन-देनके सम्बन्धमें।"

रामकिशोर प्रसाद—"यह आपकी मेहरबानी है। किसीको जंगपर चढ़ाकर, उसे बेवकूफ बनाना आप लोगोंके लिये बड़ा ही आसान काम है।"

दारोगासाहब—"अब आप जो समझें?"

रामकिशोर प्रसाद कुछ गर्माते हुए बोले—"समझूंगा क्या खाक? आप लोग हत्यारे हैं।"

दारोगासाहब—"आवेशमें आकर अब आप जो कहें। पर आपको इस बातपर विचार करना चाहिये कि हमारे मातहत लोग भी किसी आशासे ही काम करते हैं ? क्या दस-बीस रुपये माहवारीसे किसीका गुजारा चल सकता है ? यदि उन लोगोंको कुछ न दिया जाय, तो बात-की-बातमें अफसरोंके यहां वे लोग मेरी शिकायत कर देंगे। इसके साथ ही ऐसे मामलोंमें हमलोगोंको अपने अफसरोंको भी खुश करना पड़ता है। क्या किया जाय बाबूसाहब ? इस समय मेरी अवस्था ठीक धोबीके कुत्तेकी तरह है, जो न घरका और न घाटका रहता है। अफसर लोग भी तो जान नहीं छोड़ते।"

रामकिशोर प्रसाद—"आप मेरे साथ इस प्रकारकी बातें कर रहे हैं, इसका मुझे आश्चर्य्य है।"

दारोगासाहब—"मैं क्या करूँ बाबूसाहब ! मैं तो बड़ी विकट स्थितिमें पड़ा हूं। एक ओर आप हैं, और दूसरी ओर हैं मेरे अफसर तथा मातहत लोग। मैं तो इन दोनों दलोंके बीच त्रिशंकूकी तरह लटक रहा हूं।"

रामकिशोर प्रसाद—"पर बनवारीका मामला तो केवल आपके कारण उठा है। मुझे तो बेचारेसे कोई निजी बैर भी न था।"

दारोगासाहब—"आपका कहना ठीक है। पर मैंने तो पहले ही अर्ज कर दिया कि आपकी गलतीसे मामलेका रूप ही बदल गया है।"

कुछ झुंझलाते हुए रामकिशोर प्रसाद बोले—"जी हां,मुझसे गलती तो अवश्य हुई। यदि ऐसा न होता, तो मुझे आपके पीछे फिरनेकी आवश्यकता ही क्यों पड़ती ?"

दारोगासाहब—"अब आप जैसा समझें। पर मैं तो अपनी जानसे आपकी उसी प्रकार सेवा करनेके लिये तैयार हूं।"

रामकिशोर प्रसाद—"व्यर्थकी बात न कर, कामकी बात कीजिये और यह बतलाइये कि मामलेके सम्बन्धमें अब क्या करना पड़ेगा ?"

दारोगासाहब—"मामलेकी आप कोई चिन्ता न करें। मैं सब ठीक कर लूंगा। पर आपको इस मौकेपर अब थोड़ा बहुत खर्च अवश्य करना पड़ेगा।"

रामकिशोर प्रसाद—"कितने रुपयेसे काम चल सकता है ?"

दारोगासाहब—"मैंने तो जमादारके द्वारा आपको इस बातकी खबर दे दी थी।"

रामकिशोर प्रसाद—"क्या दस हजार रुपया ?"

दारोगासाहब—"जी हां।"

रामकिशोर प्रसाद—"पर इतनी बड़ी रकमकी बात तो मैंने कहीं सुनी भी न थी !"

दारोगासाहब—"आप इस स्थानके प्रसिद्ध रईस हैं। आप जैसे रईसोंके मामलेके भरोसे ही तो हमारे महकमेके आदमी उधार खाये बैठे रहते हैं। आप यदि इतना भी न देंगे, तो फिर उनका गुजारा किस प्रकार चल सकता है ?"

रामकिशोर प्रसाद—"दारोगासाहब, जरा आंखमें पानी भी रखा कीजिये। इस प्रकार बेजा बातें कर, क्यों अपनेको कलंकित कर रहे हैं ?"

दारोगासाहब—"हुजूर, खेत खाय गधा और मारा जाय जोलहा—वाला मसला अभी मेरे सामने पेश है। आप सच जानिये, इन रुपयोंमें मुझे एक पैसा भी न मिलेगा। पर आपके सामने मुझे व्यर्थ ही शर्मिन्दा होना पड़ता है। आपका भी कहना ठीक है। पर क्या किया जाय ? मजबूरी है।"

रामकिशोर प्रसाद—"ईश्वरके लिये मोल-जोलके झमेलेमें मुझे डालकर अधिक परेशान न करें। क्या आप पहली सभी बातें भूल गये ?"

दारोगासाहब—"आप यह क्या कहते हैं ? क्या आपकी कृपा मैं इस जन्ममें भूल सकता हूं ? इसकी स्मृति तो मुझे आजन्म बनी रहेगी। पर रुपये पैसेका सवाल ऐसा ही बुरा होता है।"

रामकिशोर प्रसाद—"खैर, ठीक ठीक बतलाइये कि मुझे कितना रुपया देना पड़ेगा ?"

दारोगासाहब—"बाबूसाहब ! ईश्वरकी सौगन्ध खाकर कहता हूँ कि दस हजारसे कमपर कोई भी तैयार न होगा। फिर भी आप आठ हजारही दें। मैं हाथ पैर जोड़कर किसी तरह उन लोगोंको मना लूंगा।"

रामकिशोर प्रसाद—"आपकी इस चालको देखकर मैं पर-

शान हो रहा हूँ। आखिर, निर्दोष बनवारीके साथ इस प्रकार अत्याचार करनेका तो मुझे कोई फल भी मिलना चाहिये। ईश्वर भी बड़ा न्यायी है। लोग ठीक ही कहते हैं कि यह कलियुग नहीं करयुग है। मनुष्य यहाँ एक हाथसे करता है और दूसरे हाथसे पाता है। आपकी इज्जत रखनेके लिये मैंने बनवारीके साथ इस प्रकार अमानुषिक व्यवहार किया और अब आप मेरे साथ हत्यारे जैसा व्यवहार कर रहे ।"

दारोगासाहब—"आप जो कुछ कहें, सब ठीक है। कसूर मेरा ही है। पर अब तो आपको ही परेशान होना पड़ेगा।"

रामकिशोर प्रसाद—"खैर, आप अपना अन्तिम निश्चय सुना दें। आपके साथ अधिक बकवाद करनेकी शक्ति मुझमें नहीं है।"

दारोगासाहब—"मैं क्या सुनाऊँ ? अब कमी बेशी करनेकी कोई गुंजाइश नहीं है।"

रामकिशोर प्रसाद—"क्या आठ हजारसे कम नहीं हो सकता है ?"

दारोगासाहब—"इससे कम किस प्रकार होगा ?"

रामकिशोर प्रसाद कुछ उत्तेजित होकर बोले—"खैर, इतना देनेकी शक्ति तो मुझमें नहीं है। आप जैसा समझें, रिपोर्ट भेज दें। मैंने खून किया है। अतएव उसके प्रायश्चित्त स्वरूप मैं फांसीपर चढ़ना ही उचित समझता हूं। आप मुझे फांसी दिला दें। मैं इसके लिये तैयार हूं।"

दारोगासाहब कुछ उदास होकर बोले---"लीजिये, आपके लिये मैं उन लोगोंकी गालीगलौज भी सह लूंगा। यदि इन्सपेक्टर-साहब बहुत रंज हो जायंगे, तो कुछ दिनोंके लिये मेरी तरक्की रोक देंगे। और क्या होगा? आप केवल पांच हजार ही दे दें। मैं उन लोगोंसे किसी प्रकार निपट लूंगा। पर आपके सिरकी सौगन्ध खाकर कहता हूं,इसमें छोड़छाड़की कोई गुंजाइश नहीं है। अतएव आप फिर किसी प्रकारका आग्रह न करें।"

रामकिशोर प्रसाद—"खैर, यह आपकी मेहरबानी है।"

दारोगासाहब कुछ लज्जित होकर बोले—"मेहरबानी क्या है, बाबूसाहब! मजबूरी जरूर है। हमलोगोंका महकमा ही इसी प्रकारका है। क्या किया जाय? यदि निकलनेका कोई रास्ता रहता, तो मैं आपके साथ रुपये पैसेकी बात कभी न करता।"

रामकिशोर प्रसाद—"पर अभी तो पाँच हजारका बन्दोबस्त नहीं हो सकता है?"

दारोगासाहब—"शामको सुपरिनटेनडेन्टसाहब आनेवाले हैं, अतएव उनके आनेके पहले ही आपको सभी काम खतम कर देना चाहिये। नहीं तो पीछे फिर रिपोर्ट नहीं बदली जा सकती है।"

रामकिशोर प्रसाद—"क्या उनके आनेके पहिले रिपोर्ट तैयार हो जाना चाहिये?"

दारोगासाहब—"जी हाँ।"

रामकिशोर प्रसाद—"पर उस समयतक तो रुपयेका प्रबन्ध

होना किसी प्रकार सम्भव नहीं है। क्या आप रुपया पीछे नहीं ले सकते हैं ?"

दारोगासाहब—"हुजूर, मेरा रुपया रहता, तो कौनसी बात थी ? पीछे ही ले लेता। पर इसमें तो मेरा एक पैसा भी नहीं है। पीछे देनेसे तो किसी तरह काम नहीं चल सकता है। दो-तीन घंटोंके भीतर आपको कोई-न-कोई प्रबन्ध करना ही पड़ेगा।"

रामकिशोर प्रसाद—"क्या आपके कहनेसे वे लोग नहीं मान सकते हैं ?"

दारोगासाहब—"ऐसा नहीं हो सकता। रुपये पैसेके मामलेमें मेरा क्या अपने बापका भी वे लोग विश्वास नहीं कर सकते हैं।"

रामकिशोर प्रसाद—"अभी मेरे पास कुल एक हजार रुपया है। अधिकका तो कोई बन्दोबस्त नहीं हो सकता है। आप कोई और उपाय सोचें।"

दारोगासाहब कुछ सोचकर जरा संकुचित भावसे बोले—"हुजूर, कोई उपाय तो नहीं है। पर आपका मामला है, इसलिये कोई-न-कोई रास्ता निकालना ही पड़ेगा।"

रामकिशोर प्रसाद—"वह कौनसा रास्ता है ?"

दारोगासाहब—"मुझे कहते कुछ संकोच हो रहा है।"

रामकिशोर प्रसाद—"संकोचकी कौनसी बात है। जब लेन-देनका किस्सा छिड़ ही गया, तो आप किसी बातमें संकोच क्यों करते हैं ?"

दारोगासाहब कुछ उदास होकर बोले---"लीजिये, आपके लिये मैं उन लोगोंकी गालीगलौज भी सह लूंगा। यदि इन्सपेक्टर-साहब बहुत रंज हो जायंगे, तो कुछ दिनोंके लिये मेरी तरक्की रोक देंगे। और क्या होगा ? आप केवल पांच हजार ही दे दें। मैं उन लोगोंसे किसी प्रकार निपट लूंगा। पर आपके सिरकी सौगन्ध खाकर कहता हूं,इसमें छोड़छाड़को कोई गुंजाइश नहीं है। अतएव आप फिर किसी प्रकारका आग्रह न करें।"

रामकिशोर प्रसाद—"खैर, यह आपकी मेहरबानी है।"

दारोगासाहब कुछ लज्जित होकर बोले—"मेहरबानी क्या है, बाबूसाहब ! मजबूरी जरूर है। हमलोगोंका महकमा ही इसी प्रकारका है। क्या किया जाय ? यदि निकलनेका कोई रास्ता रहता, तो मैं आपके साथ रुपये पैसेकी बात कभी न करता।"

रामकिशोर प्रसाद—"पर अभी तो पांच हजारका बन्दोबस्त नहीं हो सकता है ?"

दारोगासाहब—"शामको सुपरिनटेनडेन्टसाहब आनेवाले हैं, अतएव उनके आनेके पहले ही आपको सभी काम खतम कर देना चाहिये। नहीं तो पीछे फिर रिपोर्ट नहीं बदली जा सकती है।"

रामकिशोर प्रसाद—"क्या उनके आनेके पहिले रिपोर्ट तैयार हो जाना चाहिये ?"

दारोगासाहब—"जी हां।"

रामकिशोर प्रसाद—"पर उस समयतक तो रुपयेका प्रबन्ध

होना किसी प्रकार सम्भव नहीं है। क्या आप रुपया पीछे नहीं ले सकते हैं?"

दारोगासाहब—"हुजूर, मेरा रुपया रहता, तो कौनसी बात थी? पीछे ही ले लेता। पर इसमें तो मेरा एक पैसा भी नहीं है। पीछे देनेसे तो किसी तरह काम नहीं चल सकता है। दो-तीन घंटोंके भीतर आपको कोई-न-कोई प्रबन्ध करना ही पड़ेगा।"

रामकिशोर प्रसाद—"क्या आपके कहनेसे वे लोग नहीं मान सकते हैं?"

दारोगासाहब—"ऐसा नहीं हो सकता। रुपये पैसेके मामलेमें मेरा क्या अपने बापका भी वे लोग विश्वास नहीं कर सकते हैं।"

रामकिशोर प्रसाद—"अभी मेरे पास कुल एक हजार रुपया है। अधिकका तो कोई बन्दोबस्त नहीं हो सकता है। आप कोई और उपाय सोचें।"

दारोगासाहब कुछ सोचकर जरा संकुचित भावसे बोले—"हुजूर, कोई उपाय तो नहीं है। पर आपका मामला है, इसलिये कोई-न-कोई रास्ता निकालना ही पड़ेगा।"

रामकिशोर प्रसाद—"वह कौनसा रास्ता है?"

दारोगासाहब—"मुझे कहते कुछ संकोच हो रहा है।"

रामकिशोर प्रसाद—"संकोचकी कौनसी बात है। जब लेन-देनका किस्सा छिड़ ही गया, तो आप किसी बातमें संकोच क्यों करते हैं?"

दारोगासाहब—"आप मेरे सालेके नामसे चार हजारका हैन्डनोट लिख दें और एक हजार रुपया तुरत जाकर भेज दें। क्योंकि रिपोर्ट आदि प्रस्तुत करनेमें भी कुछ समय लगेगा।"

रामकिशोर प्रसाद—"क्या हैन्डनोट लिखनेके सिवा और कोई दूसरा रास्ता नहीं है ?"

सिर नीचा करते हुए दारोगासाहब बोले—"यह तो आप सोचें। यदि कुल नकद दे दें, तो और भी अच्छी बात है।"

रामकिशोर प्रसाद—"नकद तो नहीं दे सकता।"

दारोगासाहब—"फिर हैन्डनोट लिखनेके सिवा और दूसरा रास्ता ही क्या है ?"

अन्तमें कोई दूसरा उपाय न देखकर रामकिशोर प्रसाद दारोगासाहबके सालेके नामसे चार हजारका हैन्डनोट लिखनेके लिये बाध्य हुए। इनके जीवनमें हैन्डनोट लिखनेका यह पहला ही अवसर था। हैन्डनोट लिखनेके पश्चात मकान जाकर उन्होंने एक हजार रुपया दारोगासाहबको भेज दिया। रुपया पाकर वे किसी प्रकार शान्त हुए।

दारोगासाहबके पास रुपया भेजनेके बाद रामकिशोर प्रसाद चुपचाप जाकर अपने कमरेमें सो रहे। लज्जा तथा दुःखके कारण वे किसीके साथ बात भी करना नहीं चाहते थे। दारोगासाहबके बर्तावने उनके मनमें एक प्रकारका वैराग्य उत्पन्न कर दिया था। संसारके पतनकी तीव्र गतिको देखकर वे विस्मित हो रहे थे।

सोलहवां अध्याय

जिस प्रकार वायुके वेगको, नदीकी तरङ्गको, फूलके सुगन्धको, लेखककी लेखनीको तथा कविके उन्मादको कोई रोक नहीं सकता, उसी तरह प्रेमीके प्रेमको तथा ज्ञानीके कर्त्तव्य-ज्ञानको रोकनेकी शक्ति किसीमें नहीं है। कौन जानता था कि पं० दीनानाथका प्रेम पं० उमाशंकरके जीवनमें इस प्रकार परिवर्तन करनेमें समर्थ होगा? एक प्रथम श्रेणीके डिप्टी मजिष्ट्रेटका अपने पदको त्यागकर, एक पत्रके सम्पादकत्व ग्रहण करनेकी बातको आजतक किसीने सुना भी न था। पर सुननेको कौन कहे, कानपुरके लोगोंने प्रत्यक्ष रूपसे इसी दृश्यको अपनी आंखों आश्चर्यके साथ देखा। आश्चर्यकी बात भी थी। भला, जिस पदकी प्राप्तिके लिये हमारे होनहार नवयुवकगण अपनी आशापूर्ण प्रतिभा, वंशानुगत प्रतिष्ठा तथा ईश्वरप्रदत्त आत्ममर्यादाको तिलांजलि देनेमें जरा भी नहीं हिचकते, उसी पदको, उसी गौरवको पं० उमाशंकरने पैरोंसे ठुकरा दिया; अपने शब्दोंमें प्रेमकी वेदीपर तथा दुनियाके शब्दोंमें पागलपनपर बलिदान कर दिया। "Love is a rolling stone" (प्रेम एक लुढ़कता हुआ पत्थर है।) वाली कहावतसे प्रेमका परिचय देनेवाली दुनिया यदि प्रेमके इस स्वर्गीय सौन्दर्य, अनुपम विकाश तथा गौरवपूर्ण दृश्यको

देखकर चकाचौन्धमें पड़ गयी, तो इसमें आश्चर्य ही क्या है ? सभी कोई पं० उमाशंकरको पागल कहने लगे। पर पागल शब्दमें भी एक अपूर्व माधुर्य है, हृदयकी कलीको खिलानेकी शक्ति है तथा जीवनके अन्धकारको दूर करनेकी दिव्य ज्योति है। आजतक संसारमें जितने कार्य हुए हैं, सभी पागलोंने किया है, धुनके मस्तानोंने किया है। संसारका इतिहास इस कथनका साक्षी है। इतिहासके एक-एक पन्ने पर पागलोंकी—मस्तानोंकी कहानी अंकित है। क्या क्रौमवेल, नेपोलियन, गेरीवाल्डी, वाशिंटन, प्रताप, मैकस्विनी, लेनिन, डा० सनयात् सेन, तिलक तथा श्रीयतीन्द्रनाथ दास आदि महापुरुष अपनी धुनके पागल न थे ?

अतएव यदि पं० उमाशंकरको दुनिया पागल कहती है, तो इसमें आश्चर्यकी कौनसी बात है ? हां, अपवाद स्वरूप कुछ ऐसे भी सहृदय व्यक्ति थे, जिन्होंने पंडितजीके इस कार्यके प्रति हार्दिक सहानुभूति प्रदर्शित करना तथा उनके इस अनुकरणीय प्रेमके प्रति भक्तिभाव दिखलाना अपना कर्त्तव्य समझा।

कलक्टरसाहबने लाख समझाया, मित्रोंने हजारों मिन्नतें कीं तथा पं० दीनानाथकी स्त्री सरस्वती देवीने भी उन्हें ऐसा करनेसे रोका। पर कोई फल न हुआ। उन्होंने अपना त्यागपत्र दे ही डाला। दूसरे लोग आश्चर्यके साथ हाथ मलते रह गये। पर पं० उमाशंकरके दृढ़ निश्चयमें किसी प्रकारका परिवर्त्तन न हुआ। उन्होंने अपने पदसे अपना सम्बन्ध विच्छेद ही कर लिया।

बनवारीका दाह-संस्कार करनेके लिये कानपुर जानेपर

लक्ष्मीनारायणको भी इन बातोंका पता लगा। पं० उमाशंकर अब 'निर्भय' का सम्पादन कर रहे हैं, यह सुनकर उनका हृदय भर आया और दाह-संस्कारके कार्यसे निवृत्त होनेपर पण्डितजीके दर्शन करनेकी प्रबल अभिलाषा उनके हृदयमें उठने लगी।

दोपहरको वे लोग कानपुर पहुंचे थे। अतएव लाशकी परीक्षा चार बजे आरम्भ हुई। लगभग दो घंटेमें परीक्षा समाप्त हो जानेपर लाश इन लोगोंके हवाले कर दी गयी। रात्रिके समय गङ्गाके किनारे बनवारीकी अन्तिम क्रिया हुई। उसके लड़केसे उसका अग्नि-संस्कार कराया गया। इस कार्यसे निवृत्त हो जानेपर चम्पा रातकी गाड़ीसे ही रामपुर चलनेका आग्रह करने लगी। पर पं० उमाशंकरके दर्शन करनेकी इच्छासे लक्ष्मीनारायण उस रात वहीं एक धर्मशालामें ठहर गये।

दूसरे दिन प्रातःकाल ही, लगभग आठ बजे वे पंडितजीसे मिलनेके लिये उनकी कोठीपर गये। उस समय वे आफिसमें बैठकर अंग्रेजीका कोई दैनिक पत्र पढ़ रहे थे। एकाएक लक्ष्मी-नारायणका कार्ड पाकर बड़े सत्कारके साथ उन्होंने उनको अपने कमरेमें बुलाया। पीछे उनका पूरा पता जानकर उन्हें बड़ी प्रसन्नता हुई। उन लोगोंके मामलेके सम्बन्धमें ही पं० दीनानाथ जेल गये थे। और उनकी जेल-यात्राके कारण ही आज उन्हें अपने जीवनमें इस प्रकार परिवर्त्तन करना पड़ा था। अतएव रामपुरसे उनका एक स्वाभाविक प्रेम हो गया था। कुशलवार्ता पूछनेके पश्चात् उन्होंने उन लोगोंके आन्दोलनके सम्बन्धमें पूछताछ आरंभ

की। पर लक्ष्मीनारायणके मुखसे बनवारीकी हत्याका समाचार सुनकर वे बड़े दुःखी हुए। बनवारीकी मृत्युपर खेद प्रकट करते हुए वे बोले—"प्रत्येक वस्तुकी सीमा होती है। पर इस खूनके द्वारा रामकिशोरप्रसादने अत्याचारकी सीमाका भी उलङ्घन कर दिया है।"

लक्ष्मीनारायण—"जी हां, वे बड़े ही अत्याचारी आदमी हैं।"

पं० उमाशंकर—"इसमें क्या सन्देह है ?"

लक्ष्मीनारायण—"पण्डितजीके मामलेके दो-तीन दिनों पहले ही उन्होंने उसे अपने मकानमें कैद कर रखा था, जिसमें वह गवाही न देने पावे।"

पं० उमाशंकर—"ऐसा सन्देह तो मुझे भी था और अप्रत्यक्ष रूपसे इस बातका जिक्र मैंने अपने फैसलेमें कर दिया था।"

लक्ष्मीनारायण—"यदि दारोगासाहब उनके पक्षमें नहीं रहते तो इसी मामलेमें उनकी अक्ल भी ठिकानेपर आ जाती। खूनका मामला कोई दिल्लगी नहीं है।"

पं० उमाशंकर—"यदि आपलोग मामलेकी पैरवी ठिकानेसे कर सकेंगे, तो इसमें उन्हें दारोगासाहबसे अधिक सहायता नहीं मिल सकती है।"

लक्ष्मीनारायण—"अपनी शक्तिभर तो हमलोग कोई बात उठा न रखेंगे। देखिये, भगवान क्या करते हैं।"

पं० उमाशंकर—"खैर, आपलोगोंका आन्दोलन अब किस प्रकार चलता है ?"

लक्ष्मीनारायण—"संघ तो कायम ही है। कुछ लोग कार्य भी कर रहे हैं। पर इच्छानुकूल सफलता नहीं मिल रही है।"

पं० उमाशंकर—"आपलोगोंके आन्दोलनकी सफलताका सबसे बड़ा बाधक कौन है?"

लक्ष्मीनारायण—"दरिद्रताके कारण लोग किसी प्रकारके आन्दोलनकी ओर ध्यान ही नहीं देते। लोगोंका सारा समय अपनी जीविकाका प्रबन्ध करनेमें ही लग जाता है और यही कारण है कि देहातके आदमी सभी प्रकारके आन्दोलनसे उदासीन रहते हैं।"

पं० उमाशंकर—"क्या दरिद्रताको आप अपनी असफलता-का कारण समझते हैं?"

लक्ष्मीनारायण—"जी हाँ।"

पं० उमाशंकर—"क्या आपकी यह दृढ़ धारणा है?"

लक्ष्मीनारायण—"अवश्य ही दरिद्रताके सिवा, हम लोगोंकी असफलताका और कोई दूसरा कारण नहीं हो सकता है।"

मुस्कुराते हुए पं० उमाशंकर बोले—"आप भूल करते हैं। दरिद्रता किसीको आगे बढ़नेसे कभी रोक नहीं सकती। यदि आप फ्रान्स, इटली तथा रूसके इतिहासको देखें, तो आपको पता लगे कि इन देशोंकी उन्नति दरिद्रोंके कारण ही हुई है। यदि वहां दरिद्र न होते, तो उन देशोंका गौरव आज संसारके लिये एक आदर्शका काम नहीं करता।"

लक्ष्मीनारायण—"पर हमारे देशके लिये तो दरिद्रता ही पतनका कारण बन रही है।"

पं० उमाशंकर—'आप फिर भूल कर रहे हैं। दरिद्रतासे आजतक किसी देशका मंगलके सिवा अमंगल नहीं हुआ है। यदि रूसके अधिवासियोंको दरिद्रताके कारण कठिन यातनाओंका सामना करना नहीं पड़ता, तो रूसको आज संसारके सामने इस प्रकार एक नवीन आदर्शको लेकर उपस्थित होनेका गौरव कदापि प्राप्त नहीं होता। देखिये, दरिद्रतासे मर मिटनेकी प्रवृत्ति उत्पन्न होती है और मर मिटनेकी प्रवृत्तिके द्वारा कठिन से-कठिन कार्य भी आसानीके साथ पूरा किया जा सकता है। अतएव दरिद्रताको हम किसी देशके लिये अभिमानकी वस्तु समझते हैं—अपमानकी नहीं।"

लक्ष्मीनारायण—"पर हमारे देशमें इसका उल्टा फल क्यों हो रहा है?"

पं० उमाशंकर—"आपकी दरिद्रता सच्ची दरिद्रता नहीं है। आपने इसमें कायरताका मिश्रण कर दिया है और यही कारण है कि आपकी इससे लाभके बदले हानि हो रही है। क्षणिक जीवन-के लिये अपने आदर्शको छोड़ना दरिद्रता नहीं—कायरता है, पशुवृत्ति है।"

लक्ष्मीनारायण—"फिर इसे दूर करनेका उपाय?"

पं० उमाशंकर—"उपाय सभी जानते हैं। हम भी जानते हैं और आप भी। पर सबसे बड़ी कठिनाई यह है कि उसे कार्य रूपमें परिणत करनेकी कोई चेष्टा नहीं करता। अभी हमारे दरिद्र भाइयोंके सामने कोई आदर्श नहीं है। और यही कारण

है कि वे पथभ्रष्ट हो रहे हैं। आगे बढ़नेकी चेष्टा करनेपर वे अन्धेकी तरह पग-पगपर ठोकर खाकर गिर पड़ते हैं। अतएव सबसे पहला काम उन्हें आदर्शकी शिक्षा देना है। फिर अपना रास्ता वे स्वयं निकाल लेंगे। उन्हें हमारी सहायताकी किसी प्रकारकी आवश्यकता नहीं रहेगी। जबतक हम ऐसा नहीं करते हैं, तबतक हमारा कोई भी सामूहिक आन्दोलन सफल नहीं हो सकता है। हमारे नेतागण भी आजतक इसी गलतीको बार-बार दुहराते आये हैं। जिस प्रकार बन्दूककी नलीको साफ करनेके पहले, उससे गोली छोड़नेका फल उल्टा होता है, उसी तरह जनता-को शिक्षित करनेके पहले उसके द्वारा किसी आन्दोलनको सफल बनानेके प्रयत्नका फल भी ठीक उल्टा ही होगा और यही कारण है कि हमारे कितने प्रभावपूर्ण आन्दोलन असफल हो गये हैं। अतएव हमारा सबसे पहला लक्ष्य दरिद्रोंके सामने उच्च आदर्श रखनेका होना चाहिये।"

लक्ष्मीनारायण—"आपका कहना बहुत ठीक है। आप जैसे सात्विक विचारके व्यक्तिसे ही इस देशका कल्याण हो सकता है। अब हमलोगोंको अपना आन्दोलन किस रूपमें चलाना चाहिये?"

पं० उमाशंकर—"आप पहले जनतामें शिक्षाका प्रचार करें। फिर आपका प्रत्येक उद्देश्य स्वतः पुरा हो जायगा।"

लक्ष्मीनारायण—"पर इस कार्यके लिये तो बहुत समयकी आवश्यकता है।"

पं० उमाशंकर—"यदि तत्परतासे काम किया जाय, तो बहुत थोड़े समयमें ही सब काम हो जा सकता है।"

लक्ष्मीनारायण—"फिर भी, इस कालके लिये कम-से-कम दस-पन्द्रह वर्षोंका समय तो अवश्य चाहिये।"

पं० उमाशंकर—"क्या शिक्षाका मतलब आपने लड़कोंको अक्षर तथा शब्दज्ञान कराना समझा है ?"

लक्ष्मीनारायण—"फिर आप किस तरहकी शिक्षा चाहते हैं ?"

पं० उमाशंकर—"शिक्षासे हमारा मतलब यह है कि जनता-को हम स्वावलम्बी बना दें। सभी कोई अपनी आवश्यकताकी पूर्ति स्वयं कर ले। कोई दूसरेका मुहताज न रहने पावे। ऐसी अवस्था उत्पन्न करनेपर आप देशमें एक नवीन ज्योति तथा जागृतिका दर्शन करेंगे।"

लक्ष्मीनारायण---"ऐसा किस तरह हो सकता है ?"

पं० उमाशंकर---"आप प्रत्येक ग्राममें विद्यालय खोल दें, जिसमें जनताको लिखने-पढ़नेके साथ साथ कलाकौशलकी शिक्षा भी दी जाय। लोगोंको कपड़ा बुनना, साबुन बनाना, कृषि-कार्य तथा अन्य दस्तकारियोंकी शिक्षा दी जानी चाहिये। ऐसा होनेसे वे स्वावलम्बी हो जांयगे और पीछे अपनी सभी आवश्य-कताओंकी पूर्ति स्वतः कर लिया करेंगे।"

लक्ष्मीनारायण---"आपका कार्यक्रम बहुत ठीक है।"

पं० उमाशंकर---"अपने मित्रके मामलेके कारण आपके

ग्रामसे मेरा एक विशेष प्रकारका स्नेह हो गया है। अतएव मैं वहाँ एक आश्रम खोलना चाहता हूं, जिसके द्वारा देहातके लोगोंको हर प्रकारकी शिक्षा दी जाय।"

लक्ष्मीनारायण प्रसन्नतापूर्वक बोले---"हम लोगोंके लिये यह बड़े ही सौभाग्यकी बात है कि हमारे ग्रामसे आपको इतना स्नेह है। हमलोग इस कार्यमें तन मन धनसे आपकी सेवा करनेसे बाज नहीं आवेंगे।"

पं० उमाशंकर---"अच्छा, इस सम्बन्धमें मैं स्वयं वहाँ जाकर आपलोगोंसे बातें करूँगा।"

लक्ष्मीनारायण-"आप कब अपने शुभागमनसे हमारे ग्रामको पवित्र करनेकी कृपा करेंगे?"

पं० उमाशंकर---"बहुत जल्द।"

लक्ष्मीनारायण---"कृपया आनेके पहले मुझे एक पत्रद्वारा सूचना दे देंगे, जिससे आपके लिये स्टेशनपर सवारी आदिका समुचित प्रबन्ध रहे।"

पं० उमाशंकर—अवश्यही मैं आपको आनेके समय तथा दिनकी सूचना पहले ही दे दूँगा।

लक्ष्मीनारायण—"आपकी बड़ी कृपा होगी।"

पं० उमाशंकर—"अब बनवारीके परिवारके लिये आप क्या प्रबन्ध कर रहे हैं?"

लक्ष्मीनारायण—"उसकी स्त्रीकी ओर हमलोग पूरा ध्यान रखेंगे। इसके साथ ही हमलोग मामलेकी भी समुचित पैरवी करेंगे।

पं०उमाशंकर—"हाँ, उसके परिवारकी सुखशान्तिकी ओर आपलोगोंको अवश्य ध्यान रखना चाहिये। क्योंकि आपके संघके सिद्धान्तके लिये ही बेचारेकी जान गयी है। इस सम्बन्धमें आप जिस प्रकार चाहें, मुझसे भी सहायता ले सकते हैं।"

लक्ष्मीनारायण—"आप जैसे महापुरुषोंकी तो आशा ही है। परमेश्वर आपके उद्देश्यको पूरा करे, जिससे हमलोगोंका भी कल्याण हो।

इसके बाद पंडितजीसे विदा होकर वे धर्मशाला आये और वनवारीकी स्त्री आदिके साथ रामपुरके लिये प्रस्थान किया।

इधर लक्ष्मीनारायणके चले जानेके बाद पं० उमाशंकरजी भोजन आदि समाप्तकर 'निर्भय'के आफिसमें कामोंकी देखभाल करनेके लिये गये। जबसे उन्होंने 'निर्भय'का काम सम्हाला है, वहांके कर्मचारी आदि एक नवीन उत्साह तथा अपूर्व तत्परताके साथ काम करने लगे हैं। सभी लोगोंका हृदय एक नवीन उमंगसे भरा हुआ मालूम पड़ता है। पंडितजीके त्यागने उन लोगोंकी आत्मापर एक जोरदार प्रभाव डाला है।

सत्रहवां अध्याय

पंडित दीनानाथके मामलेमें विश्वासघात करनेके कारण रामशरण, चरणदास, बनारसीलाल तथा रामरूप पाण्डेके सामाजिक वहिष्कारकी बात पहले लिखी जा चुकी है। इधर बनवारीकी हत्या हो जानेके कारण लोगोंके हृदयमें रामकिशोर बाबूके साथ-साथ इन लोगोंके प्रति भी घृणाका भाव बढ़ने लगा और सब लोग संगठित रूपसे इनका पूर्ण वहिष्कार करने लगे। पहले ये लोग रामकिशोर बाबूके बलपर इस वहिष्कारकी कुछ परवाह नहीं करते थे। इन लोगोंका पूर्ण विश्वास था कि बाबू साहबके रहते कोई इनका बाल भी बांका नहीं कर सकता है। पर बनवारीके मामलेके कारण वे खुद झमेलेमें पड़े हुए थे। अतएव इन लोगोंकी सहायता करनेवाला कोई नहीं रहा और वहिष्कार-वादी इस स्थितिसे पूरा लाभ उठाने लगे। इन लोगोंको यथासम्भव कष्ट देनेमें वहिष्कारवादियोंने कोई बात उठा नहीं रखी। बात यहां तक बढ़ गयी कि हजाम, धोबी आदिने भी इनका काम करना बन्द कर दिया। अतएव वे लोग बड़ी परेशानीमें पड़े।

अन्य लोगोंकी अपेक्षा बेचारा रामशरण अधिक कष्टमें था। उसको अपने लड़केकी शादी करनी थी। पर जितने अगुये आते थे, सभी कोई वहिष्कारकी बात सुनकर उल्टे पैर लौट जाते थे। एकने हौसला करके शादी करनेका निश्चय किया और लेन-देनकी

बात भी तय पा गयी। पर टीकाके समय रामशरणके यहाँ किसी भी बाजावालेने बाजा बजाना स्वीकार नहीं किया। उससे एक बाजेका भी प्रबन्ध न होते देखकर, अगुआ घबराया और सम्बन्ध करनेसे साफ-साफ इन्कार कर, उसने आगेका रास्ता पकड़ा।

इस घटनासे रामशरणको बहुत दुःख हुआ। उसने लक्ष्मी-नारायणके यहां जाकर वहिष्कारका बन्धन उठा लेनेकी बड़ी मिन्नतें कीं। पर इस मामलेमें किसी प्रकारकी दया दिखलानेसे उन्होंने साफ साफ इन्कार कर दिया।

उस दिनसे उसके यहां फिर कोई दूसरा अगुआ नहीं आया। पर रामशरण बैठनेवाला आदमी न था। वह लड़केकी शादीकी बराबर चेष्टा करता रहा। अतएव उसकी अधिक चेष्टाके कारण आज विक्रमपुरसे फिर कई आदमी आनेवाले हैं। इस बार किसी प्रकारकी बाधा न पड़े, इस विचारसे वह पहलेहीसे सभी चीजोंका प्रबन्ध कर रहा है। उस बार बाजा नहीं मिलनेके कारण उसकी सारी चेष्टा व्यर्थ हो गयी थी। अतएव इस सम्बन्धमें वह पहलेहीसे सतर्क है। एक दूरके गांवसे उसने बाजावालोंको एक दिन पहलेहीसे बुला रखा है। इसके साथ ही बड़े आग्रहसे उसने तुलसीको भी अपनी सहायताके लिये बुलाया है।

तुलसीकी अवस्था इस समय लगभग सत्तर वर्षकी है। वह पुराने विचारोंका प्रबल समर्थक तथा सामाजिक बातोंमें कट्टर अपरिवर्तनवादी है। अतएव स्वभावतः ही वह जमीन्दारोंका प्रबल समर्थक है। इस कारण रामकिशोर बाबू भी उसे स्नेहकी

दृष्टिसे देखते हैं। अतएव रामशरणको तुलसीसे बड़ी सहायताकी आशा है।

संध्याके समय पूर्व निश्चयके अनुसार बिक्रमपुरसे चार आदमी आये। रास्तेके वे लोग थके मांदे थे। अतएव उस समय किसी प्रकारकी बातचीत न हुई। भोजन आदिसे निवृत्त हो, दूसरे दिन लेनदेनका निपटारा करनेका निश्चयकर, वे लोग चुपचाप सो गये। तुलसी भी भोजनकर वहीं सो रहा।

संध्याको ही ग्रामके सभी लोगोंको अगुओंके आनेकी खबर मिल गयी थी। अतएव उसी समयसे कुछ उत्साही युवक-गण अगुओंपर बहिष्कारका प्रभाव डालनेके लिये तरह-तरहके उपाय सोचने लगे। अन्तमें सब लोगोंने मिलकर बहिष्कारका प्रदर्शन करनेका निश्चय किया। प्रातःकाल पन्द्रह-बीस स्वयंसेवक रामशरणके मकानके समीप आकर इस प्रकार चिल्लाने लगे— "रामशरणका समाजने बहिष्कार किया है। कोई उसका हुक्का पानी भी नहीं पीता। अतएव भूलकर भी उसके यहाँ सम्बन्ध नहीं करना। रामशरण विश्वासघाती है! विश्वासघाती है!! विश्वासघाती है!!!"

उन लोगोंकी यह चिल्लाहट सुनकर रामशरण बहुत घबराया। अगुओंके सामने अपनी पोल खुलते देख, उसका हृदय कांप उठा। ऐसे ही बीहड़ मौकेके लिये उसने तुलसीको इतना आदर सत्कारसे बुला रखा था। अतएव रामशरण उससे किसी प्रकार स्वयं सेवकोंको दूर भगानेकी प्रार्थना करने लगा। अपना

जौहर दिखानेका तुलसीने भी यही सबसे अच्छा मौका देखा। इसी समयके लिये तो रामशरणने उसे इतना आदर सत्कारसे खिलाया पिलाया था। अतएव मस्त गजराजकी तरह वह स्वयंसेवकोंसे टक्कर लेनेके लिये आगे बढ़ा। पहले उसने नम्रतासे ही काम निकालना उचित समझा। अतएव स्वयंसेवकोंके समीप पहुँच कर, वह नम्रतापूर्वक बोला—"तुमलोग रामशरणके पीछे इस प्रकार हाथ धोकर क्यों पड़ गये हो? आखिर, वह भी तो मनुष्य ही है। कुछ मी तो दया करो। किसीके शादी-विवाहमें इस प्रकार रोड़ा अटकाना कहाँकी बुद्धिमानी है?"

उसकी बातें सुनकर एक स्वयंसेवक मुस्कुराता हुआ बोला—"तुलसी बाबा! तुम क्यों रामशरणके पक्षमें मिल गये हो। वह तो पापी है, विश्वासघाती है। पं० दीनानाथ उसीके कारण आज जेलकी चक्की पीस रहे हैं।"

तुलसी—"दोनानाथ-फीनानाथसे तुमलोगोंका क्या सम्बन्ध है? एकबार यहां आकर लेकचर दे देनेसे ही क्या वह तुम्हारा गुरु हो गया? पर रामशरण तो तुम्हारे ग्रामका रहनेवाला है। अपना सगा सम्बन्धी है। एक अनजान व्यक्तिके लिये उसकी जान क्यों ले रहे हो?"

दूसरा स्वयंसेवक जरा गर्म होकर बोला—"बस, सोच समझ कर बातें किया करो। क्या तपस्वी दोनानाथ, तुम्हारे लिये दोनानाथ-फीनानाथ हैं? वे अनजान व्यक्ति किस प्रकार हैं? हमलोगोंकी ही भलाईके लिये तो वे इस समय कठिन जेल-यातना सह रहे हैं?"

तुलसी भी कुछ गर्म होकर बोला—"बड़े इन्साफवाले हुए हो ? क्या तुम्हें मालूम है कि वे कहांके रहनेवाले हैं ?"

एक स्वयंसेवक—"कहींके रहनेवाले हों; इससे क्या ? हम लोगोंके तो शुभचिन्तक हैं। देशकी भलाईके लिये तो जान देनेके लिये बराबर तैयार रहते हैं। अतएव उनसे बढ़कर पूज्य कौन हो सकता है ?"

तुलसी—"अभी छोकड़े हो, इसीसे इस प्रकारकी बातें कर रहे हो। अनजान आदमीको अपना गुरु बना रहे हो और उसके लिये अपने सगे सम्बन्धीको सता रहे हो।"

एक स्वयंसेवक—'उन्हें तो हमलोगोंने देखा भी है; पर ईश्वरको तो कोई देखता भी नहीं। फिर ईश्वरकी भक्ति क्यों करते हो ? नास्तिक क्यों नहीं बन जाते, तुलसी बाबा !"

तुलसी गर्म होकर बोला—"चुप, नास्तिकका बच्चा। बहस करनेकी कोई जरूरत नहीं है। तुम लोग यहांसे भागते हो या नहीं ?"

एक स्वयंसेवक—"जबतक अगुआ रहेंगे, तबतक हम लोग यहांसे नहीं जा सकते।"

तुलसी—"खैर, न जाओ। पर यदि अब हल्लागुल्ला मचाओगे, तो मारते मारते तुम लोगोंकी हड्डी चूर चूर कर डालूंगा।"

एक स्वयंसेवक उसकी बातोंपर हंसता हुआ बोला—"वाह तुलसीबाबा वाह ! तुम अकेले हम लोगोंकी हड्डी किस प्रकार तोड़ सकोगे ?"

तुलसी—"चुप, ज्यादे बकबक करोगे, तो मैं तुम लोगोंको पुलिसमें दे दूंगा।"

एक स्वयंसेवक—"पुलिसका घर देखा है, कैसा होता है?"

क्रोधित होकर तुलसी बोला—"मैंने पुलिसका घर कब देखा? पुलिसका घर देखो तुम और देखे तुम्हारा बाप।"

एक स्वयंसेवक—"वाह, तुलसीबाबा वाह! तब तो तुम्हें भी पुलिसका घर देखना पड़ेगा।"

तुलसी जरा मुस्कुराता हुआ बोला—"मैं क्या तुम्हारे जैसा सनसेवक हूँ?"

स्वयंसेवक हँसता हुआ बोला—"कम-से-कम एक स्वयं-सेवकके बाप तो हो।"

तुलसी—"अरे, मेरा लड़का तो दूसरे जन्ममें भी तुम जैसे अवारोंके फेरमें न पड़ेगा।"

हँसते हुए स्वयंसेवकने उत्तर दिया—"जरा आंखें खोलकर देखो तो भोला चचा भी तुम्हें इसी झुण्डमें दिखलाई पड़ेंगे।"

तुलसीने अभीतक उन लोगोंकी ओर गौरसे नहीं देखा था। पर नजर फेरते ही, उसे स्वयंसेवककी बात ठीक मालूम पड़ी। उसका पुत्र भोला भी उन लोगोंके साथ आया था और उसके डरसे छिपकर पीछे खड़ा था। उसे देखते ही तुलसीका हृदय जल-कर खाक हो गया और क्रोधसे अपना डण्डा सम्हालते हुए उसकी ओर झपटा। पर बीचमें ही स्वयंसेवकोंने उसे रोक लिया।

भोलाको इस बातकी कोई खबर न थी कि उसके पिता उस पक्षसे स्वयंसेवकोंसे मोर्चा लेनेके लिये आयेंगे। अतएव जवानी-के उमंगमें आकर वह भी स्वयंसेवकोंके साथ चला आया था। पर वहां रंग बेढंग देखकर वह उसी समय भाग निकला। भोलाको भागते देखकर, विजयी वीरकी तरह तुलसी बोला—"यदि वह शैतान यहां खड़ा रहता, तो डण्डेसे मैं उसका सिर तोड़ देता।"

तुलसीकी बातोंको अनसुनी करते हुए स्वयंसेवक फिर चिल्ला चिल्लाकर कहने लगे—"रामशरण समाजसे बहिष्कृत है। उसके यहां भूलकर भी सम्बन्ध न करना।"

उन लोगोंके सामने अपनी दाल न गलती देख, तुलसी वहांसे लौट आया। अब अगुओंको समझाने बुझानेके सिवा, उसके लिये और कोई दूसरा रास्ता न रह गया। अतएव उनके समीप जाकर वह बोला—"वे सबके सब अवारे हैं। रातको भंग छानना तथा दिनको हल्ला गुल्ला मचाना ही इन लोगोंका काम है।"

अगुआ—"पर ये यहां जमकर क्यों इस प्रकार हल्लागुल्ला मचा रहे हैं?"

तुलसी अगल बगल झांकता हुआ बोला—"ये लोग पूरे शैतान हैं। इनका क्या ठिकाना?"

एक अगुआ—"पर क्या रामशरणजीको समाजने वहिष्कृत कर दिया है?"

तुलसी—"यह सरासर झूठी बात है।"

अगुआ—"फिर ये लोग ऐसा क्यों कर रहे हैं?"

तुलसी—"रामशरण गांवके नाते इन लोगोंका बहनोई लगता है। इसी कारण ये लोग इस तरहकी दिल्लगी कर रहे हैं।"

अगुआ—"क्या किसीके शादी-विवाहमें विघ्न डालना दिल्लगी कहलाता है?"

तुलसी कुछ सोचकर बोला—"क्या आप इतनेहीसे घबड़ा गये? यह तो यहांका एक साधारण रस्म है। यहां अगुओंके आनेपर लोग इसी तरह हल्लागुल्ला मचाया करते हैं।"

अगुआ—"इस ग्राममें ऐसा रिवाज क्यों है?"

तुलसी—"अगुओंके साथ मजाक करनेके लिये।"

अगुआ—"पर मुझे सन्देह मालूम पड़ता है। जरा मैं उन लोगोंसे पूछ आता हूँ। फिर आपके साथ बातें करूँगा।"

इतना कहकर वह स्वयंसेवकोंके समीप जा उन लोगोंसे इस प्रकार शोरगुल करनेका कारण पूछने लगा। उनमेंसे एक व्यक्तिने आगे बढ़कर आदिसे अन्ततक सभी बातें कह सुनायीं। उसकी बातें सुनकर वह बोला—"पर वे लोग तो कह रहे थे कि मजाकके कारण ये लोग इस प्रकार हल्लागुल्ला मचा रहे हैं। रामशरणजी-का किसीने वहिष्कार नहीं किया है।"

स्वयंसेवक—"यह सब मुल्लमा है, मुल्लमा। भूलकर भी उन लोगोंके फेरमें न पड़ियेगा। रामशरण एक नम्बरका धोखेबाज है।"

स्वयंसेवककी बातें सुनकर अगुआने उसी समय रामशरणके

यहाँ सम्बन्ध करनेका विचार छोड़ दिया और कुछ ही देरके बाद अपने साथियोंके साथ आगेका रास्ता पकड़ा।

उन लोगोंके चले जानेपर रामशरण घोर चिन्तामें पड़ा। अब उसे अपने लड़केके विवाह होनेमें बड़ा सन्देह होने लगा। पं॰ दीनानाथके मामलेमें उसने क्यों विश्वासघात किया, यह प्रश्न बार-बार उसके हृदयमें उठने लगा। वह अपनी गहरी भूलके लिये अन्तःकरणसे पश्चात्ताप करने लगा। उसकी आत्मा बार-बार उसे धिक्कारने लगी। इसके साथही स्वयंसेवकोंकी इस चालसे उसे बहुत क्रोध भी हुआ। इस तरह नाना प्रकारकी बातोंसे उसका हृदय व्यथित होने लगा।

तुलसी भी बेचारेको बहुत कुछ ढाढ़स दे, अपने घर लौट आया। थोड़ी देरके बाद बाजावाले अपनी मजदूरी मांगने लगे। अगुये तो लौट ही गये थे। अतएव मुफ्तमें मजदूरी देना रामशरणको बहुत अखरने लगा। पर वे मजदूरीके लिये सीने सवार हो गये थे। थोड़ी देर सोचकर वह बोला—"अजी, शादीकी बात तो ठहरी ही नहीं, फिर मजदूरी किस बातकी लोगे?"

एक बाजावाला बोला—"वाह, भाई वाह! हमलोग क्या तुम्हारी शादीका बीमा लेकर आये थे? हमें शादी-वादीसे क्या मतलब? चुपचाप भले आदमीकी तरह पांच रुपया रख दो, नहीं तो हमलोग भी झमेला करना जानते हैं।"

रामशरण—"तुम लोगोंको भी कुछ विचार करना चाहिये।"

बाजावाला—"हम लोग विचार क्या खाक करेंगे? हमारी मजदूरी दे दो, बस यही विचार है।"

रामशरण—"पर शादीकी बात तो नहीं ठहरी।"

बाजावाला—"हमने क्या तुम्हारी शादीका ठेका ले रखा था?"

रामशरण बड़े पसोपेशमें पड़कर दो रुपया देते हुए बोला—"लो भाई, बुलानेका यह दंड ही समझो। मेरा काम तो कुछ हुआ ही नहीं।"

रुपये फेंकते हुए एक बाजावाला बोला—"चूल्हेमें जाय तुम्हारा काम और धाम। व्यर्थकी हुज्जत न करो। चुपचाप हमारी पूरी मजदूरी रख दो।"

रामशरण—"भाई, कुछ भी तो दया करो।"

एक बाजावाला—"मजदूरी लेनेमें दया करनेका सबक तो हमारे गुरुने सिखलाया ही नहीं।"

मामला किसी प्रकार खतम होते न देख, दो रुपया और देते हुए रामशरण बोला—"अब मैं अधिक नहीं दे सकता। एक रुपया छोड़ दो।"

रुपया उठाते हुए बाजावालेने कहा—"तुमने आज बड़ी हुज्जत की। हमें क्या पता था कि तुम इस तरहके छटे आदमी हो। नहीं तो तुम्हारे यहां भूलकर भी न आता।"

इस प्रकार उल्टी सीधी सुनाते हुए उन लोगोंने अपना रास्ता पकड़ा और रामशरण भाग्यको कोसते हुए चुपचाप अपने काम धन्धेमें लग गया।

अठारहवाँ अध्याय

समयके व्यतीत होनेमें कोई बिलम्ब नहीं होता है। पं० दीनानाथको जेल गये एक महीनेसे कुछ अधिक हो चुका है। इस बार ये पहले पहल जेल आये थे। अतएव जेल जीवनका इन्हें कोई वास्तविक अनुभव न था। यों तो सम्पादक होनेके नाते जेलके कष्टोंका इन्हें थोड़ा बहुत ज्ञान अवश्य था और 'निर्भय' के द्वारा इन्होंने जेलोंके सुधारके सम्बन्धमें बहुत कुछ आन्दोलन भी किया था। राजनैतिक कैदियोंके प्रति किये जानेवाले अन्यायोंका ये सदैव विरोध किया करते थे। इतना होते हुए भी इन्हें इस बातका वास्तविक ज्ञान न था कि भारतवर्षमें जेलजीवन कितना आपत्तिजनक तथा अपमानपूर्ण बनाया गया है। पर जेल जीवनके प्रथम दिनसे ही इन्हें इन बातोंका अनुभव होने लगा।

पहले दिन जेलके भीतर आनेपर इनके कपड़े उतार लिये गये और जेलके कपड़े दिये गये। इसी कार्यके द्वारा एक प्रकारसे जेलजीवनका श्रीगणेश हुआ। कपड़े बदलनेके बाद इनका नाम नियमानुसार जेलके रजिष्टरमें लिख लिया गया और रघुनाथ सिंह वार्डरकी अधीनतामें इन्हें रहनेकी आज्ञा मिली।

रघुनाथ सिंह जेलका एक पुराना कैदी है। वह इतनी जल्दी जेल आया जाया करता है कि जेल जीवनसे वह एक

प्रकारसे अभ्यस्त हो गया है। जेलके किसी रस्म-रिवाजके सम्बन्धमें यदि कोई विवाद उठता है, तो रघुनाथ सिंहका निर्णय ही अन्तिम निर्णय समझा जाता है। जेलके नियमोंका वह इतना जानकार हो गया है कि एक प्रकारसे वह इन बातोंमें विशेषज्ञ समझा जाता है। जेलकी सभी बातें जाननेके लिये नये नये सिपाही लोग उसकी बड़ी खुशामद किया करते हैं। कोई संदिग्ध समस्या उपस्थित होनेपर स्वयं जेलर साहब भी इससे सम्मति लेना आवश्यक समझते हैं। अतएव कैदी होते हुए भी उसे जेलके कष्टोंका सामना करना नहीं पड़ता। वह जेलमें भी शाही तथा बेपरवाहीका जीवन व्यतीत करता है। वह जेल-जीवन-को एक प्रकारसे विश्रामका ही समय समझता है।

इस बार रघुनाथ सिंह एक डकैतीके मामलेमें ६ वर्षके लिये जेलमें विश्राम करने आया है। जेलके सभी विषयोंका जानकार रहनेके कारण सभी लोगोंपर उसकी पूरी धाक जमी हुई है। सिपाही तो उसके इशारेपर नाचनेमें ही अपनी भलाई समझते हैं। अपने अधीनस्थ कैदियोंके साथ तो वह गुलामोंकी तरह वर्ताव किया करता है।

दारोगाकी शिकायत करनेके कारण पं० दीनानाथ जेल आये थे। अतएव जेलरने उन्हें रघुनाथ सिंह जैसे जबर्दस्त वार्डरके अधीन रखना उचित समझा। वार्डरका निश्चय हो जानेके बाद एक कमरेमें इनके लिये जगहका प्रबन्ध कर दिया गया। इनके कमरेमें चार कैदियोंके रहनेकी जगह है। जेलके नियमानुसार इन्हें सभी

जरूरी चीजें दी गयीं। भोजनके समय ये सभी कैदियोंके साथ भोजन करनेके लिये गये। पर भोजनगृह तथा पाकशालाकी अवस्था देखकर ये बड़े दुःखी हुए। रोटियाँ सावधानीके साथ नहीं बनायी गयी थीं। कुछ तो कच्ची थीं और कुछ अधजली। और लोगोंके साथ-साथ इनके सामने भी कुछ साग तथा तीन-चार अधजली रोटियाँ डाल दी गयीं। परमेश्वरका नाम लेकर इन्होंने रोटी खायी। ये बचपनसे ही अल्पाहारी हैं। अतएव इन्हें जो कुछ दिया गया, वह एक प्रकारसे इनके लिये यथेष्ट था। पर कई दूसरे कैदी और भी रोटियां माँगते रहे। परन्तु किसीको कुछ नहीं दिया गया। हाँ, रोटियोंके बदले जमादारोंकी असभ्यतापूर्ण गालियाँ अवश्य ही इनके पल्ले पड़ीं।

इस प्रकार भोजन समाप्त कर वे अन्य तीन कैदियोंके साथ अपने कमरेमें आये। थोड़ी देरके वाद जेलरसाहब भी देखभाल करनेके लिये आये और उनके चले जानेपर कमरेका द्वार बन्द कर दिया गया। द्वार बन्द होनेपर सोनेकी घंटी बजी और सभी विश्राम करने लगे। अपने साथ एक नये आदमीको देखकर उस कमरेके अन्य कैदियोंको स्वभावतः ही इनका परिचय जाननेकी इच्छा हुई और इसी इच्छासे प्रेरित होकर एकने इनसे पूछा—"भई, तुमने किस चीजकी चोरी की थी?"

पं० दीनानाथको पहले तो यह प्रश्न बहुत खटका, पर शीघ्र ही इसमें उन्हें अपूर्व आनन्दका अनुभव होने लगा, और इसी रससे

सराबोर होकर वे बोले—"भाईसाहब ! मैंने तो किसी चीजकी चोरी नहीं की है।"

उनका उत्तर सुनकर दूसरा कैदी बोला—"तब तो आप हम लोगोंके भी गुरु मालूम पड़ते हैं। क्या आप डकैतोंके किसी गिरोहके सरदार थे ?"

पं० दीनानाथने मुस्कुराते हुए उत्तर दिया—"मैं डकैत भी नहीं हूं।"

एक कैदी—"तब आप किस कसूरके लिये जेल आये हैं ? शायद किसी लड़ाई-दंगामें भाग लिया होगा।"

दूसरा कैदी—"हां भई, ऐसा ही तो मालूम पड़ता है। पर इस प्रकारके आदमियोंकी हम तारीफ नहीं कर सकते ?"

पहला कैदी—"क्यों ?"

दूसरा कैदी—"लड़ाई-दंगेके मामलेमें जेल आना सरासर बेवकूफी है। इसमें किसीको भी कुछ हाथ नहीं लगता है। हम लोगोंने तो चोरीसे बाल-बच्चोंके जन्मभर खानेका सामान इकट्ठा कर लिया है और बेफिक्र होकर जेलकी सजा काट रहे हैं। पर मार-पीटमें तो व्यर्थकी हत्या इनके गले आकर लगी। फिर जेल आनेसे इनका लाभ ही क्या हुआ ? मुफ्तमें बाल-बच्चे कष्ट पाते होंगे। कहो, गुरू ठीक है न ?"

उसकी इस वक्तृताको सुनकर पंडितजी मुस्कुराते हुए बोले—"अजी, मैंने तो मार-पीट भी नहीं की है।"

उनका यह उत्तर सुनकर एक कैदी हँसता हुआ अपने

साथीसे बोला—"यह लो, जिनकी खोज तुम कर रहे थे, वही आ गये। अब एक पाकेटमार भो हमलोगोंके साथी हो गये। इनसे पाकेटमारीकी सारी विद्या सीख लो।"

अपने साथीकी बातें सुनकर वह कैदी पंडितजीकी ओर मुँह करके बोला—"हाँ साहब! क्या आप मुझे अपनी विद्या सिखला देंगे? सुनते हैं कि पाकेटमार लोग बड़ी आसानीसे बहुत धन पैदा कर लिया करते हैं। अतएव मुझे भी आपकी विद्या सीखनेका बड़ा हौसला है। हमारे ही भाग्यसे आप इस कमरेमें आ पहुँचे हैं।"

पं० दीनानाथ—"क्या आप मुझसे पाकेटमारी सीखना चाहते हैं?"

कैदी—"हाँ।"

पं० दीनानाथ—"पर मैं तो स्वयं इसे नहीं जानता।"

कैदी जरा दीनभावसे बोला—"आप छिपाते क्यों हैं? इस कृपाके लिये मैं आपका जन्मभर कृतज्ञ रहूँगा।"

पं० दीनानाथ—भाईसाहब! यदि मैं इसे जानता, तो सिखला देना कौनसी बड़ी बात थी।"

पंडितजीकी बातोंसे कुछ निराश होकर वह कैदी झुंझला कर बोला—"तब आप किस मर्ज़की दवा करानेके लिये जेल आये हैं?"

पं० दीनानाथ—"अरे भई, मैं कागज-पत्रोंके मामलेमें जेल आया हूँ।"

एक कैदी आश्चर्यसे बोला—"क्या आप जाली नोट बनाते थे?"

पं० दीनानाथ—"नहीं, मैंने कभी नोट नहीं बनाया है।"

दूसरा कैदो—"अरे, नोट बनाना कोई आसान काम थोड़े ही है। ये कहीं जाली दस्तावेज वस्तावेज बनाते होंगे। जाली नोट बड़े बड़े दिमागदार आदमी बनाया करते हैं।"

पहला कैदी पंडितजीकी ओर मुँह करके बोला—"क्या आप सिर्फ दस्तावेज बनानेके कारण जेल आये हैं?"

पं० दीनानाथ मुस्कुराते हुए बोले—"मैंने कभी जाली दस्तावेज नहीं बनाया।"

पहला कैदी कुछ परेशानोका भाव दिखलाते हुए बोला—"आप भी तो अजीब आदमी मालूम पड़ते हैं। आपने न तो नोट बनाया और न जाली दस्तावेज। फिर कागज-पत्रका मामला कैसा होता है?"

पं० दीनानाथ—"मैं एक पत्रका सम्पादक हूँ और उसीके कारण मुझे जेलकी सजा मिली है।"

दूसरा कैदी—"सम्पादक क्या कहलाता है? आप तो अजीव आदमी हैं। साफ-साफ क्यों नहीं कहते?"

यह बात सुनकर पं० दीनानाथने कई प्रकारसे सम्पादक शब्दकी व्याख्या की और अपने जेल आनेका कारण स्पष्ट रूपसे बतलाया। पर उन लोगोंकी समझमें एक बात भी न आई। अन्तमें परेशान होकर एक कैदीने उनसे पूछा—"अच्छा, आपको कितने दिनोंकी सजा मिली है?"

पं० दीनानाथ—"छ महीनेकी।"

पंडितजीके इस उत्तरको सुनकर वे हँसते हुए बोले—"केवल छ महीनेकी! भला, यह भी कोई सजा है? तब तो आप पूरे रंगरूट ही मालूम पड़ते हैं?"

पं० दीनानाथ—"हाँ, साहब! सजा तो मुझे केवल छ महीनेकी मिली है।"

एक कैदी—"अच्छा, इस बार आप जेलसे पक्का होकर लौटेंगे। हमलोग भी एक वर्षके भीतर छूट जाँयगे। अभीतक हमलोग चोरी करते थे। और इस हुनरमें हमलोगोंने बहुत नाम तथा धन भी पैदा किया। पर चोरीका काम कायरतापूर्ण होता है। इसमें कोई मर्दानगी नहीं है। अतएव हमलोगोंने एक डाकूका दल खड़ा करनेका निश्चय किया है। यदि आप चाहेंगे, तो हमलोग आपको भी अपने दलमें शामिल कर लेंगे। परमेश्वरकी कृपा होनेपर आप भी देखते ही देखते हमलोगोंकी तरह मालोमाल हो जाँयगे।"

बीचमें ही बात काटता हुआ दूसरा कैदी बोल उठा—"हाँ भई, एक ऐसे आदमीकी आवश्यकता थी। ये पढ़े-लिखे मालूम पड़ते हैं। अतएव इनके रहनेसे हमलोगोंके दलकी एक बड़ी कमी पूरी हा जायगी।"

बात टालनेके विचारसे पंडितजीने कहा—"खैर, देखा जायगा। इस सम्बन्धमें हमलोग फिर बातें कर लेंगे।"

पहला कैदी—"देखा क्या जायगा? आपको कोई नुकसान थोड़े ही है। दौड़-धूपका तो सभी काम हमलोग स्वयं कर लेंगे।

आप तो पूरे लालाजी मालूम पड़ते हैं। आपसे परिश्रमका कोई काम थोड़े ही हो सकेगा। मुफ्तमें आपको लूटके मालोंका हिस्सा मिला करेगा। इसमें आपका नुकसान क्या है?"

दूसरा कैदी—"हाँ भई, इन्हें तो फायदा ही फायदा है।"

तीसरा कैदी—"तिसपर भी तो ये साफ साफ बातें नहीं कर रहे हैं।"

पहला कैदी—"हाँ साहब! बोलिये, आपको मेरी बातें स्वीकार हैं?" अब पंडितजी बड़े पसोपेशमें पड़े। उनकी अक्ल कोई काम न कर रही थी। पर किसी तरह उन लोगोंसे छुटकारा पाना जरूरी था। अतएव वे बातको टालते हुए बोले—"जब मुझे आपके साथ रहनेसे लाभ होगा, फिर मैं क्यों नहीं आपके साथ काम करूंगा।"

इन बातोंको सुनकर वे लोग चुप हुए और थोड़ी देर आपसमें बातें करनेके बाद सो रहे। पर लाख चेष्टा करनेपर भी पंडितजीको नींद न आई। जेलकी शोचनीय स्थितिका दृश्य बायस्कोपकी तरह उनकी आँखोंके सामने नाचता रहा। अन्य देशोंकी सरकारोंने कैदियोंका नैतिक उत्थान करने तथा उनके जीवनको सुधारनेके विचारसे जेलोंमें सुशिक्षाका प्रबन्ध कर रखा है। कैदियोंको नाना प्रकारकी धार्मिक तथा आध्यात्मिक शिक्षा दी जाती है। इसका उनके जीवनपर बड़ा ही गहरा असर पड़ता है। वे पतनको छोड़कर उन्नतिके रास्तेपर आते हैं तथा पशुताके जीवनसे मनुष्यताका जीवन अधिक महत्वपूर्ण समझने लगते हैं। जेलसे

लौटनेपर वे एक परिवर्तित तथा उन्नतिशील व्यक्ति हो जाते हैं। हमारे स्वयम्भू शासकोंके देश इंगलैण्डमें भी ऐसा ही प्रबन्ध है। वहांके जेल निष्ठुर तथा अत्याचारियोंको दयावान और सदाचारी बनानेका कार्य करते हैं। पर दूसरी ओर हमारे देशके जेलोंका यह दृश्य है, कि यहांके कैदी चोरीकी सजा भुगतनेके बाद डकैती करनेका मंसूबा बाँधते हैं और जेलके वायुमण्डलद्वारा उन्हें अपने भावी संगठनका भी अच्छा अवसर मिल जाता है।

इन्हीं बातोंको सोचते-सोचते पंडितजी कई घंटोंतक व्यग्र रहे। अन्तमें बड़ी चेष्टाके बाद लगभग दो बजे इन्हें नींद आई। विलम्बसे सोनेपर भी दूसरे दिन प्रातःकालके समय अन्य कैदियोंके साथ इन्हें जागनेके लिये बाध्य होना पड़ा।

जेलरने पंडितजीके वार्डर रघुनाथ सिंहको इनके ऊपर कड़ी निगरानी रखनेकी चेतावनी दे रखी थी। अतएव वह इनके साथ बड़ी कड़ाईका वर्ताव करने लगा। दूसरे ही दिनसे इन्हें चक्की पीसनेका काम दिया गया। इस कामको करनेकी इन्हें कोई आदत न थी। यहाँ सम्पादकीय लेखनीके बदले चक्कीका मोटा डण्डा सम्हालना पड़ा। थोड़ी ही देरमें इनके हाथमें छाले पड़ गये। अन्तमें बहुत परेशान हो जानेपर इन्होंने जमादारको दूसरा काम देनेके लिये कहा। इनकी बातोंको सुनकर मुस्कुराता हुआ वह बोला—"बाबूसाहब! यदि आरामसे बैठना हो, तो उसका भी रास्ता है। थैली खोलिये और आनन्द लूटिये। जरूरत पड़नेपर हमलोग सभी चीजोंका प्रबन्ध कर दे सकते हैं।"

पं० दीनानाथ—"भई, रुपया पैसा देना तो मेरे सिद्धान्तके विरुद्ध है। इसलिये मैं ऐसा तो नहीं कर सकता हूं।"

जमादार—"जी हां, तब यही चक्की पीसा कीजिये। देना लेना खैर सलाह मुहब्बत एक चीज है—वाले मसलेसे यहां काम नहीं चल सकता है। हमलोग तो रुपयेको पहचानते हैं, आदमीको नहीं।"

जमादारकी इन बातोंको सुनकर पंडितजी चुपचाप चक्की पीसने लगे। थोड़ी देरके बाद आटा हाथमें लेता हुआ, जमादार कड़ककर बोला—"खबरदार, यदि ऐसा आटा हुआ तो ठोकरसे दांत तोड़ दूँगा।"

उसकी इस बातका कोई उत्तर न देकर वे चुपचाप चक्की चलाते रहे और बड़ी कठिनाईके साथ उन्होंने अपने कामको पूरा किया। कर्मवीर होनेके कारण वे अपने कोमल शरीरको किसी प्रकार जेलकी कठिन यातनाओंके योग्य बनानेमें समर्थ हुए और आठ दस दिनोंमें इन्हें सभी कामोंको करनेकी आदत पड़ गयी।

लगभग दो सप्ताहके बाद एक जमादारद्वारा इन्हें अपने मित्र पंडित उमाशंकरकेईस्तिफाका समाचार मिला। इस समाचार-को सुनकर इनके हृदयमें एक साथ ही कई भावोंका समावेश हुआ। कभी वे अपने मित्रके इस कार्यपर गर्व करते और कभी उनकी उतावलीपर इन्हें क्रोध होता। जेलमें इन्हें कठिन शारीरिक परिश्रम तो करना ही पड़ता था, पर अपने मित्रके ईस्तिफाका समाचार सुनकर इन्हें मानसिक कष्टोंका भी सामना करना पड़ा।

इस प्रकार कष्टोंसे घिर जानेके कारण धीरे-धीरे इनका स्वास्थ्य खराब होने लगा। इनकी यह अवस्था देखकर डाक्टरने एक सप्ताहके लिये इन्हें शारीरिक परिश्रमसे मुक्त कर दिया। इस व्यवस्थासे पंडितजीका स्वास्थ्य कुछ सुधर गया और वे यथा पूर्व शारीरिक परिश्रम करने लगे।

यों तो जेलकी कई बातें पंडितजीको बहुत अनुचित मालूम पड़ती थीं। पर भोजन-स्थानका कुप्रबन्ध इन्हें सबसे अधिक खटकने लगा और जेलके अफसरोंसे उन्होंने इस बातकी शिकायत की। पर किसीने इस ओर कोई ध्यान नहीं दिया। इसी बातको लेकर एक दिन रघुनाथ सिंह वार्डर इनके ऊपर गर्म हो उठा और चपत दिखलाते हुए कहा—"यदि अब इस सम्बन्धमें अफसरोंके सामने अधिक चीं-चपड़ करोगे, तो मारते मारते तुम्हारा होश-हवाश ठिकाने कर दूँगा। यह क्या तुम्हारे दादेका मकान है, जो तुम्हारी इच्छाके अनुसार सभी बातोंका प्रबन्ध रहेगा?" पंडितजी ऐसे प्रसंगपर प्रायः चुप हो जाया करते थे। अतएव इस बार भी उन्होंने चुप हो जाना ही उचित समझा। इस प्रकार जेल-जीवनका कटु अनुभव करते हुए वे अपने समयको व्यतीत करते रहे।

उन्नीसवां अध्याय

सन्ध्या हो चुकी है। आठ बजेकी गाड़ीसे पं० उमाशंकर रामपुर पधारने वाले हैं। ग्रामके असंख्य व्यक्ति बड़े उत्साहके साथ लक्ष्मीनारायणकी अधीनतामें नियमित समयके बहुत पहले ही उनका स्वागत करनेके लिये स्टेशनपर जा पहुंचे हैं। स्टेशनसे उन्हें ग्रामतक ले जानेके लिये उन लोगोंने एक घोड़ा-गाड़ीका भी प्रवन्ध कर रखा है। बहुतसे आदमियोंके इकट्ठा रहनेके कारण बातचीत करते-करते समय बड़ी तेजीके साथ बीतता गया और अगले स्टेशनसे कानपुरवाली गाड़ीके छोड़े जानेकी खबर आई। अब पन्द्रह-बीस मिनटके भीतर ही वे लोग पं० उमाशंकरको अपने बीच देख सकेंगे, यह सोचकर उनका हृदय अपूर्व उत्साहसे भर गया।

एकाएक उन लोगोंने एक मोटरको स्टेशनकी ओर आते देखा। मोटरकी आवाजसे कुछ लोग समझ गये कि यह रामकिशोर बाबूकी गाड़ी है। देखते ही देखते मोटर स्टेशनपर आ लगी और रामकिशोर प्रसाद उससे उतरकर सीधे स्टेशन मास्टरके कमरेमें चले गये। उनके आगमनसे सभी बड़े आश्चर्यमें पड़े। अपनी बुद्धिके अनुसार वे तरह तरहका अनुमान करने लगे। अन्तमें अधिकांश लोगोंने निश्चय किया कि ये कहीं बाहर जानेवाले हैं और इस कारण गाड़ीका समय समीप आनेपर

स्टेशन पहुंच गये हैं। वे लोग उनके सम्बन्धमें इस प्रकार बातें कर ही रहे थे कि गाड़ी धक-धक करती हुई स्टेशनपर आ लगी। गाड़ीके आते ही सभी लोग "पं० उमाशंकरजीकी जय", 'पं० दीनानाथजीकी जय" आदिके नारे बुलन्द करने लगे। पंडितजीके प्लेटफार्मपर उतरते ही लक्ष्मीनारायणने उनके गलेमें एक फूलकी माला डाल दी और सभी कोई जयजयकार करते हुए उनके पीछे पीछे चले।

वे दो-चार कदम ही आगे बढ़े होंगे कि स्टेशनमास्टरने शीघ्रतासे उनके समीप आकर धीरेसे कहा—"हुजूर, क्या दो-चार मिनटके लिये मेरे कमरेमें जानेका कष्ट स्वीकार करेंगे ?"

पं० उमाशंकर—"यदि आपको कोई आवश्यकता हो, तो अवश्य चलूंगा।"

स्टेशनमास्टर—"जी हां, मुझे आपके साथ एक आवश्यक बात करनी है।"

स्टेशनमास्टरकी बातें सुनकर, वे सभी लोगोंको चुपचाप वहीं खड़े रहनेका आदेश दे, उनके साथ उनके कमरेकी ओर चले। वहां पहुंचनेपर उन्होंने स्टेशनमास्टरसे कहा—"आप कृपया मुझे शीघ्र छुटकारा दे दें। अधिक विलम्ब करनेसे बाहरके लोगोंको कष्ट होगा।"

स्टेशनमास्टर—"हुजूरने यहांके रईस बाबू रामकिशोर प्रसादका नाम अवश्य ही सुना होगा।"

पं० उमाशंकर—"जी हां।"

स्टेशनमास्टरसाहब रामकिशोर बाबूकी बाँह पकड़ते हुए बोले--"आज बड़ी प्रसन्नताके साथ मैं बाबूसाहबसे हुजूरका परिचय कराना चाहता हूं । अब ये सच्चे हृदयसे अपने अत्याचारपूर्ण कार्यों के लिये पश्चाताप कर रहे हैं और हुजूरसे क्षमाकी आशा रखते हैं।"

पं० उमाशंकर रामकिशोर प्रसादकी ओर मुंह करते हुए बोले--"आपसे मिलकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। यह बड़ी खुशीकी बात है कि आपको अब अपनी गलतीका पता लग रहा है। मैं हर प्रकारसे आपकी सेवा करनेके लिये तैयार हूं।"

आँखोंसे आंसू गिराते हुए रामकिशोर प्रसाद बोले--"आप मनुष्यके रूपमें साक्षात देवता हैं। भला, आपसे बढ़कर त्याग दूसरा कौन कर सकता है ? मैं आपका दर्शनकर, कृतार्थ हो गया।"

रामकिशोर प्रसादकी पीठपर हाथ फेरते हुए पंडितजी बोले—"आपके इस सच्चे पश्चातापको देखकर, मेरा हृदय गद्-गद हो गया। आप व्यर्थ दुखित न हों। यदि दिनभरका भूला-भटका शामको घर लौट आता है, तो वह भूला हुआ नहीं कहलाता है।"

रामकिशोर प्रसाद—"मैंने बहुत बड़ा पाप किया है। इस जन्ममें तो इसका प्रायश्चित्त किसी प्रकार सम्भव नहीं है।"

पं० उमाशंकर--"प्रायश्चित्त क्यों नहीं हो सकता है ? वाल्मीकी पहले डाकू थे। राक्षसोंकी तरह अमानुषिक कार्य किया

करते थे। पर हृदयमें ज्ञान उत्पन्न होनेपर वे महर्षिके पदको प्राप्त कर सके। अतएव मनुष्यके लिये सभी कुछ सम्भव है। दुनियामें ऐसा कोई कार्य नहीं, जिसे चेष्टा करनेपर मनुष्य न कर सके। वाल्मीकीजीके अमानुषिक कार्यों को देखते हुए तो आपके अत्याचारपूर्ण कार्य कुछ भी नहीं हैं। जब वे महर्षिके पदको प्राप्त कर सके, तो आप अपने अत्याचारोंका प्रायश्चित्त भी नहीं कर सकते हैं, इसका तो मैं कोई कारण नहीं देखता। यदि आप चाहें, तो थोड़े प्रयत्नसे भी अपने जीवनको गौरवपूर्ण बना सकते हैं। इसे दीन दुःखियोंकी भलाईमें लगा सकते हैं।"

रामकिशोर प्रसाद—"आप लोगोंके सत्संगसे बहुत कुछ लाभ हो सकता है।"

पं० उमाशंकर—"खैर, अभी आप क्षमा करें। मैं अभी जल्दीमें हूं। यदि आप चाहें, तो कल भोरमें मुझसे मिल सकते हैं।" इतना कह कर वे कमरेसे बाहर निकलने लगे। पर बीचमें ही रास्ता रोककर रामकिशोर प्रसादने कहा—"आपसे मैं एक निवेदन करना चाहता हूं।"

पं० उमाशंकर—"बोलिये, क्या आज्ञा है?"

रामकिशोर प्रसाद—"आप आज मेरे यहां पधारनेकी कृपा करें।"

पं० उमाशंकर—"पर मेरे ठहरनेका प्रवन्ध तो लक्ष्मीनारायणने कहीं कर रखा होगा।"

रामकिशोर प्रसाद—"प्रबन्ध तो कहीं-न-कहीं अवश्य ही

हुआ होगा। पर मेरी आन्तरिक इच्छा है कि अपने चरणोंसे आप मेरी झोंपड़ीको पवित्र करें।"

पं० उमाशंकर—"पर ऐसा करनेसे मजदूर संघवालोंको कष्ट हो सकता है।"

रामकिशोर प्रसाद—"आपके समझानेसे वे लोग अवश्य मान जायँगे।"

पं० उमाशंकर—"पर ऐसा करना जरा सभ्यताके विरुद्ध मालूम पड़ता है। आपके यहाँ ठहरनेसे वे लोग समझेंगे कि हम लोगोंके यहाँ तकलीफ होनेके भयसे पंडितजी बाबूसाहबके यहाँ ठहर गये हैं। इसके साथ ही मेरे इस आचरणसे उन लोगोंके दिलपर गहरी चोट लगनेकी सम्भावना है। अतएव ऐसा करना मैं किसी प्रकार उचित नहीं समझता हूँ।"

रामकिशोर प्रसाद—"आपके समझाने-बुझानेसे उनको किसी प्रकारकी चोट नहीं लग सकती है। जो व्यक्ति लोक-सेवाके लिये डिप्टी मजिस्ट्रेटका पद छोड़ चुका है, वह एक झोंपड़ेमें रहनेसे किस प्रकार घबरा सकता है? अतएव यहाँ तो यह प्रश्न ही नहीं उठता कि आप उन लोगोंके यहां कष्ट पानेके भयसे मेरे यहाँ ठहरेंगे। अतएव मेरा निवेदन स्वीकार किया जाय।"

पं० उमाशंकरने मुस्कुराते हुए कहा—"क्या आपने मुझे अपने यहाँ ले चलनेका दृढ़ निश्चय कर लिया है?"

रामकिशोर प्रसाद—"कोई दूसरा रास्ता न मिलनेपर मैं सत्याग्रहद्वारा भी आपको अपने यहाँ जरूर ले चलूँगा।"

रामकिशोर प्रसादका यह प्रेम देखकर पं० उमाशंकरका हृदय भर आया और वे रुग्ध कंठसे बोले—"जब आप इतना आग्रह कर रहे हैं, तो मैं आपके यहाँ ही ठहरूँगा।" इतना कहते हुए वे उनके साथ बाहर आये।"

बाहर सब लोग बड़ी उत्सुकतापूर्वक उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे। पर रामकिशोर प्रसादके साथ उन्हें आते देखकर सभी आश्चर्यमें पड़ गये। वास्तविक रहस्यका कुछ भी पता नहीं रहनेके कारण, वे कौतूहलपूर्ण दृष्टिसे उनकी ओर देखने लगे। इतनेमें पं०उमाशंकरजीने लक्ष्मीनारायणको बुलाकर कहा—"आपके रईस बाबू रामकिशोर प्रसादका प्रवल आग्रह है कि मैं उनका आतिथ्य ग्रहण करूँ। अतएव आपलोग यदि किसी प्रकार बुरा न मानें, तो मैं इनकी आज्ञाको शिरोधार्य करूँ।"

कुछ आश्चर्यके साथ लक्ष्मीनारायणने उत्तर दिया—"आप जैसा उचित समझें।"

पं० उमाशंकर—बाबूसाहब बहुत प्रबल आग्रह कर रहे हैं। अतएव इनके आग्रहको टालना मैं उचित नहीं समझता।"

मुस्कुराते हुए लक्ष्मीनारायणने उत्तर दिया—"क्या आप झोंपड़ेके बदले महलमें ही रहना पसन्द करेंगे?"

हँसकर पं० उपाशंकर बोले—"अभी तो हालमें ही डिप्टी कलक्टरी छोड़ी है न? इसीसे महलोंमें ठहरनेका चस्का अभीतक नहीं गया है। आपलोग क्षमा करें। मैं बाबूसाहबके प्रबल आग्रहको रोकनेमें सर्वथा असमर्थ हूँ। इसके साथ ही आपलोगोंको

यह सुनकर प्रसन्नता होगी कि रामकिशोर प्रसाद अब अपने पहले अत्याचारोंके लिये हृदयसे पश्चाताप कर रहे हैं।"

लक्ष्मीनारायण—"तो उन्हीं के यहाँ ठहरनेका निश्चय हुआ?"

पं० उमाशंकर—"जी हाँ।"

पंडितजीके मुखसे इस बातको सुनकर सब लोग चुप रह गये और उन लोगोंको धन्यवाद देते हुए पंडितजी रामकिशोर प्रसादकी मोटरपर सवार हो गये।

यह समय रामकिशोर प्रसादके जीवनके लिये क्रान्तिका है। वे पुराने रास्तेको छोड़कर, नये पथपर अग्रसर हो रहे हैं। अन्धेको आँख होनेसे, लँगड़ेको पैर होनेसे, पुत्रविहीनको पुत्र होनेसे तथा दरिद्रको धन होनेसे जो प्रसन्नता होती है वही प्रसन्नता कर्त्तव्य-भ्रष्टको कर्त्तव्यारूढ़ होनेपर होती है। आज रामकिशोर प्रसाद अन्धकारको छोड़कर प्रकाशमें आ रहे हैं। अन्याय तथा अत्याचारके बदले न्याय तथा दयाकी छायाके नीचे आ रहे हैं। मनुष्यता-की परिभाषाको भी कलंकित करनेवाले दारोगा बलवीर सिंहके बदले तपस्वी उमाशंकरको अपना हृदय अर्पण करने जा रहे हैं। अतएव इस समय उनके हृदयमें जोश है, आत्मामें उमंग है, शरीरमें स्फूर्ति है तथा आँखोंमें परमेश्वरकी दिव्य मूर्ति है। उनका हृदय अभी समुद्रकी तरह उमड़ रहा है, पहाड़की तरह विशाल होता जा रहा है तथा सत्यकी तरह व्यापक होनेकी चेष्टा कर रहा है। ऐसी स्थितिमें उन्होंने पं० उमाशंकरका जो सत्कार किया, उसके सम्बन्ध-में कुछ लिखना व्यर्थ है।

वे लोग साढ़े आठ बजेके करीब स्टेशनसे लौटे थे। पंडितजी-के लिये एक सुसज्जित कमरेमें पहलेहीसे सभी चीजोंका प्रबन्ध था। मोटरसे उतरते ही दो नौकर उनकी सेवाके लिये नियुक्त कर दिये गये। नित्य क्रियासे निपटनेके बाद कुछ जलपान करनेका आग्रह करने पर इच्छा न रहते हुए रामकिशोर बाबूके अपार प्रेमने उन्हें कुछ जलपान करनेके लिये वाध्य किया। जलपानके पश्चात् पंडितजीसे बातें करनेके विचारसे उनके कमरेमें वे आये। उस समय पंडितजी स्वयं उन्हें बुलवाने वाले थे। पर उनको स्वतः आते देखकर वे बड़े प्रसन्न हुए तथा उनके आतिथ्यकी प्रशंसा करते हुए बोले—"मुझे अपने यहां ठहरानेका विचार आपके हृदयमें किस प्रकार उठा?"

रामकिशोर प्रसाद—"भला कौन अभागा आप जैसे तप-स्वीकी सेवाकर कृतार्थ होना न चाहेगा? यह मेरा सौभाग्य है कि आपकी थोड़ी बहुत सेवा करनेका मुझे अवसर प्राप्त हुआ है।"

पं० उमाशंकर—"एकाएक आपके विचारमें इस प्रकार परि-वर्त्तन किस तरह हुआ?"

रामकिशोर प्रसाद—"अन्धकार अधिक दिनों तक नहीं ठहरता है। किसी न किसी समय उसका अन्त जरूर होता है।"

पं० उमाशंकर—"पर अन्धकारके नाश होनेका कोई न कोई कारण अवश्य होता है।"

रामकिशोर प्रसाद—"जी हां, कारणके बिना कोई कार्य किस प्रकार हो सकता है?"

पं० उमाशंकर—"इससे माल्म पड़ता है कि आपके विचार-में परिवर्तनका भी कोई न कोई कारण अवश्य होगा।"

रामकिशोर प्रसाद—"इसमें क्या सन्देह है?"

पं० उमाशंकर—"मैं इसीका कारण जानना चाहता हूं।"

रामकिशोर प्रसाद—"दारोगा बलवीर सिंहके विश्वासघातने मेरी आंखोंको खोल दिया। इसके साथ ही आपके त्यागका समाचार सुनकर, मेरी आत्माने एक अपूर्व प्रकाशका दर्शन किया और उसी प्रकाशने मेरे हृदयको बहुत कुछ पवित्र कर दिया।"

पं० उमाशंकर—"बनवारीके खूनसे आपका क्या सम्बन्ध है?"

रुग्ध कंठसे रामकिशोर प्रसादने उत्तर दिया—"हुजूर! मैं खूनी हूं। मेरी आज्ञासे उस निर्दोषका खून हुआ है। इसके लिये मुझे जो कुछ सजा मिले, उसे झेलनेके लिये मैं सहर्ष तैयार हूं।"

पं० उमाशंकर—"बीती बातोंके लिये शोक करना व्यर्थ है। इससे हानिके सिवा कोई लाभ नहीं हो सकता है। ऐसी अवस्थामें प्रतिकारका रास्ता ढूंढ़ निकालना ही अधिक लाभप्रद होता है। अतएव आपको बनवारीके परिवारको ओर अवश्य ध्यान देना चाहिये।"

रामकिशोर प्रसाद—"उन लोगोंका आजन्म भरणपोषण करनेका मैंने निश्चय कर लिया है। इसके सिवा आप जो आज्ञा दें, उसे शिरोधार्य करनेके लिये मैं तैयार हूं।"

पं० उमाशंकर—"उन लोगोंका भरणपोषण करना ही

यथेष्ट होगा। पर यह कार्य आपको सच्चे हृदयसे करना चाहिये। कहीं ऐसा न हो कि कुछ दिनोंके बाद आप उन लोगों-की ओरसे उदासीन हो जायँ। कार्य थोड़ा भी हो, पर उसका स्थायी होना आवश्यक है।"

रामकिशोर प्रसाद—"चेष्टा तो ऐसी ही करूंगा। इसके साथ ही मैं आपको विश्वास दिलाना चाहता हूँ कि इस जन्ममें मैं किसी प्रकारका विश्वासघातपूर्ण कार्य नहीं कर सकता हूं। भविष्यका मालिक भगवान है।"

पं० उमाशंकर—"खूनके मामलेसे भी तो आपका कुछ सम्बन्ध है?"

रामकिशोर प्रसाद—"जी हाँ।"

पं० उमाशंकर—"उस मामलेकी क्या अवस्था है?"

रामकिशोर प्रसाद—"उससे छुटकारा पा जानेकी सम्भावना है।"

पं० उमाशंकर—"क्या दारोगासाहबने आपके पक्षमें रिपोर्ट दी है?"

रामकिशोर प्रसाद—"उनकी रिपोर्ट मेरे पक्षमें तो अवश्य है। पर बड़े ही लज्जाजनक तरीकेसे उन्होंने ऐसा किया है।"

पं० उमाशंकर—"किस प्रकार?"

रामकिशोर प्रसाद—"दारोगासाहबको खुश करनेके लिये ही मैंने बनवारीके साथ इतना अत्याचार किया था। उसकी हत्यामें भी उनका पूरा हाथ था। इतना होते हुए भी पाँच हजार रुपये

लेनेपर उन्होंने मेरे पक्षमें रिपोर्ट दी। उनके इस व्यवहारको देख-कर तो मैं दंग रह गया।"

पं० उमाशंकर—"तब तो दारोगासाहबने आपको बहुत धोखा दिया। क्या उसी समयसे आपके विचारमें परिवर्तन हुआ?"

रामकिशोर प्रसाद—"जी हाँ, उनके विश्वासघातने ही मेरी आंखोंकी पट्टी खोल दी। अब मैं आपकी शरणमें आया हूं। अपराध तो मेरा अक्षम्य अवश्य है। पर आप जैसे उदार व्यक्तिकी कृपा-का क्षेत्र भी बहुत ही विस्तृत होता है। अतएव मुझे आशा है कि आप मुझे अवश्य ही क्षमा करेंगे।"

पं० उमाशंकर—"बाबू साहब! इसमें आपका कोई कसूर नहीं है। इस संसारका सभी कार्य ईश्वरकी प्रेरणासे होता है। मनुष्य तो कार्योंका साधनमात्र है। और यही कारण है कि कोई कार्य करते समय मनुष्यको उसके फलका पूरा पूरा पता नहीं रहता है। यदि ईश्वरकी इच्छा होती है, तो कभी कभी बुरे कार्योंका भी अन्तिम फल अच्छा होता है। आपकी वर्तमान अवस्था मेरे कथनके प्रमाण स्वरूप है। बनवारीके प्रति अत्या-चारका होना एक बहुत ही बुरा कार्य हुआ। पर सम्भव है कि इस अत्याचारके प्रायश्चित्तस्वरूप ईश्वर आपद्वारा ऐसा कार्य करावे, जिससे मनुष्यमात्रका कल्याण हो। अतएव आप शोक छोड़कर अपने वर्तमान कर्त्तव्यका निश्चय करें और उसी ओर दृढ़ताके साथ अग्रसर हों।"

रामकिशोर प्रसाद—"मैंने अपना हृदय आपको अर्पण कर

दिया है। अब आपकी जैसी आज्ञा होगी, मैं वैसा ही करूंगा।"

पं० उमाशंकर—"क्या आप लोक-सेवाका कार्य करना चाहते हैं ?"

रामकिशोर प्रसाद—"इससे बढ़कर आनन्द और किस कार्यमें मिल सकता है ? आप अपने महान पदको त्यागकर, जिस पथके पथिक बने हैं, क्या मैं भी उसी रास्तेपर चलकर गौरवका अनुभव नहीं कर सकता हूं ? मैंने सुना है कि आप इस ग्राममें एक आश्रम खोलना चाहते हैं। यदि इस महान कार्यमें आपको मेरी सेवा स्वीकार हो, तो मैं हर प्रकारसे आपकी सेवा करनेके लिये तैयार हूं।

पं० उमाशंकर—"आपकी सहायतासे मैं बड़ी आसानीके साथ अपने उद्देश्यकी पूर्त्ति कर सकूंगा। पर क्या मजदूर आन्दोलनमें भाग लेना आपके सिद्धान्तके विरुद्ध न होगा ?"

रामकिशोर प्रसाद—"मालूम पड़ता है कि आप अभीतक मुझपर पूरा पूरा विश्वास नहीं कर रहे हैं। और यह बहुत कुछ उचित भी है। क्योंकि निर्दोषोंको सतानेके पापका प्रायश्चित्त केवल शब्दोंद्वारा नहीं हो सकता है। आप मुझे अवसर दें, जिससे मैं कार्योंद्वारा अपने शब्दोंकी यथार्थता प्रमाणित कर सकूं।"

पं० उमाशंकर—"आपपर विश्वास ही विश्वास है। केवल आपकी आन्तरिक भावना जाननेके विचारसे मैंने आपसे वह प्रश्न पूछा था। आपका हृदय इतना शुद्ध देखकर मुझे बड़ा आनन्द हुआ।"

रामकिशोर प्रसाद—"यहांके आश्रमके सम्बन्धमें आपका वर्तमान कार्यक्रम क्या है ?"

पं० उमाशंकर—"स्थान आदिका निर्णय हो जानेके बाद मैं शीघ्र ही रुपया एकत्रकर, उसके लिये मकान बनवानेके कार्यको आरंभ कर देना चाहता हूं।"

रामकिशोर प्रसाद—"आश्रमके लिये जमीन मैं मुफ्त दे दूँगा। इसके साथ ही मकानके लिये पांच हजार नकद देनेका भी मैंने निश्चय किया है। कल आप मेरे साथ चलकर जमीन पसन्द करें। आप जो जगह पसन्द करेंगे, उसीका प्रबन्ध कर दिया जायगा।"

पं० उमाशंकर—"इस सात्विक दानके लिये मैं आपको हृदय-से धन्यवाद देता हूं। ईश्वर आपमें इस जागृतिको सदा कायम रखे। भविष्यमें आपसे मुझे बहुत कुछ आशा है।"

रामकिशोर प्रसाद—"यह सब आपकी कृपाका फल है।"

इस प्रकार बातें करते करते भोजनका समय हो गया और नौकरने भोजन प्रस्तुत होनेकी खबर दी। अतएव वे वार्तालापको बन्दकर भोजन करनेके लिये चले। पंडितजी रास्तेके थकेमांदे थे। अतएव भोजनके पश्चात् वे चुपचाप बिस्तरेपर आकर लेट रहे।

दूसरे दिन प्रातःकाल ही लक्ष्मीनारायण तथा लाला हरिकिशुन पंडितजीसे मिलनेके लिये आये। उनके मुखसे रामकिशोर प्रसादके वर्तमान परिवर्तनकी बात सुनकर, उन लोगोंको बड़ा ही

आश्चर्य हुआ। पहले तो वे लोग किसी प्रकार इस बातपर विश्वास करनेके लिये तैयार न हुए। उन लोगोंने कहा कि बनवारीके मामलेसे जान बचानेके लिये वे इस प्रकारका ढोंग कर रहे हैं। पर पंडित-जीद्वारा विश्वास दिलाये जानेपर उन लोगोंने रामकिशोर प्रसादके इस परिवर्तनपर बड़ी प्रसन्नता प्रकट की। आश्रमके लिये जमीन तथा पाँच हजार रुपये मिलनेकी बात सुनकर तो वे और भी प्रसन्न हुए तथा भविष्यमें रामकिशोर प्रसादके नेतृत्वमें कार्य करनेके लिये तैयार हो गये। वे लोग पंडितजीके साथ आश्रमके सम्बन्धमें बातें कर ही रहे थे कि बनारसीलाल, चरणदास तथा रामशरण वहाँ आ पहुँचे।

आते ही रामशरण पं० उमाशंकरके पैरोंपर गिरकर बोला--"सरकार, अब हमलोगोंका कसूर माफ कर दिया जाय। हमने जैसा बोया, वैसा काटा, अब अधिक कष्ट नहीं सहा जाता।"

उसकी बातें सुनकर लक्ष्मीनारायणकी ओर देखते हुए पं० उमाशंकर बोले—"ये लोग कौन हैं और किस प्रकारके कष्टमें पड़े हुए हैं?"

लक्ष्मीनारायण—"पं० दीनानाथजीके मामलेमें गवाही देते समय इन लोगोंने विश्वासघात किया था और उस अपराधके कारण ये लोग समाजसे बहिष्कृत हैं।"

लक्ष्मीनारायणकी बात समाप्त होते ही रामशरण करुण शब्दोंमें बोला—"सरकार, हमलोगोंका शादी-विवाह भी बन्द कर दिया गया है। शादी करने लायक मेरा एक लड़का है। पर इन

लोगोंके हल्ला-गुल्ला मचानेके कारण मेरे यहां कोई शादी करना चाहता ही नहीं।"

पं० उमाशंकर—"तुम्हारे लड़केकी क्या अवस्था है ?"

रामशरण—"हुजूर, वह दस वर्ष तीन महीनेका हो चुका है। यदि इस साल उसकी शादी नहीं हुई, तो पीछे रुपया लिये बिना कोई शादी करनेके लिये तैयार ही नहीं होगा।"

पं० उमाशंकर—"इसका कारण ?"

रामशरण—"सरकार, हमलोगोंके यहां बचपनमें ही शादी होती है। लड़का बड़ा हो जानेसे लोग समझते हैं कि किसी अवगुणके कारण बचपनमें इसकी शादी नहीं हुई और इसी कारणसे दस वर्षसे अधिक उम्रके लड़कोंकी शादी बड़ी कठिनाईसे होती है।"

पं० उमाशंकर—"पर लड़का जबतक अपना भरण पोषण करने लायक स्वयं न हो जाय, तबतक उसपर स्त्रीका बोझ लादना किस प्रकार उचित है ?"

इस प्रश्नको सुनकर रामशरण जरा मुस्कुराता हुआ बोला— "सरकार, यदि मां बाप अपनी पतोहूकी तोतली बोली न सुनें, तो फिर उनका कलेजा किस प्रकार ठंढा हो सकता है? शादी हो जानेसे लड़केपर स्त्रीका भार थोड़े ही पड़ता है ? यदि लड़केपर ही स्त्रीका भार पड़े तो मां बाप क्या भार झोंकनेके लिये रहेंगे ?"

पं० उमाशंकर—"क्या स्त्रीका भार मां बापके ऊपर रहता है ?"

रामशरण—"जी हां, जरूर।"

पं० उमाशंकर—"यदि अभाग्यवश माँ बापकी मृत्यु हो जाय, तो उन्हें कौन सम्हालेगा ? ऐसी अवस्थामें तो लड़केका जीवन स्वयं संकटापूर्ण रहेगा। फिर वह स्त्रीका बोझ किस प्रकार सम्हाल सकता है ?"

रामशरण—"जीना और मरना तो इस संसारका काम ही है। पर शादी जैसे शुभ काममें कोई मृत्युकी बात नहीं सोचता है।"

पं० उमाशंकर—खैर, समय मिलनेपर पीछे मैं इस विषयको तुम्हें पूर्ण रूपसे समझाऊंगा।"

रामशरण—"वहिष्कारके सम्बन्धमें क्या आज्ञा हुई ? यदि अधिक दिनों तक वहिष्कारका क्रम जारी रहेगा, तो हमलोग बेमौत ही मर जायंगे।"

पं० उमाशंकर—"मैं तुम लोगोंको वहिष्कार-बन्धनसे मुक्त कर सकता हूं, अगर तुम पाँच वर्षके बाद अपने लड़केकी शादी करनेकी प्रतिज्ञा करो।"

रामशरण चौंकता हुआ बोला—"बापरे बाप ! पांच वर्षके बाद लड़केकी शादी ? भला, यह किस प्रकार हो सकता है ? मुझ-पर कुछ भी तो दया कीजिये।"

पं० उमाशंकर—"ऐसी प्रतिज्ञा नहीं करनेसे मैं इस मामलेमें किसी प्रकार हस्तक्षेप नहीं कर सकता हूं।"

पंडितजीकी इस बातको सुनकर बनारसीलाल तथा चरणदास-ने उससे कहा—"अजी, इस शर्तको मान लेनेमें क्या हर्ज है ? वहिष्कार-बन्धन छूट जानेपर सारा कष्ट दूर हो जायगा। पांच

वर्षका समय तो चुटकी बजाते बजाते व्यतीत हो जायगा। फिर तुम अपने लड़केकी शादी कर लेना।"

रामशरण—"तुम लोगोंके लड़कोंकी शादी हो चुकी है। इसी कारण इस प्रकारकी बातें कर रहे हो। तुम लोगोंको अब परवाह ही क्या है?"

लक्ष्मीनारायण—"व्यर्थका झमेला करनेसे कोई लाभ नहीं हो सकता है। यदि पंडितजीकी बात मंजूर न हो, तो इस समय तुमलोगोंके वहिष्कारके सम्बन्धमें किसी प्रकारका फैसला नहीं किया जा सकता है।"

बनारसीलाल—"पर शादीके प्रश्नसे तो केवल रामशणरका ही सम्बन्ध है। फिर हमलोग क्यों उसके साथ कष्ट पाते रहेंगे?"

पं० उमाशंकर—"तुमलोग सब कोई मिलकर रामशरणको यह शर्त माननेके लिये वाध्य करो।"

बनारसीलाल—"पर यदि वह हमलोगोंकी बात न माने?"

पं० उमाशंकर—"फिर इसकी कोई दवा नहीं है। वह वहिष्कृत रहे और तुमलोग वहिष्कार-बन्धनसे छूट जाओ, इसका कोई कारण भी तो नहीं दीखता? यदि उसका पुत्र अविवाहित है, तो यह उसका कोई कसूर नहीं है, जिससे वह तुमलोगोंसे अधिक दिनों तक वहिष्कारके कष्टको झेलता रहे। चूंकि इस प्रथासे बड़ी हानि हो रही है, इसी कारण मैं इस विषयपर इतना जोर दे रहा हूं। रामशरणके पहले तुमलोग किसी प्रकार वहिष्कारके झमेलेसे नहीं छूट सकते हो।"

पंडितजीकी इस बातको सुनकर उन लोगोंने रामशरणको बहुत समझाया। पर वह किसी प्रकार उस शर्तको माननेके लिये तैयार नहीं हुआ। अन्तमें वे लोग हताश होकर लौट गये।

उन लोगोंके जानेके बाद पंडितजीने स्नान करके कुछ जलपान किया और उसके बाद रामकिशोर बाबूके साथ आश्रमके लिये जगह पसन्द करनेके लिये निकले। चारों ओर घूमनेके बाद पंडितजीने तालाबके किनारे एक जगहको पसन्द किया। उसका क्षेत्रफल लगभग दस बीघेका था। रामकिशोर प्रसाद बड़ी प्रसन्नताके साथ आश्रमके नामसे उस जगहकी रजिस्ट्री कर देनेके लिये तैयार हो गये और वहीं आश्रम बननेका निश्चय हुआ।

घूमने फिरनेमें बहुत समय लग गया था। लगभग बारह बजे लोग लौटे। अधिक थक जानेके कारण पंडितजीने थोड़ी देरतक विश्राम किया और उसके बाद भोजन करनेके लिये गये।

उसी दिन शामकी गाड़ीसे उन्हें कानपुर जाना था। अतएव आश्रमके सम्बन्धमें वे इस बार कोई अधिक कार्य न कर सके। जगहका प्रबन्ध हो ही गया था। इसके साथ ही पाँच हजार नकदका भी वचन रामकिशोर प्रसाद दे चुके थे। अतएव संध्या समय सभी लोगोंको धन्यवाद देते हुए पंडितजीने कानपुरके लिये प्रस्थान किया।

——

बीसवाँ अध्याय

जब सूर्य पूरे प्रकाशसे संसारमें चमकते रहते हैं, उस समय कोई व्यक्ति उनके प्रकाशका मूल्य नहीं समझता। पर जब संध्याके समय सूर्य भगवान अस्त होनेके लिये अस्ताचलकी ओर अग्रसर होते हैं और संसारमें शीघ्र ही घोर अन्धकारका साम्राज्य होनेवाला होता है, उस समय सभी लोगोंको सूर्य भगवान-के प्रकाशसे होनेवाले लाभका अनुभव होने लगता है और अन्धकारके भयसे घबराकर भगवान-भास्करकी ओर आशापूर्ण दृष्टिसे देखते हुए मानो वे कहते हैं—"भगवान-भास्कर! ठहरो, ठहरो! तुम्हारे बिछोहमें हमने तुम्हारे लाभका अनुभव किया है। तुम्हारे अस्तमें तुम्हारे उदयकी महत्ता हमारी आँखोंके सामने आई। यह हमारा दुर्भाग्य था कि अबतक हम तुम्हारी ओरसे उदासीन रहे। अतएव हमारे अपराधोंको क्षमाकर, हमें प्रकाश दो। अन्धकारके कष्टसे हमें बचाओ।"

जलके सुलभ रहनेपर मनुष्य उसकी आवश्यकता तथा महत्ताका पूर्ण रीतिसे अनुभव नहीं करता है। उस समय वह जलको ईश्वरप्रदत्त प्रचुर परिमाणमें उत्पन्न होनेवाला एक तरल पदार्थमात्र समझता है। पर जब किसी मरुभूमि अथवा जंगलमें प्यासके कारण उसके प्राण पखेरू उड़ने लगते हैं, तथा चेष्टा करने-पर भी जल नहीं मिलता, उस समय वह रोम-रोमसे जलकी

आवश्यकताका अनुभव करता है। प्याससे संतप्त होकर उसकी आत्मा कहती है—"जलदेव! अब मैंने समझा कि तुम कितना मीठा, गुणकारी तथा दुर्लभ हो। हाय, तुम्हारे बिना अब मेरा दम घुट रहा है। आकर मेरी रक्षा करो, मुझे बचाओ, मैं मर रहा हूँ।"

जिस समय मनुष्यके पास यथेष्ट धन रहता है, उस समय उसके मूल्यको वह पूर्ण रीतिसे नहीं समझता। बात बातमें रुपयोंको पानीकी तरह बहा डालता है। पर धनके समाप्त होजानेपर,(दरिद्रताके कारण जब उसे उपवास करना पड़ता है, रोते हुए बच्चों तथा बिलखती हुई स्त्रीके दुखद दृश्यका सामना करना पड़ता है, तब रुपयेकी उपयोगिताका पूरी रीतिसे अनुभव करती हुई उसकी आत्मा कहती है—"हाय, मेरे पास यदि एक पैसा भी रहता, तो उसका सत्तू खाकर कम-से-कम दो-चार घंटे तो किसी प्रकार शान्ति मिलती। रुपये! पानीकी तरह तुझे खर्चकर मैंने तेरा बड़ा अपमान किया और मुझे आज उसीका फल भोगना पड़ रहा है।"

जिस समय मनुष्यके पास कोई सहायक रहता है, उस समय वह पूरी रीतिसे उसकी प्रतिष्ठा नहीं करता। वह समझता है कि अपने स्वार्थके लिये वह मुझसे घनिष्टता करनेकी चेष्टा कर रहा है। और इसी भावसे प्रेरित होकर वह उसकी ओरसे सर्वदा उदासीन रहा करता है। पर उसकी अनुपस्थितिमें जब उसे कष्टोंका सामना करना पड़ता है, उस समय उसकी आत्मा उसकी

सहायता, मित्रता तथा घनिष्टताका मूल्य समझती है और व्यथित होकर कहने लगती है—"आओ, मेरे सच्चे सहायक आओ! इस संकटसे मेरी रक्षा करो! पहले तुम्हारी अप्रतिष्ठाकर, मैंने बड़ी मूर्खता की। तुम्हारे बिना मैं बड़े कष्टमें हूँ। इस कष्टसे मुझे बचानेवाला तुम्हारे सिवा और कोई नहीं है।"

आज दारोगा बलवीरसिंहको भी यही अवस्था हो रही है। रामकिशोर प्रसादसे रुपये लेते समय उन्होंने समझा था कि कुछ दिनोंके बाद इस मामलेके पुराने हो जानेपर वे बाबूसाहबसे फिर किसी-न-किसी प्रकार घनिष्टता कर लेंगे। पर रामकिशोर प्रसादके वर्तमान परिवर्तनोंको देखकर उन्हें अपनी मूर्खताका नग्नस्वरूप दिखलाई देने लगा। रामपुरके अन्य लोग तो पहलेसे ही उनके विरुद्ध थे। पर रामकिशोर प्रसादसे घनिष्टता रखनेके कारण वे किसी प्रकार अपनी प्रतिष्ठा बचाये जा रहे थे। पर उनकी सहा-यतासे भी वंचित होनेपर दारोगासाहबकी स्थिति बड़ी ही नाजुक हो गयी। अब उनको पता लग रहा है कि रामकिशोर प्रसादसे उन्हें कितना लाभ था तथा उनके साथ विश्वासघातकर उन्होंने कितनी बड़ी गल्ती की। रुपया लेते समय उन्होंने स्वप्नमें भी न विचारा था कि इस घटनाके बाद बाबूसाहबके ख्यालोंमें इतना परिवर्त्तन हो जायगा। यदि वे जानते कि उनके विश्वासघातसे रामकिशोर प्रसादके जीवनमें एक क्रान्ति हो जायगी, तो सम्भवतः वे वैसा करनेका साहस कभी नहीं करते। पर अब भी उन्हें अपनी चतु-राईमें विश्वास है और उसी विश्वासके कारण उन्हें आशा है कि

वे अवश्य ही किसी-न-किसी प्रकार रामकिशोर प्रसादको अपने पक्षमें मिलानेमें समर्थ होंगे।

हृदयमें इसी प्रकारके उद्गार उठनेके कारण, आज कई दिनोंसे वे रामकिशोर प्रसादसे मिलना चाहते हैं। पर लज्जाके कारण लाख चेष्टा करनेपर भी वे उनके यहाँ जानेका साहस नहीं करते। बहुत उधेड़बुनके पश्चात आज उनसे मिलनेके लिये वे किसी प्रकार चले। पर उनके फाटकपर पहुँचनेपर भीतर जानेका उन्हें साहस न होता था। घोर पातकीकी तरह वे चुपचाप थोड़ी देरतक वहीं खड़े रहे। संयोगवश एकाएक रामकिशोर प्रसादकी दृष्टि उनपर पड़ी और उन्होंने बड़े आदरके साथ उन्हें अन्दर बुलाया।

बनवारीके मामलेके दिनसे आज दारोगासाहबके साथ उनकी पहली मुलाकात थी। दारोगासाहब उनके साथ बातें करनेमें भी संकोच कर रहे थे। उनके चेहरेको देखकर रामकिशोर बाबू भी समझ गये कि ये बहुत शर्माये हुए हैं। अतएव दारोगा-साहबके हृदयपर किसी प्रकारकी चोट न लगे, इस विचारसे उन्होंने उनके साथ बड़ी नम्रताका बर्ताव किया। कुशल क्षेम पूछनेके बाद उन्होंने कहा—"अब बनवारीके मामलेकी क्या दशा है?"

कुछ लज्जित भावसे दारोगा साहबने उत्तर दिया—"हुजूर, किसी आसामीका पता न लगनेके कारण, वह मामला आगामी पन्द्रह जूनको खारिज कर दिया जायगा। इस सम्बन्धमें आप किसी प्रकारकी चिन्ता न करें।"

रामकिशोर प्रसाद—"आपके रहते हुए मुझे चिन्ता करनेकी क्या आवश्यकता है ?"

दारोगासाहब—"हुजूर, मुझे ताना न मारा जाय। इस मामलेमें तो मैं आपका बहुत बड़ा कसूरवार हूं। भला, मुझसे बढ़कर विश्वासघाती दूसरा कौन हो सकता है ?"

रामकिशोर प्रसाद—"बीती बातोंके लिये शोक करना व्यर्थ है।"

दारोगासाहब—"यह बीती बात कैसे हुई ? इसका क्रोध तो अभी आपके हृदयमें ताजा होगा ?"

रामकिशोर प्रसाद—"क्रोधकी कौनसी बात है ? ईश्वरके प्रायः सभी कार्योंमें कोई-न-कोई गुप्त रहस्य अवश्य ही छिपा रहता है। जिस प्रकार अण्डाके फूटनेपर उससे सुन्दर जीव निकलता है, उसी तरह ईश्वरीय कार्योंके रहस्योद्घाटन होनेपर उसका सुन्दर स्वरूप आँखोंके सामने नाचने लगता है। कौन जानता था कि बनवारीकी हत्या जैसे घृणित कार्यद्वारा मुझे शान्ति मिलेगी ? पर ईश्वरकी ऐसी ही प्रेरणा थी। अतएव ऐसा ही हुआ।"

दारोगासाहब—"पर मेरा अपराध अक्षम्य है, और मैं आपसे माफी मांगनेके लिये आया हूं।"

रामकिशोर प्रसाद—"आपने कोई अपराध नहीं किया है। यदि आपके दिलमें इस प्रकारकी कोई बात हो, तो आप उसे सदाके लिये दूर कर दें।"

दारोगासाहब—"मैंने आपका बहुत बड़ा अपकार किया है।"

हंसते हुए रामकिशोर प्रसादने उत्तर दिया—"दारोगा-साहब! आपका ख्याल गलत है। आपने अपकारके बदले मेरा उपकार ही किया है। यदि आप बनवारीके मामलेमें लेनदेनकी बात नहीं करते, तो कौन जानता था कि मुझे कितने दिनोंतक और अन्धकारमें पड़ा रहना पड़ता। लेनदेनकी बातेंकर, आपने मेरे अन्धकारको सदाके लिये दूर कर दिया है। अतएव इस कृपाके लिये मैं आपको बराबर धन्यवाद ही देता रहूंगा।"

दारोगासाहब—"हुजूर, यदि आज्ञा हो, तो मैं हैण्डनोट आपके हवाले कर दूं। मैं अपनी गलतीपर अब पूरा पश्चात्ताप कर रहा हूं। अतएव आप मुझपर पूर्ववत भाव बनाये रखनेकी कृपा करें।"

रामकिशोर प्रसाद—"हैण्डनोट लौटानेकी कोई आवश्यकता नहीं है। मैंने आपसे पहले ही निवेदन कर दिया है कि आपके प्रति मेरा कोई बुरा भाव नहीं है। मैं सदा आपकी सेवा करनेके लिये तैयार हूं। पर अन्यायके रास्तेसे नहीं। न्यायपूर्ण कार्योंमें मैं आपकी यथाशक्ति सेवा करनेसे बाज नहीं आ सकता हूं; इसका आप विश्वास रखें।"

दारोगासाहबने जरा मुस्कराते हुए कहा—"अब तो आप बड़ी सफाईके साथ बातें करने लगे हैं। पर मैं आपको उसी भोलेभाले रूपमें देखना चाहता हूं, जिसमें पहले आपका दर्शन हुआ करता था।"

रामकिशोर प्रसाद--"दारोगासाहब! वह भोलापन नहीं था। वह था मेरे जीवनको सदा अन्धकारमें रखनेवाला पापका पर्दा। ईश्वरकी कृपासे आपके द्वारा मेरे सामनेसे वह पर्दा सदाके लिये हटा लिया गया है। अतएव ईश्वरके लिये आप मुझपर फिर उसी पर्देको डालनेकी चेष्टा न करें।"

दारोगासाहबने बातें पलटते हुए कहा—"मैंने सुना है कि आप मजदूर संघके लिये दस बीघा जमीन तथा पाँच हजार रुपया देनेवाले हैं। क्या यह बात सच है?"

रामकिशोर प्रसाद—"मजदूर संघके लिये तो नहीं, पर एक आश्रमके लिये मैं जमीन तथा रुपया अवश्य देना चाहता हूं।"

दारोगासाहब—"क्या यहां कोई आश्रम खुलेगा?"

रामकिशोर प्रसाद—"जी हां। कानपुरके भूतपूर्व डिप्टी मजिस्ट्रेट तथा 'निर्भय'के वर्तमान सम्पादक पं० उमाशंकरजी इस ग्राममें एक आश्रम बनवानेवाले हैं और मैंने उस आश्रमके लिये जमीन तथा पांच हजार रुपया देनेका वचन दिया है।"

दबी जबानसे दारोगासाहब बोले—"इन कामोंद्वारा आप अपनी सभी आशाओंपर पानी फेर रहे हैं। अगले सालतक मैं आपको अवश्य ही रायसाहबकी उपाधि दिलवा देता। पर कलक्टर साहबको आपके इन कार्योंका पता लग जानेसे, आपके प्रति उनके भावमें अवश्य ही परिवर्तन हो जायगा।"

रामकिशोर प्रसाद—दारोगासाहब! आप मुझे क्षमा करें। मनुष्य जबतक अन्धकारमें रहता है, तबतक उसे अन्धकारसे होने

वाले कष्टोंका पता नहीं लगता। वह उसको ही आदरकी दृष्टिसे देखता है। पर एक बार भी प्रकाशमें आ जानेपर वह सदाके लिये अन्धकारसे दूर रहना चाहता है। अन्धकारका नग्न स्वरूप उसके सामने भीषण रूपसे ताण्डवनृत्य करने लगता है। आकाश-कुसुमकी निःसारताकी तरह वह अन्धकारसे होनेवाले कल्पित लाभोंको सदाके लिये तिलांजलि दे बैठता है। भूलकर भी अन्धकारकी ओर जानेको उसे इच्छा नहीं रहती। अतएव रायबहादुरीका कल्पित स्वप्न अब मेरे लिये किसी कामका नहीं रहा।"

दारोगासाहब—"आप इस प्रकारकी बातें क्यों कर रहे हैं?"

रामकिशोर प्रसाद—"चूँकि अब मैं अन्धकारके बदले प्रकाशमें आया हूं।"

दारोगासाहब—"आपके मुँहसे इस प्रकारकी बातें सुनकर मुझे बड़ा आश्चर्य हो रहा है। मैं इस बातको समझनेमें सर्वथा असमर्थ हूं कि दो-तीन सप्ताहके अन्दर आपमें इस प्रकारका परिवर्तन किस प्रकार हो गया? क्या आपसमें मतभेद हो जानेके कारण अपने शत्रुओंका पक्ष समर्थन करना उचित है? मजदूर संघके झण्डेके नीचे आपको देखकर क्या लोग आपकी हँसी न उड़ावेंगे? अतएव बाबूसाहब! आप अपनी स्थितिपर फिरसे विचार करें। क्रोधके कारण व्यर्थ अपनी शानको आप मिट्टीमें न मिलावें। मेरे अपराधके कारण आप अपनी स्थितिमें परिवर्तन न होने दें। मैं तो अपने अपराधके लिये दण्ड भोगनेको तैयार हूं और आपसे दयाकी भिक्षा माँगता हूं।"

रामकिशोर प्रसाद—"दारोगासाहब ! मैं इस बातको मानता हूं कि आपसमें मतभेद हो जानेपर, अपने पक्षको छोड़, शत्रु-ओंका पक्ष समर्थन करना कायरता है—मूर्खता है। परन्तु अब प्रश्न यह उठता है कि मजदूर संघवालोंके साथ मेरी शत्रुता थी या नहीं ? मैंने इस प्रश्नपर बहुत विचार किया। पर अभी तक उनके साथ शत्रुता होनेका मुझे कोई कारण नहीं मालूम पड़ा। आप ही कहें, उनके साथ मेरी शत्रुताका कारण ही क्या हो सकता है ?"

दारोगासाहब—"वे आपके कार्योंका विरोध करते हैं, अधि-कारोंको चुनौती देते हैं; फिर इनसे बढ़कर आपका दूसरा शत्रु कौन हो सकता है ?"

रामकिशोर प्रसाद—"मेरे कार्य अन्यायपूर्ण थे। अतएव उनका विरोध करना शत्रुता नहीं, मित्रता कहा जायगा। मेरे कार्योंका वे विरोध करते थे—अस्तित्वका नहीं। ऐसी अवस्थामें हम उन्हें शत्रु कैसे कहें ? बुरे कार्योंका विरोध तो एक मित्र भी कर सकता है।"

दारोगासाहब कुछ रुकते हुए बोले—"पर वे तो आपके साथ शत्रुताका भाव रखते थे।"

रामकिशोर प्रसाद—"उन लोगोंके साथ मेरा केवल सिद्धान्त-का मतभेद था। पर सिद्धान्तका मतभेद शत्रुता नहीं कहला सकता है। गुरु-शिष्य, पिता-पुत्र तथा पति-पत्निमें भी कभी कभी सिद्धान्तका मतभेद रहा करता है। पर इस कारण वे एक दूसरेके

शत्रु नहीं कहला सकते। इन बातोंको देखते हुए भी मैं कैसे उन लोगोंको अपना शत्रु मान लूँ ? कई कारणोंसे अब मेरे सिद्धान्तमें परिवर्तन हो गया है। ऐसी अवस्थामें यदि मैं एक सच्चे विरोधीकी तरह अपनी पहली भूलको स्वीकारकर, उन लोगोंका पक्ष समर्थन न करूँ, तो इसमें गर्वके सिवा लज्जाकी कोई बात नहीं है। अतएव इस कामके द्वारा मेरी प्रतिष्ठाके मिट्टीमें मिलनेका आप किसी प्रकार भय न करें।"

दारोगासाहब—"क्या अब आप नीच लोगोंके साथ संसर्ग रखना पसन्द करेंगे ?"

रामकिशोर प्रसाद—"सभी ईश्वरके पुत्र हैं। इस संसारमें न कोई नीच है और न कोई ऊँच। अपने अपने कर्मके अनुसार सभी सुख दुखका उपभोग अवश्य करते हैं।"

दारोगासाहब—"आप तो बड़े कट्टर विचारके आदमी हो रहे हैं। क्या किसी तरह अपने विचारको बदल नहीं सकते ?"

रामकिशोर प्रसाद—"इस जन्ममें तो नहीं। अगले जन्मकी बात नहीं कह सकता।"

रामकिशोर प्रसादके यहाँ किसी तरह अपनी दाल गलती न देख दारोगासाहबने, टूटे हुए हृदयको लेकर उनके यहाँसे प्रस्थान किया। चलते समय रामकिशोर प्रसादने बड़ी शिष्टताके साथ उनसे अपने हठके लिये माफी माँगी।

—:०:—

इक्कीसवां अध्याय

आज रामपुरमें साधारण श्रेणीके लोगोंकी एक पंचायत बैठी हुई है। सब चरणदास आदिके सामाजिक वहिष्कारके प्रश्नपर विचार करनेके लिये इकट्ठे हुए हैं। इस पंचायत-से मजदूर संघका कोई सम्बन्ध नहीं है। इसमें केवल चरणदास तथा रामशरणकी बिरादरीके आदमी ही इकट्ठे हुए हैं। शोभाराम तथा रामशंकर आदि कई वृद्ध व्यक्ति इसमें बुलाये गये हैं। सब लोगोंके इकट्ठा हो जानेपर चरणदास हाथ जोड़ता हुआ बोला—"पंच परमेश्वरका रूप होता है। किसीपर विपत्ति पड़नेपर पंच ही ईश्वरकी तरह उसकी रक्षा करते हैं। आज हमलोग घोर संकटमें हैं। अतएव हमारी रक्षा करना आपलोगोंका प्रधान कर्त्तव्य है।"

शोभाराम—"पर तुमलोगोंने अपराध भी बहुत बड़ा किया है। खुली कचहरीमें सरासर उलटी गंगा बहाते तुम्हें शर्म भी नहीं लगी। निर्दोष पं० दीनानाथजी आज तुमलोगोंकेही पापका प्राय-श्चित्त जेलमें कर रहे हैं।"

बनारसीलाल—"हमारा अपराध तो अवश्य ही बहुत बड़ा है। पर प्रत्येक पापका प्रायश्चित्त होता है और हमलोग भी सामा-जिक वहिष्कारके रूपमें इस पापका बहुत कुछ प्रायश्चित्त कर चुके। अतएव हमारे अपराधको अब क्षमा कर देना चाहिये।"

शोभाराम—"इस वहिष्कारकी व्यवस्था मजदूर संघके द्वारा

हुई है। हमलोग इस सम्बन्धमें किसी प्रकारका निर्णय नहीं कर सकते। तुमलोगोंको इस विषयका निवेदन मजदूर संघके ही सामने करना चाहिये।"

रामशरण—"पर हमारा वहिष्कार तो आपलोगही कर रहे हैं। यदि जातिवाले हमलोगोंके अपराधको माफ कर दें, तो हमारा सारा कष्ट दूर हो सकता है।"

शोभाराम—"पर हमलोग मजदूर संघके विरुद्ध कोई कार्य नहीं कर सकते। हम उसके सिद्धान्तोंके समर्थक हैं—विरोधी नहीं।"

रामशरण—"उस दिन कानपुरसे संघके एक अफसर आये थे और हमलोगोंने उनसे अपना दुखड़ा कह सुनाया था। पर उन्होंने इस विषयपर कुछ ध्यान ही नहीं दिया।"

बीचमें बात काटते हुए बनारसीलाल बोला—"ध्यान क्यों नहीं दिया? उन्होंने तो तुमसे कहा था कि यदि तुम अपने लड़केका विवाह पांच वर्षके बाद करना स्वीकार करो, तो मैं तुम लोगोंको वहिष्कार बन्धनसे मुक्त कर सकता हूं। पर तुमने यह शर्त स्वीकार नहीं की।"

इस बातको सुनतेही रामशरणका पुराना पक्ष-समर्थक तुलसी बोला—"वाह जी वाह! खूब सफाईकी बातें कर रहे हो। पांच वर्षतक लड़केकी शादी नहीं करनेकी बात रामशरण किस प्रकार स्वीकार करता? यदि तुम्हें आसमानके तारे पकड़नेके लिये कहा जाय, तो क्या तुम ऐसा कर सकते हो?"

बनारसीलाल—"पांच वर्षके बाद लड़केकी शादी करना क्या आसमानका तारा पकड़ना कहलाता है ? बुढ़ापेके कारण तुम्हारी अक्ल सठिया तो नहीं गयी है ? तुम क्यों इस झमेलेमें अपनेको डालते हो? चुपचाप रातको आसमानके तारे गिना करो ।"

नाक-भौं चढ़ाते हुए तुलसीने उत्तर दिया—"चुप रह, ज्यादा बहस न कर। व्यर्थका बकवाद मुझे अच्छा नहीं लगता । बोलूंगा क्यों नहीं ? क्या तुमने पंचोंको खरीद लिया है ? यहां तो सब आदमी बोल सकते हैं ।"

बनारसीलाल-"जिसकी जरूरत नहीं रहेगी, वह क्यों बोलेगा ?"

तुलसी—"तुमने यह कैसे जाना कि मेरी जरूरत नहीं है ?"

बनारसीलाल—"बातें तो रामशरणके सम्बन्धमें हो रही थीं। फिर इस बीचमें टपकनेकी तुम्हारी क्या जरूरत थी ?

तुलसी—"रामशरणसे मेरा सम्बन्ध है। उसकी बात छिड़नेपर मैं अवश्य बोलूंगा। तुम्हारी यह शरारत मुझे अच्छी नहीं लगती ।"

बनारसीलाल—"मैंने अभी क्या शरारत की है ?"

तुलसी—"तुम रामशरणको व्यर्थ ही बदनाम करनेकी चेष्टा कर रहे थे और उसका पक्ष समर्थन करनेपर मुझपर घुड़कने लगे । यह शरारत नहीं तो क्या है ? पंचोंके सामने किसी प्रकारकी शोखी अच्छी नहीं। यदि अब अधिक बढ़ बढ़कर बातें करोगे, तो तुम्हारा पत्तल अवश्य कटवा दूंगा। अपने लड़केकी शादी क्यों पाँच वर्षकी अवस्थामें ही कर ली थी ? यदि तुम्हारा लड़का

क्वांरा रहता और तुम पन्द्रह वर्षको अवस्थाके पहले उसको शादी न करनेका निश्चय करते, तब तुम्हारी बातोंका कुछ मूल्य भी हो सकता था। दूसरेके सहारे गंगा पार करना बड़ा आसान है और इसी कारण तुम रामशरणके लड़केको अविवाहित रखकर, अपनेको वहिष्कार-बन्धनसे मुक्त कराना चाहते हो।"

अकारण बातको बढ़ते देखकर रमाशंकरने कहा—"व्यर्थके झगड़ेसे कोई लाभ नहीं। हमलोग मजदूर संघके निर्णयके विरुद्ध कोई फैसला नहीं कर सकते। यदि रामशरणके थोड़े कष्टसे और लोगोंका कष्ट दूर होता हो, तो मेरी समझमें उसे इस बातको मान लेना चाहिये।"

रामशरण—"शादीकी बात मैं कैसे मान सकता हूं ?"

रमाशंकर—"पर बात न माननेसे भी तो तुम्हारा कोई लाभ नहीं है। वहिष्कृत अवस्थामें तो तुम्हारे लड़केकी शादी भी नहीं हो सकती है।"

रामशरण—"बात माननेमें मुझे कोई उज्र नहीं है। पर जरा आप ही गौर कीजिये; अपने समाजमें पन्द्रह वर्षतक किसका लड़का क्वांरा रहा है ?"

रमाशंकर—"तुम्हारी कठिनाईको मैं समझता हूं। पर देशके अनुसार अपना वेष बदलना पड़ता है। शादीकी बात छोड़ो और यह बतलाओ कि आजतक वहिष्कारका नाम क्या किसीने सुना भी था ?"

रामशरण—"यह तो एक दम नयी बात है। इसके प्रचारसे तो समाज चौपट हो जायगा।"

रमाशंकर—"खैर, इसका फल कुछ भी हो। पर मैं तुम्हें यह बतलाना चाहता हूँ कि इन दिनों देशमें कई नवीन बातोंका प्रचार हो रहा है और हमें अपनेको उसीके अनुरूप बनाना पड़ेगा। पहले भी हमारे देशमें वहिष्कारकी प्रथा थी। पर उसका नाम ही दूसरा था और रूप भी कुछ और ही था। सामाजिक अपराध करनेपर लोग जातिसे अलग कर दिये जाते थे। पर मामले-मुकदमेके कारण तो आजतक किसीको दण्ड नहीं दिया गया था। आज तुम लोग ही इस दंडको विवशताके साथ भोग रहे हो। फिर पहली वातोंकी दुहाई देनेसे क्या लाभ है, अतएव मेरी राय मानकर तुम विवाहवाली वातको स्वीकार कर लो।"

रामशरण—"भाई साहब! इस जन्ममें तो यह राय नहीं मान सकता।"

अन्य लोगोंके साथ परामर्श करनेपर रमाशंकर कुछ गर्म होकर बोला—"तुम्हें मानना पड़ेगा। पंचोंकी यही आज्ञा है। केवल तुम्हारी जिदके कारण सभी लोग कष्टमें क्यों पड़े रहेंगे?"

रमाशंकरकी इन बातोंको सुनकर बेचारा रामशरण बड़ी कठिनाईमें पड़ा। कई बार उसने बोलनेकी चेष्टा की। पर कोई फल न हुआ। लाख जोर लगानेपर भी वह उत्तर देनेमें असमर्थ रहा! उसकी यह दयनीय अवस्था देखकर शोभारामने प्रेमपूर्वक कहा—"भाई रामशरण! इस रायको न माननेसे कोई तुम्हारा लाभ नहीं हो सकता। क्योंकि वहिष्कार-बन्धनसे मुक्त हुए विना तुम्हारे लड़केका विवाह होना किसी प्रकार सम्भव नहीं है। यह

राय न माननेपर लड़केकी शादी भी नहीं हो सकेगी और व्यर्थ ही वहिष्कारका भी कष्ट झेलना पड़ेगा। पर पाँच वर्षतक लड़केकी शादी नहीं करनेकी बात मान लेनेपर कमसे कम वहिष्कारके कष्टसे तो छुटकारा पा जाओगे। साथ साथ तुम्हारे साथियोंका भी कष्ट दूर हो जायगा। वे भी तुम्हें हृदयसे धन्यवाद देंगे। पांच वर्षके बाद हमलोग पूरी चेष्टा कर किसी अच्छे घरमें तुम्हारे लड़केकी शादी करा देंगे; तुम इस बातसे निश्चिन्त रहो। इसमें कोई तुम्हें बुरा नहीं कह सकता है।"

शान्त भावसे रामशरणने उत्तर दिया—"क्या आपकी भी यही सम्मति है?"

शोभाराम—"हां भाई! इसीमें तो सबका कल्याण है। दस आदमीकी बात टालना अच्छा नहीं।"

रामशरण—"खैर, जब आप लोगोंकी यही राय है, तो मैं भी इस बातको—"

वह इस प्रकार कह ही रहा था कि बीचमें कड़कती हुई उसकी स्त्री बोल उठी—"खबरदार, खबरदार, यदि इस बातको माना तो घरमें आग लगा दूंगी। शादी नहीं होनेपर गोपालको जहर खिला देनेमें मुझे कोई कष्ट न होगा। पर मैं जान बूझकर इस अपमानके फन्देको अपने गलेमें नहीं डाल सकती। यदि लड़का जन्मभर कांरा ही रह जायगा, तो क्या हर्ज है? हम केवल उसके जन्मके भागी हैं, कर्मके नहीं।"

रामशरण—"चुप, पूतना ! तुम क्यों मरनेके लिये यहाँ आ पहुँची ?"

उसकी स्त्री—"क्या गोपालपर मेरा कोई अधिकार नहीं है ? लाल-पीली आँखें दिखाकर मुझे डरानेकी चेष्टा न करो। मैं डरनेवाली नहीं हूँ ।"

रामशरण—"यदि एक शब्द भी निकाला, तो मारते-मारते हड्डी तोड़ डालूंगा।"

रामशरणकी स्त्रीका पक्ष लेता हुआ तुलसी बोल उठा—"वड़े हौसलेवाले मालूम पड़ते हो ? हड्डी तोड़ना क्या आसान है ? यह बेचारी क्या बुरा कहती है, जो इसकी बातें सुनकर सावनके बादलकी तरह गर्ज रहे हो। वह किसी तरह गोपालकी शादी बन्द नहीं होने देगी।"

बिना बुलाये मेहमानकी तरह तुलसीका बीचमें टपकना बहुत लोगोंको बुरा लगा। पर जो उसकी आदतसे परिचित थे, उन्होंने इस ओर कुछ ध्यान नहीं दिया। तुलसीकी यह सदासे आदत है कि वह निर्बल पक्षका समर्थन करता है। यदि निर्बल व्यक्ति कोई गलती भी करे तो वह इस बातकी परवाह न कर उसका ही पक्ष समर्थन करेगा। उसकी नीतिके अनुसार किसी भी अवस्थामें निर्बलकी सहायता करना ही उचित है। निर्बलका प्रश्न उठनेपर वह न्याय-अन्यायका भी विचार नहीं करता। रामशरण भी उसकी इस आदतसे पूरी तरह परिचित था। अतएव वह बातके अधिक बढ़

जानेके भयसे चुप हो गया। इस तरह थोड़ी देरतक पंचायतमें सन्नाटा रहा। अन्तमें सन्नाटेको भंग करते हुए पंचोंकी ओरसे शोभारामने कहा—"रामशरण घर जाकर इस प्रश्नपर फिर विचार करे। पंचोंकी आज्ञा होती है कि वह पं० उमाशंकरजीके निर्णय-को मानकर अपने अन्य साथियोंके साथ सामाजिक बन्धनसे मुक्त हो जाय। यदि एक सप्ताहके भीतर वह इस निर्णयको नहीं मानेगा, तो मजदूर संघके साथ-साथ वह बिरादरीकी ओरसे भी वहिष्कृत समझा जायगा।"

इस निर्णयको सुनानेके बाद पंचायत भंग हुई और सब अपने-अपने घरकी ओर चले। रामशरणने भी अपने घरका रास्ता पकड़ा। उसे पंचायतका निर्णय एक प्रकारसे स्वीकार था। पर स्त्रीके वाधा डालनेके कारण उसका कोई वश न चल सका। उसकी स्त्री भी अपने पक्ष समर्थक तुलसीसे थोड़ी देर बातेंकर, घर लौट आई।

उनके लौटनेपर गोपालको इन बातोंका पता लगा। पंचायतकी बातें सुनकर उसे बड़ा दुख हुआ। उसका कोमल हृदय इस बातको सहन करनेके लिये तैयार न था कि उसके कारण उसके परिवारमें इस प्रकारका कलह मचे। अतएव पंचा-यतका निर्णय माननेके लिये उसने अपनी माताको बहुत प्रकारसे समझाया। पर वह किसी प्रकार राजी न हुई। अन्तमें बहुत तंग किये जानेपर वह क्रोधित होकर बोली—"यह जमाना ही उल्टा है। जिसके लिये रोओ, उसीकी आँखमें आँसू नहीं। तुम्हारी

शादीके लिये तो मैं दुनियासे लड़ाई कर रही हूँ और तुम ही मुझे इन बातोंकी शिक्षा देनेके लिये आये हो ?"

गोपाल बेपरवाहीका भाव दिखलाता हुआ बोला—"मैं सच कहता हूँ। यदि पाँच वर्षके भीतर तुमलोग किसीके साथ मेरी शादीकी बात करोगे; तो मैं उसी समय घरसे भाग जाऊँगा।"

गोपालकी माँ—"चुप बेशर्म कहींका। क्या लड़का भी कहीं अपनी शादीके विषयमें किसी प्रकारकी छेड़छाड़ करता है ? यह तो अजीब जमाना आ गया।"

गोपाल—"वाह, शादी होगी लड़केकी और वह इस सम्बन्धमें किसी प्रकारकी बात भी नहीं करने पाये ? यह कहांका इन्साफ है ?"

सिरपर हाथ रखती हुई उसकी माँ बोली—"भगवानने इस पागलको कहांसे मेरी कोखमें पैदा किया ? मैं इसे कितना भी समझाती हूँ, पर यह किसी प्रकार पागलपनकी बात नहीं छोड़ता। पहले तो छोटी-छोटी बातोंमें जिद किया करता था। पर अब तो बेशर्मकी तरह शादीकी भी बातमें छेड़छाड़ कर रहा है।"

गोपाल—"मैं तुमसे बहसमें नहीं जीत सकता। पर अब मेरी शादीको पाँच वर्षके लिये भूल जाओ। यदि तुमलोग पंचोंकी शर्त न मानोगे, तो इससे क्या ? आखिर उसका सम्बन्ध तो मेरी शादीसे ही है। मैं पाँच वर्षतक शादी नहीं करनेकी प्रतिज्ञा करता हूँ।"

उसकी माता करुण स्वरमें बोली—"यदि तुम इस प्रकारकी जिद करोगे, तो मैं जहर खा लूँगी। शादी-विवाह माँ बापकी पसन्दसे होता है। इसमें लड़कोंका कोई हाथ नहीं रहता। अतएव तुम व्यर्थकी जिद न करो।"

गोपाल—"पर ऐसा होना भी तो किसी प्रकार सम्भव नहीं है। जबतक हमलोग समाजसे वहिष्कृत रहेंगे, तबतक शादी भी नहीं हो सकती। अतएव तुम व्यर्थ जिद कर रही हो।"

गोपालकी माँ—"इन झगड़ोंसे तुम्हें क्या मतलब? इसका निपटारा करनेके लिये तो हमलोग बैठे ही हैं। क्या इन मुँहझौंसोंके रोकनेसे मेरी शादी रुक सकती है? आज ही तुम्हारे नानाको मैं इस बातकी खबर देता हूँ। वे अवश्य ही कहीं-न-कहीं शादीकी बात पक्की कर लेंगे।"

गोपाल—"पर मैं तो शादी नहीं करूँगा। अभी लक्ष्मीचाचाके यहाँ जाकर मैं पाँच वर्षतक शादी नहीं करनेकी प्रतिज्ञा कर आता हूँ। मेरी इस प्रतिज्ञाको सुनकर वे अवश्य ही सभी लोगोंको वहिष्कार-बन्धनसे मुक्त कर देंगे।"

इतना कहता हुआ वह बड़ी तेजीके साथ लक्ष्मीनारायणके घरकी ओर चला। उसकी माताने उसे लौटानेकी बड़ी चेष्टा की। पर वह किसी प्रकार नहीं लौटा और दौड़ता हुआ लक्ष्मीनारायणके घर जा पहुंचा। उस समय वे अपने बिस्तरेपर विश्राम कर रहे थे। एकाएक गोपालको देखकर उन्होंने आश्चर्यके साथ पूछा—"बेटा, इस समय तुम यहां किस प्रकार आये?"

गोपाल—“ चाचासाहब ! मैं आपसे एक आवश्यक निवेदन करनेके लिये आया हूं । ”

लक्ष्मीनारायणने आश्चर्यके साथ फिर कहा—“ बोलो, क्या कहना है ?”

गोपाल—“ बालक समझकर कहीं आप मेरी बातोंपर अविश्वास तो नहीं करेंगे ?”

लक्ष्मीनारायण—“कुछ कहो भी तो । विश्वास योग्य बात रहनेपर अविश्वास क्यों करूंगा ?”

गोपाल—“मेरी शादीके प्रश्नको लेकर इस समय समूचे ग्राममें हलचल मची हुई है । इसके साथ ही इस प्रश्नने मेरे परिवारमें बड़ा कलह मचा दिया है । पिताजी तो किसी तरह आपलोगोंके निर्णयको माननेके लिये तैयार भी हो गये हैं, पर माता उनका विरोध करती हैं । अतएव इस कलहका अन्त करनेके विचारसे मैं आपके सामने प्रण करता हूं कि पांच वर्षके भीतर मैं भूलकर भी शादी नहीं करूँगा । इसके साथ ही मैं आशा करता हूं कि आप अब सब लोगोंको बहिष्कारके झमेलेसे मुक्त कर देंगे ।”

लक्ष्मीनारायण—“क्या तुम्हारे पिताने तुमको मेरे पास भेजा है ?”

गोपाल—“जी नहीं ।”

लक्ष्मीनारायण—“फिर मेरे यहां आनेकी राय तुम्हें किसने दी ?”

गोपाल—“मेरी आत्माने ।”

लक्ष्मीनारायण - "पर यदि तुम्हारे माता-पिता तुम्हारी इच्छाके विरुद्ध तुम्हारी शादी करना चाहें ?"

गोपाल—"मैं शादी करनेसे इन्कार कर दूँगा।"

लक्ष्मीनारायण—"पर यदि ऐसा करनेके लिये वे लोग तुम्हें वाध्य करने लगें, तो उस अवस्थामें तुम क्या करोगे ?"

गोपाल—"मैं घर छोड़कर भाग जाऊँगा।"

इस उत्तरको सुनकर लक्ष्मीनारायणने प्रेमपूर्वक कहा—"अब सब लोग बहुत शीघ्र ही वहिष्कारके झमेलेसे छुटकारा पा जायँगे। मैं कल कानपुर जा रहा हूं और वहां पं०उमाशंकरजीसे इस बातकी आज्ञा ले, लोगोंके ऊपरसे वहिष्कारका बन्धन हटा लूंगा।"

गोपाल—"यदि वे ऐसा करनेकी आज्ञा न दें ?"

लक्ष्मीनारायण—"आज्ञा क्यों नहीं देंगे। वे बड़े ही उदार आदमी हैं। उनके कानमें यह बात जा चुकी है, इसलिये उनकी आज्ञा ले लेना आवश्यक है।"

गोपाल—"मैं भी आपके साथ कानपुर जाकर पण्डित-जीका दर्शन करना चाहता हूं।"

लक्ष्मीनारायण—"यदि तुम्हारे पिताकी आज्ञा होगी, तो मैं तुम्हें भी अपने साथ लेता चलूंगा। तुम्हें देखकर पण्डितजी बहुत खुश होंगे।"

लक्ष्मीनारायणके मुखसे इन बातोंको सुनकर गोपाल आनन्दके साथ अपने घर लौट आया।

बाईसवां अध्याय

आज रविवार है। नगरमें रहनेवाले अधिकांश लोगोंको प्रायः इसी दिन अवकाश मिला करता है। 'निर्भय' का आफिस बन्द रहनेके कारण आज पं० उमाशंकरजी भी निश्चिन्त हैं। प्रायः प्रत्येक रविवारको प्रातः कालके समय अपने मित्रकी धर्मपत्नी सरस्वती देवीकी खोज-खबर लेनेके लिये वे उनके घरपर जाया करते हैं। उस परिवारमें सरस्वती तथा उसकी वृद्धा सासके अतिरिक्त और कोई नहीं है। पं० उमाशंकरने उन लोगोंको अपने घरपर ले आनेकी बड़ी चेष्टा की। पर सफल न हुए। पं० दीनानाथकी माँ पुराने विचारकी महिला हैं। अतएव वह किसी तरह उनके घरमें जानेके लिये तैयार नहीं हुईं। इस कारण वे वहीं जाकर उन लोगोंके लिये सभी चीजोंका प्रबन्ध कर दिया करते हैं।

यथा नियम वे आज भी उन लोगोंके यहां जानेके लिये प्रस्तुत हैं। गाड़ी तैयार होनेमें कुछ विलम्ब रहनेके कारण वे कपड़ा पहनकर बरामदेमें घूम रहे हैं। इतनेमें एकाएक एक मोटर उनके दरवाजेपर आ लगी। मोटरको देखते ही उन्होंने पहचान लिया कि यह कलक्टरसाहबकी गाड़ी है। देखते ही देखते कलक्टरसाहब गाड़ीसे उतर पड़े। पण्डितजी संयोगवश वहां पहले हीसे खड़े थे। अतएव कलक्टरसाहबसे हाथ मिलाते हुए वे उन्हें अपने कमरेमें ले आये। उनके बैठनेपर पण्डित उमाशंकरने मुस्कुराते हुए कहा —"बहुत दिनोंपर हम लोगोंकी मुलाकात हुई है।"

कलक्टरसाहब भी जरा मुस्कुराते हुए बोले—"जी हां।" आपने तो कहा था कि ईस्तिफा देनेपर भी हम लोगोंका व्यक्तिगत सम्बन्ध कायम रहेगा। पर आपने अपने वचनको खूब निबाहा।"

कुछ लज्जित भावसे पंडित उमाशंकर बोले—"इधर आपसे मैंने कभी मुलाकात नहीं की, इसके लिये मैं वास्तवमें लज्जित हूं। आप कृपया मुझे क्षमा करें।"

कलक्टरसाहब—"इसमें क्षमा करनेकी कौनसी बात है। मैंने तो आपसे एक मजाक किया था।"

पं० उमाशंकर—"आप मुझपर इतनी कृपा रखते हैं, इसका मुझे वास्तवमें गौरव है। आज आपने मेरे यहां पधारकर जो कृपा दिखलायी है, उसकी स्मृति मेरे हृदयपर आजन्म बनी रहेगी।"

मुस्कुराते हुए कलक्टरसाहब बोले—"क्या अपने हृदयपर अभीतक आप अपना अधिकार रखते हैं? मैंने तो समझा था कि आपने उसे अपने मित्र पं०दीनानाथको अर्पण कर दिया है।"

पं० उमाशंकर—"अवश्य अर्पण कर दिया है। पर प्रेमके दायरेमें भारतीय दण्ड विधानके नियम लागू नहीं होते। इसके विधान ही विचित्र होते हैं। प्रेमके क्षेत्रमें देनेका अर्थ भी लेना ही होता है। यह सत्य है कि मैंने उन्हें अपना हृदय दिया है, पर उसके बदले उनके हृदयपर मैंने अपना अधिकार कर लिया है जो मेरे हृदयसे कहीं उदार और विस्तृत है। उनके हृदयको ही अब मैं अपना हृदय समझता हूं।"

कलक्टरसाहबने हंसते हुए कहा—"आप तो प्रेमके पूरे पैगम्बर

हो रहे हैं। यदि प्रेम विषयक आपके दो-चार व्याख्यान सुननेका मुझे अवसर मिले, तो आश्चर्य नहीं कि मुझे भी किसी दिन अपने पदसे ईस्तिफा देना पड़े।"

पं० उमाशंकर—"आप तो मज़ाक कर रहे हैं। मेरा व्याख्यान आपको किसी तरह ईस्तिफा देनेके लिये प्रेरित नहीं कर सकता है।"

कलक्टरसाहब—"वास्तवमें आप बड़े ही प्रेमी जीव हैं। आपके प्रेमका एक छींटा भी किसी व्यक्तिके जीवनको सार्थक तथा गौरव-पूर्ण बनानेके लिये यथेष्ट है। अपनेको आपके प्रेमका अधिकारी समझकर मैं भी अपनेमें एक गौरवका अनुभव करता हूं।"

पं० उमाशंकर—"यह आपकी मेहरबानी है। मैं तो आपकी कृपाका भूखा हूं।"

कलक्टरसाहब—खैर, अब मैं आपसे एक आवश्यक निवेदन करना चाहता हूं।"

आश्चर्यके साथ पं० उमाशंकर बोले—"कहिये, क्या आज्ञा है?"

कलक्टरसाहब—"व्यक्तिगतरूपसे आपके साथ मेरा बड़ा ही घनिष्ट सम्बन्ध रहा है और इसी कारण आपके ईस्तिफाके दिन मैंने कुछ चालाकीसे काम लिया था। अब मैं उसको खबर आपको दे देना उचित समझता हूं। मैं नहीं जानता कि उसे सुनकर आप मुझपर प्रसन्न होंगे या अप्रसन्न? पर मैं आपको विश्वास दिलाना चाहता हूं कि मैंने जो कुछ किया है, वह शुद्ध तथा निष्पक्ष हृदयसे। आपकी भलाईका विचार कर ही मैंने एक धृष्टता की है। आशा है कि आप उसके लिये मुझे क्षमा करेंगे।"

कुछ अधिक आश्चर्यके साथ पं० उमाशंकर बोले—"वह कौनसी बात है ?"

कलक्टरसाहब—"मैं जानता था कि आप आवेशमें आकर अपने पदसे इस्तीफा दे रहे हैं, अतएव भविष्यमें आपका रास्ता खुला रखनेके विचारसे मैंने आपके त्याग-पत्रको दबा रखा और उसके बदले आपकी ओरसे छ महीनेकी छुट्टीका एक दर्खास्त दे दिया। उस दर्खास्तपर मैंने बड़ी चालाकीके साथ आपका हस्ताक्षर भी करा लिया था। अतएव इस्तीफा मंजूर होनेके बदले आपको छ महीनेकी छुट्टी मिली थी। इसके साथ ही मैं आपको यह भी बतला देना चाहता हूं कि इतना मैंने जो कुछ किया, सभी व्यक्तिगत भावसे। मेरे सिवा ऊपरके किसी अफसरको इस गुप्त रहस्यका पता नहीं है।"

पं० उमाशंकर—आपकी कृपाके लिये मैं सचमुच आपका बड़ा कृतज्ञ हूं। पर अबतक आपने इस बातको मुझसे गुप्त क्यों रखा ?"

कलक्टरसाहब—"आपका आवेश ठंढा होनेतक मैंने इस बातको गुप्त रखना आवश्यक समझा। पर अब उसे प्रकट किये बिना काम नहीं चलता देखकर मैं इस भेदको खोल रहा हूं। आप किसी राजनैतिक काममें अधिक भाग न लें; क्योंकि ऐसा करनेसे अफसरोंके यहां आपकी बदनामी फैलनेका भय है।"

पं० उमाशंकर—"मेरे भविष्यको सुरक्षित रखनेके लिये आपने जो कुछ किया, उसके लिये मैं आपको हृदयसे धन्यवाद देता हूं;

पर आपको यह सुनकर शायद खेद होगा कि आपके उस प्रयत्नसे मैं किसी प्रकारका लाभ उठानेमें असमर्थ हूं।"

आश्चर्यके साथ कलक्टरसाहब बोले "क्या छुट्टीकी अवधि पूरी होनेपर आप अपने कार्यको नहीं सम्हालेंगे ?"

पं० उमाशंकर—"भविष्यकी बातें मैं कैसे कहूं ? पर ऐसा सर्वथा असम्भव मालूम पड़ता है।"

कलक्टरसाहब—"इसका तो मैं कोई कारण नहीं देखता। उस समय तक तो आपके मित्र भी जेलसे लौट आयेंगे।"

पं० उमाशंकर—"हुजूर! चिड़िया जबतक पिंजड़ेमें बन्द रहती है, तबतक उसे वही जीवन पसन्द पड़ता है। पर थोड़ी देरके लिये भी उस पिंजड़ेसे निकलकर स्वच्छन्द हवामें जानेके बाद वह भूलकर भी उसमें आना पसन्द नहीं करेगी। उसी तरह मेरी आत्मा भी अब किसी प्रकार कचहरीके संकीर्ण दायरेके अन्दर बन्द रहना नहीं चाहेगी।"

कलक्टरसाहब—"आप अधिक दार्शनिक बनकर अपने जीवनको मिट्टीमें न मिलावें। अपने साथ अपने स्त्री तथा बच्चेके भविष्यको भी अन्धकारपूर्ण बनानेका आपको कोई अधिकार नहीं है। आप जरा स्थिर चित्तसे अपने भविष्यका निपटारा करें।"

पं० उमाशंकर--"इस कृपा भावके लिये मैं आपको हृदयसे धन्यवाद देता हूं। पर अपने भविष्यके विषयमें मैंने पूरी तरहसे सोच लिया है। आपने शायद सुना भी होगा कि मैं रामपुरमें एक आश्रम खोलनेवाला हूं, जिसके द्वारा देहातके

लोगोंको सभी प्रकारकी शिक्षा दी जायगी। मैं अपने जीवनका शेष भाग उसी आश्रमकी सेवामें व्यतीत करना चाहता हूं।"

कलक्टरसाहब—"आश्रम खोलनेकी अभी जल्दी क्या है? पेन्शन पानेपर आप इन कामोंको कर सकते हैं।"

पं० उमाशंकर—"शुभ काम जितना जल्दी हो सके उतना ही अच्छा है। इस जिन्दगीका क्या ठिकाना है? अतएव अपने वर्तमान कार्यक्रममें मैं किसी प्रकारका परिवर्तन नहीं कर सकता।"

कलक्टरसाहब—"क्या डिप्टी कलक्टरीका आपके सामने कोई महत्व नहीं है?"

पं० उमाशंकर—"जिस पेड़की छायामें मैंने कई वर्षोंतक विश्राम किया, उसे मैं महत्वहीन कैसे बतलाऊं? पर जिस प्रकार पिंजरेसे बाहर निकली हुई पक्षीके लिये पिंजड़ेका कोई महत्व नहीं रह जाता, उसी तरह वर्तमान परिस्थितिमें मेरे लिये डिप्टीकलक्टरीका कोई महत्व नहीं है।"

कलक्टरसाहब—"आवेशमें पड़कर आप अपने सुखमय जीवनका इस प्रकार त्याग न करें।"

पं० उमाशंकर—"हुजूर! एक पेड़के नीचे बैठनेपर जो आनन्द मिलता है, वह आनन्द बिजलीके पंखेद्वारा कभी नहीं प्राप्त हो सकता है। मैं जानता हूं कि अपने पदसे अलग होनेपर मेरी शानमें बहुत कुछ कमी आ गयी है, पर शानका दूसरा अर्थ होता है आडम्बर और आडम्बरसे दुनियामें आजतक

कोई सुखी नहीं हुआ। सच्चा आनन्द है योगियोंके झोपड़ोंमें—नदीके कलकल स्वरमें, ब्राह्मणोंके वेदोच्चारणमें, गृहस्थोंके शान्तिमय जीवनमें तथा दरिद्रोंकी सूखी रोटियोंमें। इनके सामने राजाका प्रभुत्व तथा मुकुट भी कुछ महत्व नहीं रखता। वास्तविक आनन्द सादगीमें है—आडम्बरमें नहीं। अतएव हम अनुभव करते हैं कि अपनी शानमें कमी होनेके साथ साथ हम सुखकी ओर अग्रसर हो रहे हैं। सादगीमें बड़ा आनन्द है, यदि सच्चाईके साथ उसका पालन किया जाय। आश्रमकी चटाईपर बैठनेसे जो आनन्द मिल सकता, है वह आनन्द कचहरीकी कुर्सीमें कभी सम्भव नहीं है।"

कलक्टरसाहब—"आपने तो एक छोटांसा व्याख्यान ही दे डाला। मुझे खेद है कि आपके हृदयपर इन बातोंका रंग जम गया है। आपको किसी तरह वाध्य करना मेरी शक्तिके बाहर है। आप जैसा उचित समझें करें। व्यक्तिगत प्रेमके नाते मैंने आपको इतना समझाया। आगे आपकी मर्जी।"

पं० उमाशंकर—"हुजूर! आपकी बात माननेमें मैं असमर्थ हूँ, इसका मुझे हार्दिक खेद है। मेरी इस धृष्टताके लिये आप मुझे क्षमा करें—और हृदयसे क्षमा करें।

पं० उमाशंकरके मुखसे इस प्रकारकी बातें सुनकर कलक्टर-साहब कुछ उदास होकर बोले—"अच्छा, मैंने आपका बहुत समय बरबाद किया। इसके लिये मुझे क्षमा करेंगे। आप शायद कहीं बाहर जानेके लिये तैयार थे।"

पं० उमाशंकर—"आपने मेरे यहां पधारनेकी कृपा की, इसे मैं अपना सौभाग्य समझता हूं।" पं० उमाशंकर इतना बोल ही रहे थे कि कलक्टरसाहब उठ खड़े हुए और उनसे बिदा होकर अपनी कोठीकी ओर चल दिये।

जिस समय पं० उमाशंकरजी कलक्टर साहबसे बातें कर रहे थे, उसी समय रामपुरसे लक्ष्मीनारायण भी उनसे मिलनेके लिये आ पहुंचे थे। उनके साथ रामशरणका लड़का गोपाल भी आया था। कलक्टरसाहबके जानेपर, बाहर आते ही पं० उमाशंकरकी दृष्टि उन लोगोंपर पड़ी। देखते ही उन्होंने लक्ष्मीनारायणसे पूछा—"आप कानपुर कब आये?"

लक्ष्मीनारायण—"हुजूर, आज ही आया हूं।"

पं० उमाशंकर—"किस कार्यवश आपका यहां आना हुआ है?"

लक्ष्मीनारायण—"इसी तरह आपके दर्शन करनेके लिये आ गया हूं।"

पं० उमाशंकर—"आपके साथ यह किसका लड़का है?"

लक्ष्मीनारायण—"यह रामशरणका लड़का है। आपके दर्शन करनेके लिये यह बहुत उत्सुक हो रहा था। अतएव बड़े आग्रहसे यह मेरे साथ आया।"

इतना कहकर उन्होंने पंडितजीको रामपुरकी पंचायतकी सारी बातें कह सुनायीं। इसके साथ ही गोपालकी प्रतिज्ञाकी बात भी उन्होंने कह डाली। सभी बातोंको सुनकर वे मुस्कुराते हुए

गोपालके सिरपर हाथ रखते हुए बोले—"तुम्हारा नाम क्या है ?"

गोपाल—"मेरा नाम गोपाल है।"

पं० उमाशंकर—"क्या तुम पांच वर्षतक अविवाहित रहनेकी प्रतिज्ञा करते हो ?"

गोपाल—"जी हां।"

पं० उमाशंकर—"यदि तुम्हारे पिता बलपूर्वक तुम्हारी शादी करना चाहें, तब तुम क्या करोगे ?"

गोपाल—"मैं शादी करनेसे इन्कार कर दूँगा।"

गोपालके इस भोलेपनसे पंडितजीको बड़ी प्रसन्नता हुई। वे उसे आशीर्वाद देते हुए बोले—"बेटा! तुम्हारे जैसे वीर बालकोंके द्वारा ही भारतका उत्थान हो सकता है। तुम वास्तवमें माताके गौरव स्वरूप हो। तुम्हारी वीरताको देखकर मैं बिना किसी शर्तके, सभी लोगोंको वहिष्कार-बन्धनसे मुक्त करता हूं। यदि तुम्हारे पिता चाहें, तो वे तुम्हारी शादी करनेके लिये भी स्वतंत्र हैं।"

इस प्रकार वहिष्कारके प्रकरणको समाप्त करनेके बाद वे थोड़ी देरतक लक्ष्मीनारायणसे रामपुरके विषयमें बातें करते रहे। इसके साथ ही अपने मित्रके मकानपर जाना भी उनके लिये आवश्यक था। अतएव लक्ष्मीनारायणको वहीं ठहरनेका आदेश देकर वे पं० दीनानाथके मकानकी ओर चले।

तेईसवां अध्याय

समयके व्यतीत होनेमें कुछ भी बिलम्ब नहीं होता। देखते ही देखते पं० दीनानाथके कारावासकी अवधि बीत गयी। इसी बीच पं० उमाशंकरने भी रामपुरके आश्रमका कार्य एक प्रकारसे समाप्त कर डाला। मकान आदि बन चुके थे। केवल पढ़ाई आरम्भ होनेकी देर थी।

आश्रमके लिये चन्दासे कुछ रुपया भी एकत्रित हो गया था। इस प्रकार आश्रमका कार्य समाप्त कर सभी कोई पं० दीनानाथके छुटकारेकी प्रतीक्षा कर रहे थे। लोगोंकी आन्तरिक अभिलाषा थी कि आश्रमका उद्‌घाटन उन्हींके हाथोंसे हो। इस कारण मकान आदि बन जानेपर भी वह अभीतक खुला नहीं था।

देखते ही देखते पं० दीनानाथके छूटनेका भी दिन आ पहुंचा। कानपुरके सभी व्यक्ति उनके आगमनकी प्रतीक्षा कर रहे थे। प्रातःकालसे ही जनताकी अपार भीड़ जेलके फाटकपर इकट्ठी होने लगी। कांग्रेसके स्वयंसेवकगण भी राष्ट्रीय झंडेको लेकर पंडितजीका स्वागत करनेके लिये जेलके दरवाजेके समीप आ पहुंचे। लगभग आठ बजे पंडितजी जेलसे मुक्त किये गये। उनके बाहर निकलते ही 'पं० दीनानाथकी जय' की ध्वनिसे आकाश गूँज उठा। सभी कोई उनके चरणकी रेणुको अपने

मस्तकपर लगाने लगे। शहरके प्रतिष्ठित रईस लाला जगदम्बा प्रसादने उन्हें फूलोंका एक हार पहनाया। इसके पश्चात् वे फूलोंसे सुसज्जित एक मोटर गाड़ीमें बैठाये गये। उनके स्वागतके लिये पं० उमाशंकर भी रामपुरके कई लोगोंके साथ नियमित समयपर जेलके फाटकके समीप पहुंच गये थे। पर सार्वजनिक स्वागतके समय उन्होंने उनसे मिलना उचित नहीं समझा। उनका अनुमान था कि कहीं उनके मित्र उन्हें इस रूपमें देखकर, विचलित न हो जांय और जनताको, उस दृश्यको देखकर हर्षके बदले दुखित न होना पड़े। अतएव दूरसे ही अपने मित्रके दर्शनकर, वे उस स्थानको चले गये जहां पं० दीनानाथके स्वागतार्थ एक विराट सभा होने वाली थी।

पंडितजीके साथ साथ लाला जगदम्बा प्रसाद भी मोटर-पर सवार हो गये। मोटरके आगे आगे स्वयंसेवकोंका एक दल विजयी सेनाकी तरह उन्मत्त होकर चल रहा है। स्वयंसे-वकोंका राष्ट्रीय दल जनताके हृदयमें एक नवीन स्फूर्ति तथा उमंग पैदा कर रहा है। इसके साथ ही बैण्डवालोंका मधुर गान सोनेमें सुगन्धवाली कहावतको चरितार्थ कर रहा है। पंडितजीकी मोटरके पीछे शहरके और भी कई प्रतिष्ठित लोगोंकी गाड़ियां हैं, जो उनका स्वागत करनेके लिये आये थे। उन गाड़ियोंके पीछे पीछे जनताकी अपार भीड़, उत्साह परन्तु शान्तिके साथ चल रही है। छतोंसे महिलायें पंडितजीके ऊपर पुष्पवृष्टि कर रही हैं। सबके हृदयमें उत्साह है, नसोंमें स्फूर्ति है तथा आत्मामें

एक अपूर्व जागृति है। मालूम पड़ता है कि कोई विश्व-विजयी वीर समस्त भूमण्डलको जीतनेके पश्चात् गर्वके साथ स्वदेशको लौट रहा है और जनता अपूर्व उमंग तथा अदम्य उत्साहके साथ उसका स्वागत कर रही है—उसकी कीर्तिपर, उसके गौरवपर अपनी श्रद्धांजलि अर्पण कर रही है। सचमुच यह दृश्य बड़ा ही भव्य है। आज कानपुरने पं० दीनानाथका जो स्वागत किया, उसके लिये बड़े बड़े चक्रवर्ती सम्राटोंका भी हृदय तरस सकता है। वे भी पं० दीनानाथके भाग्यपर इर्षा कर सकते हैं।

जुलूस शहरके प्रधान मार्गोंको पार करता हुआ सभास्थलमें आया। धूप रहते हुए भी हजारोंकी संख्यामें लोग पहलेसे ही उपस्थित थे। पंडितजीके सभास्थल पहुंचते ही सबने उठकर जयजयकारके साथ उनका स्वागत किया। पंडितजीके बैठनेपर सब अपने अपने स्थानपर बैठ गये और सभाकी कार्यवाही आरम्भ हुई। सर्वप्रथम सभापतिका प्रस्ताव उपस्थित करनेके लिये पं० उमाशंकरजी उठे। उनके मंचपर आते ही पं० दीनानाथकी दृष्टि उनपर पड़ी। पर बात करनेका वह समय न था। अतएव आपसमें एक दूसरेको प्रणाम कर ही उन लोगोंने सन्तोष किया। पं० उमाशंकरजीके प्रस्तावका अनुमोदन तथा समर्थन होनेके पश्चात लाला जगदम्बा प्रसादने करतलध्वनिके बीच सभापतिका आसन ग्रहण किया।

थोड़ी देरतक स्वयं बोलनेके पश्चात उन्होंने पं० लक्ष्मीशंकर

शर्माको, भाषण देनेके लिये आमन्त्रित किया। शर्माजी एक सुप्रसिद्ध वक्ता हैं। उनका भाषण बड़ा ही मधुर तथा सरस होता है। वे लगभग आधा घंटातक बोलते रहे और अपने मर्म-स्पर्शी भाषणका अन्त करते हुए उन्होंने कहा—"देशकी शानपर जान देनेवाले, कौमकी आनपर कुर्बान होनेवाले, माताकी गोदके अभिमान तथा राष्ट्रके अपूर्व बलिदान पं० दीनानाथजी! अपने स्थानपर बैठनेके पहले, मैं कानपुरके निवासियोंकी ओरसे आपका एक बार फिर हृदयसे स्वागत करता हूं। देशके लिये, जातिके लिये, सत्यके लिये तथा न्यायके लिये आपने जिस वीरताके साथ जेलके कष्टोंको झेला है, उसका मुझे वास्तवमें गौरव है। आपके जेल जानेपर आपकी आत्मा हम-लोगोंके लिये पथ-प्रदर्शकका काम करती रही है। अब ईश्वरकी कृपासे आप फिर हमलोगोंके बीच आ गये हैं। अतएव हम आशा करते हैं कि आप पहलेकी तरह हमलोगोंका सदा पथ-प्रदर्शन करते रहेंगे। पण्डितजी! हम जानते हैं कि आपके स्वागतमें बहुत कुछ त्रुटियां रह गयी हैं। आपके अनुरूप आपका स्वागत करनेमें हम असमर्थ रहे हैं। चाहिये तो था कि हम अपना सर्वस्व आपके चरणोंपर अर्पण कर दें। इच्छा भी ऐसी ही थी। पर वह त्याग कहां, वह तपस्या कहां जिससे हम ऐसा पुण्य कार्य करनेमें समर्थ हों। इस सम्बन्धमें आपको स्मरण रखना चाहिये कि आप जैसे तपस्वीके स्वागत करनेकी योग्यता मेरे जैसे गुलामोंमें कदापि नहीं हो

सकती। आप उदार हैं, आपका हृदय विशाल है, अतएव आप हमारी त्रुटियोंके लिये हमें अवश्य ही क्षमा करेंगे। रामने शेवरीका जूठा बेर स्वीकार किया था, कृष्णने सुदामाके तण्डुलको प्रेमपूर्वक ग्रहण किया था, अतएव मुझे आशा है कि आप भी हमलोगोंके हृदयको स्वीकार करेंगे। हमारा हृदय कलुषित अवश्य है। उसे स्वीकार करनेपर आपको कठिनाईके सिवा किसी प्रकारका लाभ नहीं हो सकता है। पर हमारे भावको समझकर, हमारी दयनीय दशाका विचारकर, आप हमारे हृदयको स्वीकार करेंगे, इसमें कोई सन्देह नहीं है। हम अपने हृदय आपको अर्पण करनेके लिये ही यहाँ इकट्ठे हुए हैं। अतएव उदार पण्डितजी! इसे कृपया स्वीकार कीजिये।"

इस प्रकार अपना भाषण समाप्त करते हुए पण्डित लक्ष्मीशंकर शर्मा अपने स्थानपर बैठ गये। उनके बाद दो-एक वक्ताओंके और भाषण हुए और उनके बाद पं० दीनानाथजी बोलनेके लिये उठे। संक्षेपतः उन्होंने अपना भाषण इस प्रकार दिया—"माननीय सभापति महोदय तथा उपस्थित सज्जनो! आपने जिस उत्साह तथा उमङ्गके साथ मेरा स्वागत किया, उसे देखकर मेरे हृदयने वास्तवमें एक स्वर्गीय आनन्दका उपभोग किया है। मेरे पास शब्द नहीं, जिनके द्वारा मैं आपको इस कृपाके लिये धन्यवाद दूँ। मेरे हृदयके मूक भावनाओंको व्यक्त करनेकी शक्ति शब्दोंमें है या नहीं, इसका मुझे सन्देह है। सज्जनो! आपने इस सभामें मेरी बहुत कुछ प्रशंसा की है, पर मैं

तो अपनेको इसके योग्य बिलकुल नहीं समझता। एक साधारण राष्ट्रीय सिपाहीकी हैसियतसे मेरा जो कुछ कर्त्तव्य था, जेल जाकर तो मैंने उसका पालन मात्र किया है। धृष्टताका भय नहीं रहनेपर मैं यह साहसपूर्वक कहता कि आवेशमें आकर आप लोगोंने आवश्यकतासे अधिक मेरी प्रशंसा की है, जरूरतसे ज्यादे मुझे महत्व दिया है। हां, यदि मेरा साहस बढ़ानेके लिये, मुझे अधिक निर्भय बनानेके लिये आपलोगोंने इस मार्गका सहारा लिया हो तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है। मैं किसी प्रकारकी शिकायत करनेकी आवश्यकता नहीं समझता।

उदार सज्जनो! आपकी कृपाके लिये मैं आपको कितना धन्यवाद दूँ, इसका निर्णय करनेमें मैं असमर्थ हूं। आगे बढ़नेकी इच्छा होती है, पर उसके पहले आपको एक बार फिर धन्यवाद देनेके लिये आत्मा तरस उठती है और उस प्रलोभनको रोकनेमें मैं अपनेको सर्वथा असमर्थ पाता हूं। अतएव एक बार फिर आप मेरे हार्दिक धन्यवादको स्वीकार करें।

खैर, मैं धूपमें आप लोगोंको अधिक कष्ट देना नहीं चाहता। अतएव अधिक विस्तारमें न जाकर मैं थोड़े शब्दोंमें आप लोगोंको जेलका अनुभव सुनाता हूं।

जेलोंकी दयनीय अवस्थाके सम्बन्धमें आपलोग अवश्य ही समाचार पत्रोंमें पढ़ा करते होंगे। वास्तवमें वहांकी अवस्था बड़ी ही चिन्ताजनक है। मेरे साथ कोई राजनैतिक कैदी न था। सभी भिन्न भिन्न अपराधोंमें सजा पाये हुए साधारण कैदी

थे। पर जेल जानेपर वे लोग सुधरनेके बदले और भी गिर जाते हैं, उन लोगोंका नैतिक पतन चरम सीमाको पहुंच जाता है। जो पहले जेलके नामसे डरता है, वह भी एक बार जेलसे आ जानेपर कट्टर ऊधमी बन जाता है। जो व्यक्ति पहले जेलसे डरता है वह भी वहांके वायुमण्डलमें पड़कर एक निर्भय अपराधी बन जाता है, क्योंकि पीछे उसे किसी चीजका भय नहीं रहता। वहां उन लोगोंको परस्पर सङ्गठन करनेका बड़ा अच्छा अवसर मिलता है। इसका फल यह होता है कि वे लोग जेलसे निकलनेपर सङ्गठित रूपसे उत्पात करने लगते हैं। मैंने ऐसे सैकड़ों कैदियोंको देखा, जो जेलसे निकलकर नाना प्रकारके कौशलसे चोरी अथवा डकैती करनेका मंसूबा बांधा करते थे। उनके कुछ भोले भाले भाइयोंने मुझे भी अपने दलमें मिलनेका निमंत्रण दिया है। ऐसी अवस्थामें आप स्वयं सोच सकते हैं कि जेलके वर्तमान प्रबन्धसे देशकी कितनी बड़ी हानि हो रही है।

आप यह न समझें कि जेलकी आवश्यकता नहीं है। अपराधियोंको निडर बनानेके भयसे उन्हें दण्ड ही नहीं दिया जाय। नहीं, ऐसा तो करना ही पड़ेगा। अपराधियोंको दण्डित नहीं करनेसे तो देशमें विशृंखलता फैल जायगी। सभी स्वच्छन्द होकर ऊधम मचाने लगेंगे। पर मैं यह कहना चाहता हूं कि जेलकी अवस्था सुधारी जाय। उसे कुलियोंका कारखाना बनानेके बदले पापियोंको पुण्यात्मा बनानेका पुण्यक्षेत्र

बनाया जाय। थोड़ा प्रयत्न करनेपर भी अपराधियोंकी अवस्था बहुत कुछ सुधर सकती है, उनका असफल जीवन सफल बनाया जा सकता है। इसके लिये जेलोंमें धार्मिक तथा आध्यात्मिक शिक्षाके प्रचारकी आवश्यकता है। अपराधियोंको, उदण्डोंको आध्यात्मिक शिक्षाद्वारा उचित रास्तेपर लाना जेलोंका प्रधान कर्तव्य होना चाहिये। ऐसा होनेसे देशको बहुत कुछ लाभ हो सकता है। इससे देशमें अपराधियोंकी बहुत कमी हो जायगी। अन्य देशके जेलोंमें इस प्रकारकी शिक्षाका प्रबन्ध है भी, पर हमारे देशमें कौन इस बातकी ओर ध्यान देता है। हमारे शासक अपनी शानमें, झूठे अभिमानमें चूर रहना ही अपना कर्तव्य समझते हैं। अतएव जनतासे मैं जोरदार शब्दोंमें अपील करना चाहता हूं कि वे प्रभावपूर्ण आन्दोलनद्वारा जेलोंकी त्रुटियोंको दूर करनेकी चेष्टा करें।

राजनैतिक कैदियोंका प्रश्न तो पृथक ही है। उनके साथ चोरों, डाकुओं तथा हत्यारोंकी तरह व्यवहार करना क्या उचित है—यह बतलानेमें मैं असमर्थ हूं। पर हमारे शासक—सभ्यताकी दुहाई देनेवाले शासक इस प्रकारके व्यवहारको उचित तथा न्यायपूर्ण समझते हैं, यह उनकी महानता है, विचित्रता है। खैर, इस प्रश्नपर अधिक बोलकर मैं अपने कलेजेके फफोलेको फोड़ना उचित नहीं समझता। दुनिया देख रही है, संसारके लोग देख रहे हैं इस अत्याचारको, अमानुषिक व्यवहारको। ईश्वर जो शासकोंका शासक है अवश्य ही इसका न्याय करेगा।

सज्जनो ! अपने स्थानपर बैठनेके पहले मैं आपकी कृपाके लिये, आपकी उदारताके लिये, एक बार फिर हृदयसे धन्यवाद देना चाहता हूँ । कई वक्ताओंने मुझे जनताका नेतृत्व ग्रहण करनेका आदेश दिया है । इस सम्बन्धमें भाइयो ! मैं आपको पहले ही बता देना चाहता हूँ कि नेतृत्व करनेकी योग्यता मुझमें नहीं है । परन्तु जहांतक मुझसे बन सकेगा, एक सेवककी हैसियतसे मैं आपकी सेवा करनेसे बाज नहीं आऊँगा । आप मेरी सेवामें विश्वास रखें । मेरे लिये यही सबसे बड़ा पुरस्कार होगा ।"

इस प्रकार भाषण देकर पं० दीनानाथजी अपने स्थानपर बैठ गये और सभापतिके अन्तिम भाषणके बाद सभाकी कार्यवाही समाप्त हुई ।

सभाके समाप्त होनेपर पं० उमाशंकरजी अपने मित्रको अपने यहां ले गये । रास्तेमें जनताकी अपार भीड़ उनके साथ जा रही थी । अतएव कोलाहलके कारण वे रास्तेमें किसी प्रकारकी बात न कर सके । मकानपर पहुंचते ही पं० दीनानाथने अपने मित्रसे कहा—"मैं घंटोंसे तुमसे बातें करनेके लिये बेचैन हूं । सबसे पहले यह बतलाओ कि तुमने इस्तीफा देकर यह पागलोंका बाना क्यों बना रखा है ?"

पं० उमाशंकर—"क्या इस प्रश्नके द्वारा तुम मेरी दृढ़ता अथवा कमजोरीकी परीक्षा लेना चाहते हो ?"

पं०दीनानाथने मुस्कुराते हुए कहा—"मैं तुम्हारी दृढ़ताका

कायल हूं। पर दृढ़ता दिखलानेके लिये इस्तीफा देनेकी क्या जरूरत थी? क्या अपने पदपर रहकर तुम जनताकी भलाई नहीं कर सकते थे? क्या मेरे मामलेमें निष्पक्ष न्यायकर तुम जनताके सामने वास्तविक प्रेमका एक सच्चा आदर्श रखनेमें समर्थ नहीं हुए थे? फिर तुम इतनी उतावली क्यों कर बैठे?"

पं० उमाशंकरने हँसते हुए उत्तर दिया—"तुम्हारी बातें सुनकर मुझे हँसी आ रही है। मजाकमें इस प्रकारकी बातें सुननेपर मुझे कुछ आश्चर्य न होता, पर सिद्धान्तके रूपमें तुम इस प्रकारकी दलील क्यों पेश कर रहे हो?"

पं० दीनानाथ—"मैं मजाक नहीं कर रहा हूं। इस्तीफा देकर तुमने सचमुच बड़ा अनर्थ किया।"

पं० उमाशंकर—"जेलसे तो तुम एक विचित्र तर्कशैली लेकर आये हो। मैं तुम्हारी बातोंका उत्तर देनेमें असमर्थ हूं। पर तुम्हें जान लेना चाहिये कि जिस कर्तव्य-ज्ञानकी शिक्षा मुझे देकर तुम जेल गये थे, उसी कर्तव्य-ज्ञानने मुझे इस्तीफा देनेके लिये प्रेरित किया। तुम्हारी बातोंका इस समय मेरे पास और कोई उत्तर नहीं है।"

पं० दीनानाथ—"उत्तर हो ही नहीं सकता है? तुम्हारे कार्य तो सदा इसी प्रकार वेसिर पैरके हुआ करते हैं। जल्दीबाजी करनेमें तो तुम अपना सानी नहीं रखते।"

पं० उमाशंकर हँसकर अपने मित्रकी कलाई दबाते हुए बोले—"मुझे बच्चोंकी तरह भुलानेकी चेष्टा न करो। एक डिप्टी

कलक्टर भला किस प्रकार जनताकी सेवा कर सकता है? मैंने तुम्हारे मामलेमें जनताको क्या खाक शिक्षा दी? इस बातको जानते हुए भी कि तुम निर्दोष हो,मुझे तुम्हें दण्डित करनेके लिये बाध्य होना पड़ा और वह भी कर्तव्यके दबावमें पड़कर। ऐसी दशामें तुम एक डिप्टी कलक्टरकी अवस्थाका स्वयं विचार कर सकते हो। जिसका कर्तव्य निर्दोषको दण्डित करना है, वह किस प्रकार किसीकी सेवा अथवा भलाई कर सकता है? तुम भूलकर भी यह नहीं समझना कि मैंने तुम्हारे लिये अथवा तुम्हारे पत्रके लिये अपने पदको छोड़ा है। मुझे तो इस कामसे बहुत पहले ही घृणा हो गयी थी।"

सजल नेत्रोंसे पं० दीनानाथने कहा—"उमाशंकर! तुम मनुष्य नहीं, साक्षात देवता हो। पूर्व जन्ममें तुमने बहुत बड़ी तपस्या की होगी, तभी तुम्हारा हृदय इतना विशाल हैं, तुम्हारे विचार इतने उदार हैं। अपना सर्वस्व अर्पण करनेपर भी तुम उसका नाम लेना नहीं चाहते, यह तुम्हारे जैसे महापुरुषोंका ही काम है। पूर्व जन्ममें मैंने बहुत बड़ा पुण्य किया होगा, जिसके फलस्वरूप मुझे तुम्हारे जैसा साथी मिला"

अपने मित्रकी इन बातोंका पं० उमाशंकरजीने कोई उत्तर नहीं दिया। वे कुछ बोलना चाहते थे, पर उनका गला ही रुक गया। पं० दीनानाथके परिवारवाले भी उन्हें देखनेके लिये उत्सुक होते होंगे—यह सोचकर पं० उमाशंकरजीने उसी समय उन्हें उनके घर पहुंचा दिया।

———

चौबीसवां अध्याय

आज रामपुरके लोगोंमें अपूर्व उत्साह है। सभी उमंगके साथ अपना कार्य कर रहे हैं। पं० उमाशंकर लगभग एक सप्ताहसे यहां आश्रम खोलनेकी अन्तिम तैयारीमें लगे हुए हैं। पं० दीनानाथकी रायसे आश्रमका नाम 'प्रेम-मन्दिर' रखनेका निश्चय किया गया है और कल प्रातःकाल उन्हींके द्वारा इसका उद्‌घाटन-कार्य भी सम्पन्न किया जानेवाला है। इस कार्यके लिये पं०दीनानाथ आज शामकी गाड़ीसे आने वाले हैं। बाबू रामकिशोर प्रसाद भी इस काममें पं० उमाशंकरकी जी जानसे सहायता कर रहे हैं। सच पूछा जाय तो यह उनके ही अपार परिश्रमका फल है कि पंडितजी आश्रम विषयक सभी प्रबन्धोंके करनेमें इतने शीघ्र समर्थ हुए।

मजदूर संघके सदस्यगण भी इस कार्यमें अपार परिश्रम कर रहे हैं। स्वयंसेवकोंका दल नाना प्रकारके कामोंमें लगा हुआ है। कुछ लोग मकानको साफ कर रहे हैं तथा कुछ लोग उसे सजानेके काममें लगे हुए हैं। सब दूने उत्साह तथा जागृतिके साथ काम कर रहे हैं। एक मतसे किसी कार्यका होना किस तरह अधिक सफल होता है, इसका स्पष्ट उदाहरण आज उन लोगोंके सामने विद्यमान है। पहले जो रामकिशोर प्रसाद इन कार्योंका विरोध करते थे वही आज इसकी सफलताके लिये जी जानसे

परिश्रम कर रहे हैं। फिर उनमें नवीन जागृतिका भाव पैदा क्यों न हो ? वे क्यों नहीं अपनेमें नवीन ज्योति तथा अपूर्व उत्साह अनुभव करें ? इन दिनों रामपुरके एक एक बच्चे के हृदयमें जोश है, आत्मामें उमंग है तथा नसोंमें स्फूर्ति है। वे देशके लिये मरना और जीना चाहते हैं। अपने अस्तित्वको वे देशके अस्तित्वमें मिला देना चाहते हैं।

दिनभरमें लोगोंने आश्रमके प्रायः सभी कार्योंको समाप्त कर डाला और संध्या होते ही वे बड़े उत्साहके साथ पं० उमाशंकर तथा रामकिशोर प्रसादके नेतृत्वमें पं० दीनानाथका स्वागत करनेके लिये चले। नियमित समयपर गाड़ी स्टेशनपर आ लगी और सब-लोग अपूर्व उत्साहके साथ जयध्वनि करते हुए पं० दीननाथको ले आये। उनके ठहरनेका प्रबन्ध रामकिशोर बाबूके यहां किया गया था। पं० उमाशंकरजी भी उन्हींके यहां ठहरे हुए थे। स्टेशनपर पं० उमाशंकरजीने रामकिशोर प्रसादका अपने मित्रसे परिचय कराया। पर वहाँ अधिक बातें न हो सकीं। अतएव उनके मकानपर पहुँचनेके थोड़ी देर बाद उन्होंने रामकिशोर बाबूसे कहा—"आपको इस जागृतिमें भाग लेते देख मुझे असीम आनन्द हो रहा है। वास्तवमें आप जैसे सुसम्पन्न व्यक्तिके उद्योगसे ही भारतका कल्याण हो सकता है।"

रामकिशोर प्रसाद—"मेरा हृदय तो बहुत ही कलुषित है। मैंने तो आजतक कोई प्रशंसनीय कार्य नहीं किया है। अब आप-लोगोंकी शरणमें आया हूँ। इससे मेरा अवश्य ही कल्याण

होगा। क्योंकि आपलोग मनुष्य होते हुए भी देवता हैं, गृहस्थ होते हुए भी तपस्वी हैं।"

पं० दीनानाथ—"हमलोगोंकी क्या शक्ति है? सभी कुछ ईश्वर करता है। वह चतुर खिलाड़ी जिस रास्तेपर हमको तथा आपको चलनेके लिये वाध्य करता है, हमलोग उसी रास्तेपर चलते हैं। हमलोग तो किसी कार्यके साधनमात्र हैं। उसका वास्तविक सम्पादन तो ईश्वर ही करता है।"

रामकिशोर प्रसाद—"फिर भी मेरे जैसे पापीका कल्याण तो आप जैसे महापुरुषोंद्वारा ही हो सकता है। सतसंगकी महिमा अपार है। इसीके फलस्वरूप मिश्रीके साथमें लगा हुआ बाँस भी उसीके दाममें बिक जाता है। उसकी कीमत मिश्रीके बराबर लगती है। अतएव आपलोगोंके साथ साथ मेरे जीवनमें भी कुछ सुधार हो जायगा, इसमें कोई सन्देह नहीं।"

पं० दीनानाथ—"ईश्वर सब भला ही करता है। हमलोगोंसे तो कोई लाभ नहीं हो सकता है। पर ईश्वरकी कृपासे आपका कल्याण अवश्य होगा। अन्धकारके बाद प्रकाश तथा प्रकाशके बाद अन्धकारका होना एक प्राकृतिक क्रिया है, स्वाभाविक नियम है। आप पहले अन्धकारमें थे, अब प्रकाशमें आये हैं। जेल जानेके पहले जब मैं पहली बार आपके ग्राममें आया था, उस समय यहांका कलह देखकर मेरी आत्मा व्यथित हो उठी थी और मैंने ईश्वरसे प्रार्थना की थी कि वह यहाँके कलहका किसी प्रकार अन्त करे। अपने भाषणमें भी मैंने जमीन्दारों तथा रैयतोंके

मेलकी आवश्यकता बतलाई थी। पर उस समय मेरी बातें स्वप्न-वत थीं। आज उसी स्वप्नको कार्यरूपमें परिणत होते देखकर, मेरा हृदय आनन्दसे फूल उठा है। बाबू रामकिशोर! आपकेही द्वारा इस आनन्ददायक वायुमण्डलका निर्माण हुआ है। अतएव इसके लिये मैं आपको हृदयसे धन्यवाद देता हूं।"

रामकिशोर प्रसाद—"मैंने तो कुछ भी नहीं किया है। यह सब आपकी तपस्या तथा आपके श्रद्धेय मित्र पं० उमाशंकरजीके अनवरत परिश्रमका फल है। मेरे सबबसे तो आपको अकारण जेलका कष्ट सहना पड़ा। इसके लिये मैं आपसे क्षमा याचना करता हूं। आप उदार हैं। अतएव आशा है कि आप मुझे अवश्य ही क्षमा करेंगे।"

पं० दीनानाथ—"मेरी जेल-यात्रामें आपका कोई अपराध न था। प्रत्येक व्यक्ति अपना अपना कर्त्तव्य करता है। आपलोगोंके विषयमें सच्ची बातें लिखना मेरा कर्त्तव्य था, अतएव मैंने वैसा किया। निर्दोष जानते हुए भी कानूनकी अपूर्णताके कारण मुझे दण्डित करना मेरे मित्र पं० उमाशंकरका कर्त्तव्य था, और हार्दिक वेदनाके साथ उन्होंने अपने कर्त्तव्यके कारण वैसा किया। उसी प्रकार दलका संघर्ष उपस्थित होनेपर, अपने दलका समर्थन करना आपका कर्त्तव्य था। अतएव आपने वैसा किया। नीतिके अनु-सार आपका यह कार्य किसी प्रकार अनुचित नहीं कहा जा सकता है। देखिये महाभारतके युद्धमें द्रोणाचार्य तथा भीष्म-पितामह सरीखे वयोवृद्ध आचार्योंने कौरव दलका समर्थन किया

था। वे जानते थे कि इस दलका आधार पाप है, आत्मा अन्याय है तथा शक्ति अत्याचार है। फिर भी केवल कर्त्तव्यके कारण वे उस दलका समर्थन करनेके लिये वाध्य हुए। अतएव अपने पुराने सिद्धान्तके आधारपर आपने जो कुछ किया उसके लिये आपका सिद्धान्त अपराधी ठहराया जायगा, आपका हृदय तथा आपकी आत्मा नहीं।"

रामकिशोर प्रसाद—"आपलोग तर्कके द्वारा सभी कुछ प्रमाणित कर सकते हैं। वास्तवमें यह आपकी महानता है कि मेरे अक्षम्य अपराधको आप अपराध ही नहीं समझते।"

पं० दीनानाथ—"आप एक छोटीसी घटनाके लिये इस प्रकार चिन्तित क्यों हो रहे हैं?"

रामकिशोर प्रसाद—"आप जैसे तपस्वी आदमीको मेरे कारण कष्ट उठाना पड़ा, इसके लिये मुझे सचमुच बड़ी ग्लानि हो रही है।"

पं० दीनानाथ—"आप उन बातोंको सदाके लिये भूल जांय। बीती बातको लेकर इस प्रकार चिन्तित होनेकी कोई आवश्यकता नहीं है।"

वे लोग इस प्रकार बातें कर ही रहे थे कि पं० उमाशंकरजी आश्रमका देखभाल करके लौट आये। जलपान पहलेहीसे प्रस्तुत था, ये लोग केवल उनकी इन्तजारी कर रहे थे। अतएव उनके आते ही सब लोगोंने जलपान किया। जलपानके कार्यसे निवृत्त हो, वे आश्रमके लिये भावी कार्यक्रम प्रस्तुत करने लगे। रामकिशोर

प्रसाद भी उन लोगोंको अपनी बुद्धिके अनुसार नाना प्रकारकी सम्मति देते रहे। अन्तमें तीनों व्यक्तियोंकी रायसे आश्रमके लिये इस प्रकारकी एक नियमावली बनायी गयी।

१—आश्रमका नाम 'प्रेम-मन्दिर' रहेगा।

२—यहाँ सभी अवस्थाके लोगोंको नाना प्रकारकी शिक्षा दी जायगी।

३—इस आश्रममें अक्षर-ज्ञानके साथ साथ हस्तकौशलकी भी शिक्षा दी जायगी।

४—वर्तमान समयमें इसके चार विभाग रहेंगे।

(क) साहित्यिक विभागः—

इस विभागमें पढ़ने लिखनेकी शिक्षा दी जायगी। साहित्यके साथ साथ गणित, इतिहास तथा भूगोल आदिका भी अध्ययन कराया जायगा। सभी विषयोंकी शिक्षा राष्ट्रभाषा हिन्दीमें दी जायगी। अंग्रेजीका भी थोड़ा बहुत ज्ञान कराया जायगा। जो लोग विशेष रूपसे अंग्रेजीका अध्ययन करना चाहेंगे, उनके लिये इसका अलग प्रबन्ध रहेगा।

(ख) आध्यात्मिक विभागः—

इस विभागमें लोगोंको धार्मिक तथा आध्यात्मिक शिक्षा दी जायगी। पर धार्मिक शिक्षाके रूपमें किसी सम्प्रदाय विशेषका प्रतिपादन अथवा विरोध नहीं किया जायगा। धर्मके मूल, केन्द्रीय तथा निर्विवाद सिद्धान्तोंसे ही शिक्षक लोग अपना सम्बन्ध रखेंगे।

(ग) औद्योगिक विभागः—

इस विभागमें कृषिकौशलके साथ साथ दस्तकारीकी भी शिक्षा दी जायगी। इसके साथ कई प्रकारकी चीजोंके प्रस्तुत करनेका प्रबन्ध किया जायगा, जिससे इस विभागकी आमदनीसे आश्रमका कम-से-कम आधा खर्च निकल सके। इस विभागमें एक यह विशेषता रहेगी कि जो लोग अपनी जीविका उपार्जनमें लगे हुए हैं, वे अन्य विभागोंसे कोई सम्बन्ध नहीं रखते हुए भी, इस विभागमें अपनी सुविधाके अनुसार शिक्षा पा सकते हैं।

(घ) स्वास्थ्य विभागः—

इस विभागके द्वारा लोगोंको स्वस्थ रहनेकी शिक्षा दी जायगी और नयी नयी ढंगकी कसरतों तथा लाभप्रद खेलोंका प्रचार किया जायगा। इस विभागमें भी यह विशेषता रहेगी कि अन्य विभागोंसे किसी प्रकारका सम्बन्ध नहीं रहनेपर भी लोग इस विभागमें शिक्षा पा सकते हैं।

५—इस आश्रमकी सभी प्रकारकी शिक्षा आठ वर्षोंमें समाप्त कर दी जायगी।

६—किसी विद्यार्थीको शुल्क नहीं देना पड़ेगा।

७—दूरसे आये हुए विद्यार्थियोंके लिये निवासस्थानका भी प्रबन्ध रहेगा।

८—गरीब विद्यार्थियोंका भोजन-खर्च भी आश्रमसे ही दिया जायगा।

९—इस आश्रममें प्रत्येक जातिके लोग शिक्षा पा सकेंगे।

१०—आठ वर्षसे कम उम्रके विद्यार्थी इस आश्रममें भर्ती नहीं किये जायँगे।

११—पूरी पढ़ाई समाप्त होनेके बाद यहाँसे निकले हुए विद्यार्थियोंको दो वर्षतक अवैतनिक रूपसे आश्रमकी सेवा करनी पड़ेगी।

तीनों व्यक्तियोंने एकमतसे उपरोक्त नियमावली तैयार की। उस समयतक ग्यारह बज चुका था। भोजन तैयार होनेकी खबर नौकर पहले ही कई बार दे चुका था। अतएव शीघ्र ही भोजनकर, दिनभरके थकेमाँदे रहनेके कारण वे लोग चुपचाप सो गये।

दूसरे दिन प्रातःकाल ही 'प्रेम-मन्दिर' का उद्घाटन होनेवाला था। अतएव सूर्योदय होनेके बहुत पहलेसे ही समूचे ग्राममें चहलपहल मचने लगी। लोगोंके चेहरेपर अपूर्व उत्साह था। समूचे ग्राममें विद्युतकी लहर लहरा रही थी। बच्चेसे लेकर बुड्ढेतक सभी आश्रमके नजदीक इकट्ठे हो रहे थे। लक्ष्मीनारायण भी बड़े उत्साहके साथ सभी बातोंका प्रबन्ध कर रहे थे। मजदूर आन्दोलनके फलस्वरूप ही आज रामपुरमें 'प्रेम-मन्दिर' की स्थापना हो रही है, यह सोचकर मजदूर आन्दोलनके जन्मदाता लक्ष्मीनारायणको हार्दिक प्रसन्नता हो रही है। ऐसा होना स्वाभाविक भी है। अपने लगाये हुए वृक्षको फूलतेफलते देखकर भला किसको आनन्द न होगा?

पण्डित उमाशंकरने कानपुरके कलक्टरसाहबको भी इस उत्सवमें भाग लेनेके लिये निमंत्रित किया था। पर भोरकी गाड़ीसे उन्हें न आते देखकर वे हतोत्साह हो गये।

प्रातःकाल ही जलपान आदि करनेके बाद पं० दीनानाथ तथा पं० उमाशंकर रामकिशोर प्रसादके साथ आश्रममें जा पहुंचे। उन लोगोंके पहुंचनेके कुछ मिनट पहले ही कलक्टरसाहब मोटरद्वारा वहाँ पहुंच गये थे। उन्हें वहाँ देखकर पं० उमाशंकरको बड़ी प्रसन्नता हुई। कलक्टरसाहबसे जलपान आदि करनेका आग्रह किया गया। पर धन्यवादके साथ उन्होंने इसके लिये माफी माँग ली।

वहाँ पहले हीसे दर्शकोंकी अपार भीड़ लग गयी थी। सब लोग कार्यवाहीके आरम्भ होनेकी उत्सुकतासे प्रतीक्षा कर रहे थे। अतएव नियमित समयपर 'प्रेम-मन्दिर' के उद्घाटनका कार्य आरम्भ हुआ। प्रारम्भमें पण्डितोंद्वारा हवन तथा मङ्गलाचरण किया गया। इसके बाद 'प्रेम-मन्दिर' का उद्घाटन करते हुए पं० दीनानाथजीने इस प्रकार एक छोटा किन्तु मर्मस्पर्शी भाषण दिया—"उपस्थित सज्जनो तथा प्रेम-मन्दिरके आदर्श पुजारियो! आपलोगोंने अपने मन्दिरका द्वार खोलनेको मुझे आमंत्रित किया है, इस कृपाके लिये मैं आपको हार्दिक धन्यवाद देता हूं। पर इस पुण्य कार्यके लिये आपने मेरे जैसे तुच्छ जीवको क्यों चुना, इसका कारण समझनेमें मैं सर्वथा असमर्थ हूं। अच्छा होता यदि किसी अधिकारी व्यक्तिद्वारा आप इस कार्यका सम्पादन कराते। पर अब तो आपकी कृपासे अथवा मेरे जैसे दुर्बल व्यक्तिके ऊपर इस बड़े बोझको लाद देनेकी अकृपासे मेरे ऊपर इसका उत्तरदायित्व आ गया है।

अंग्रेजीमें एक कहावत है—"Necessity is the mother of invention (आवश्यकता आविष्कारकी जननी है।) वाली

कहावतके अनुसार इस उत्तरदायित्वपूर्ण कार्यके सम्पादनकी आवश्यकताका अनुभवकर मेरे हृदयने कई प्रकारके आविष्कारोंसे अपनेको लाभान्वित किया है। उसमें नवीन शक्ति तथा आशापूर्ण स्फूर्तिका प्रादुर्भाव हुआ है। आपके महत्वपूर्ण आदर्शसे मुझे नाना प्रकारकी शिक्षाएं मिली हैं। 'प्रेम-मन्दिर'के पुजारी बननेकी इच्छाका स्त्रोत समूचे हृदयमें प्रवाहित होने लगा है। यह सब लाभ आपकी कृपाके कारण हुआ, अतएव आप मेरा हार्दिक धन्यवाद स्वीकार करें।

सज्जनो ! आपलोग बड़ी आशाके साथ इस मन्दिरकी स्थापना कर रहे हैं। आप देशके सामने एक नवीन आदर्श तथा उज्ज्वल कार्यक्रम उपस्थित कर रहे हैं। दासत्वके गहरे पंकमें फँसे हुए भारतके लिये स्वावलम्बनके मंत्रके सिवा परित्राणका और कोई दूसरा मार्ग नहीं हो सकता है और यदि मैं आपके उद्देश्योंको समझनेमें सफल हुआ हूं तो निर्भयतापूर्वक कह सकता हूं कि स्वावलम्बनकी नींवपर ही आपके मन्दिरकी विशाल इमारतका निर्माण हो रहा है। आप देशको स्वावलम्बी बनाना चाहते हैं। आप दरिद्रोंको, दुखियोंको तथा उत्पीड़ितोंको अपने पैरोंपर खड़ा होनेकी शिक्षा देना चाहते हैं।

सज्जनो ! आपका प्रयत्न स्तुत्य है। आप देशके मर्जको समझनेमें सफल हुए हैं। वर्तमान परिस्थितिमें देशको इसी बातकी आवश्यकता है। ईश्वर आपके प्रयत्नको सफल करे, जिससे आप अधिकाधिक उत्साहके साथ देशका कल्याण तथा उत्थान कर सकें—दयामय भगवानसे हमारी यही प्रार्थना है।

सज्जनो ! मैं आपका अधिक समय बरबाद करना नहीं चाहता हूं। व्यक्तिगत रूपसे मैं आजन्म आपके मन्दिरकी सेवा करनेके लिये तैयार हूं। भगवान मुझमें शक्ति दे, जिससे मैं किसी प्रकार आपके उपयोगी सिद्ध हो सकूं। अन्तमें, 'प्रेम-मन्दिर'के उत्साही संस्थापको ! आप एक बार फिर मेरा हार्दिक धन्यवाद स्वीकार करें। आपके इस आदर्श प्रयत्नके लिये मैं आपको बधाई देता हूं।"

पं० दीनानाथके बाद पं० उमाशंकर थोड़ी देरतक बोले। उन्होंने अपने भाषणमें जनताको 'प्रेम-मन्दिर' का स्पष्ट रूपसे उद्देश्य समझाया। अन्तमें मन्दिरके कार्यकर्ताओं तथा उपस्थित लोगोंको उन्होंने धन्यवाद दिया। इसके साथ ही उन्होंने राम-किशोर प्रसाद तथा पं० दीनानाथको भी धन्यवाद दिया।

उनके भाषणके बाद बहुत आग्रह किये जानेपर कलक्टर-साहब बोलनेके लिये उठे। लगभग पांच मिनटमें उन्होंने अपना भाषण संक्षेपतः इस प्रकार दिया—"पं० उमाशंकरजी तथा अन्य सज्जनो ! आपने इस उत्सवमें भाग लेनेका मुझे जो अवसर प्रदान किया है, इसके लिये मैं आपको हृदयसे धन्धवाद देता हूं। उद्योग उन्नतिकी जननी है। आपका यह उद्योग आपके गौरवपूर्ण भविष्यका द्योतक है। मैं आशा करता हूं कि आप लोग 'प्रेम-मन्दिर'का संचालन इस प्रकार करेंगे, जिससे इसमें सभी विचारके आदमी भाग ले सकें। किसी भी क्रान्तिकारी भावको विद्यालयमें स्थान देना कदापि उचित नहीं कहा जा सकता है।

क्रान्तिसे मेरा मतलब केवल राजनैतिक क्रान्तिसे ही नहीं है। सामाजिक, धार्मिक अथवा किसी भी प्रकारके क्रान्तिकारी भाव विद्यार्थियोंके उपयुक्त नहीं होते। बालकोंका कोमल मस्तिष्क क्रान्तिके वास्तविक भावको समझने तथा उसके अनुसार कार्य करनेमें सर्वथा असमर्थ रहता है। अतएव मैं आशा करता हूं कि आपलोग सभी प्रकारके विवादोंसे अलग रहकर, केवल शिक्षा-प्रचारके उद्देश्यसे इस मन्दिरको चलायेंगे। ऐसी अवस्थामें आवश्यकता पड़नेपर सरकारसे भी आपको सहायता मिल सकती है। अन्तमें आपलोगोंकी कृपाके लिये मैं एक बार फिर आपको धन्यवाद देना अपना कर्त्तव्य समझता हूं।"

कलक्टरसाहबके भाषणके बाद पं० उमाशंकरजीने 'प्रेम-मन्दिर' के अध्यक्षकी हैसियतसे सभी उपस्थित लोगोंको धन्यवाद दिया और उद्घाटन कार्य सकुशल समाप्त हुआ।

बहुत आग्रह किये जानेपर भी कलक्टरसाहब ठहरनेके लिये राजी न हुए और उसी समय मोटरसे कानपुरके लिये रवाना हो गये। पं० उमाशंकरके आग्रहसे पं० दीनानाथजी दो-चार दिनके लिये वहीं ठहर गये।

पच्चीसवां अध्याय

'प्रेम-मन्दिर' को स्थापित हुए अब दो महीनेसे भी कुछ अधिक हो चले। पंडित उमाशंकर उसका प्रबन्ध करनेके लिये स्थायी रूपसे रामपुरमें रहा करते हैं। पंडित दीना-नाथ भी वहां जाकर कभी कभी उसके संचालनमें सहायता दे दिया करते हैं। स्थायी रूपसे वहां रहनेके कारण पं० उमाशंकरने अपने परिवारको भी वहीं बुला लिया है। एक प्रकारसे वे आश्रम-के जन्मदाता कहे जा सकते हैं। आश्रमपर उनकी बड़ी ममता है। वे पुत्रकी तरह उसे प्यार करते हैं। आश्रमके भविष्यकी उन्हें बरा-बर चिन्ता बनी रहती है। उसे स्थायित्व प्रदान करनेके लिये वे किसी स्थायी कोषका प्रबन्ध करना चाहते थे। स्वयं पथ-प्रदर्शक बननेके उद्देश्यसे उन्होंने अपनी निजी सम्पत्ति (जो लगभग एक लाख रुपयेकी थी) का आधा भाग आश्रमके नामसे लिख दिया। इस कार्यमें उनकी स्त्रीने बहुत कुछ आपत्ति की। पर उन्होंने उसकी बातोंकी कोई परवाह न कर अपनी सारी सम्पत्ति 'प्रेम-मन्दिर' तथा अपने पुत्र रामकुमारके बीच बराबर बराबर बांट दी। उनकी इस दानशीलताको देखकर सब चकित रह गये।

इस प्रकार 'प्रेम-मन्दिर' के स्थायी कोषकी नींव पड़ी और उस प्रान्तके सब लोगोंका ध्यान उस ओर आकर्षित हो गया। 'प्रेम-मन्दिर'का नाम उसके जन्मदाताके इस आदर्श कार्यके कारण

दिग्दिगन्तमें फैलने लगा और बाहरके लोग भी पंडितजीको इस कार्यमें सहायता देने लगे और सभी लोगोंको यह आशा होने लगी कि निकट भविष्यमें ही 'प्रेम-मन्दिर' की गणना भारतकी प्रसिद्ध संस्थाओंमें होने लगेगी।

अपने मित्रका यह सराहनीय उद्योग देखकर पं० दीनानाथको भी हार्दिक प्रसन्नता हुई और वे भी दूने उत्साहके साथ 'निर्भय' को चलाते रहे। आज रविवारके कारण वे दोपहरके भोजनके बाद बिस्तरेपर विश्राम कर रहे हैं। इसी समय तारवाला उनके नामका एक तार ले आया। तारको देखते ही उनका कलेजा काँप उठा। अनिष्टकी आशंकासे उनकी आत्मा व्याकुल हो उठी। बड़ी चिन्ता और व्यग्रताके साथ उन्होंने उस तारको खोलकर पढ़ा। पढ़ना समाप्त होते ही वे उसे जमीनपर फेंकते हुए पागलकी तरह इस प्रकार बोलने लगे—"हा, ईश्वर! क्या मुझपर वज्रका पहाड़ गिराकर ही छोड़ोगे? मैंने उस जन्ममें ऐसा कौनसा अपराध किया था, जिसके कारण आज मुझे इतनी कठिन चिन्ताओंका सामना करना पड़ रहा है। भगवन्! क्या मेरे बसे हुए चमनको उजाड़नेमें ही तुम्हें आनन्द आता है? हा, ऐसा अत्याचार न करो। अपने किसी पुत्रको इस प्रकार धधकती हुई अग्निमें जलाना तुम्हें शोभा नहीं देता है। ईश्वर! ईश्वर!! रक्षा करो उस गरीब जीवकी। उसे इस दुनियासे ले जानेपर तुम्हें कोई भला न कहेगा। उसके द्वारा असंख्य आत्माओंका कल्याण होनेवाला है। अतएव संसारकी भलाईके लिये उसे जीवित रहने दो। इसीमें तुम्हारे पुरुषार्थकी

महत्ता है, न्यायकी मर्यादा है तथा तुम्हारे असंख्य पुत्रोंका कल्याण है।"

इस कोलाहलको सुनकर उनकी स्त्री सरस्वती दौड़कर उनके पास आई। उसके आते ही पं० दीनानाथजीने वह तार उसे पढ़नेके लिये दिया। तार पढ़ते ही वह सन्नाटेमें आ गयी। उसका हाथ कांपने लगा, हृदय धड़कने लगा और अत्यन्त दुखके साथ वह बोली—"अब आपको बहुत शीघ्र रामपुरके लिये प्रस्थान करना चाहिये। हैजेकी बीमारी बड़ी भयानक होती है। भगवान पंडितजीकी रक्षा करें।"

पं० दीनानाथ—"संध्याके पहले अब रामपुरकी कोई गाड़ी नहीं है।"

सरस्वती—"पर संध्यातक ठहरना उचित नहीं मालूम पड़ता। आप किसी मोटरका प्रबन्धकर वहांके लिये रवाना हो जांय। अच्छा होता यदि एक डाक्टर भी आप अपने साथ ले जाते।"

पं० दीनानाथ—"तुम ठीक कहती हो। मोटरपर जानेसे बहुत समयकी बचत होगी। वहां कोई अच्छा डाक्टर भी नहीं है। अतएव साथमें डाक्टर भगतरामको भी लेता जाऊँ। हैजेकी बीमारीके वे विशेषज्ञ समझे जाते हैं।"

इसी निश्चयके अनुसार किरायेकी एक मोटरपर डाक्टर भगतरामके साथ पं० दीनानाथजीने रामपुरके लिये प्रस्थान किया। लगभग दो घंटेमें वे वहां जा पहुंचे। पर वहांका दृश्य ही कुछ और था। उस समय तक पं० उमाशंकरजीकी नाड़ी ठंढी पड़ चुकी

थी। डाक्टर शोक प्रकाश करता हुआ अपने घरको जा रहा था। कलावतीका करुण क्रन्दन सुनकर सभीका हृदय फट रहा था। रामकिशोर प्रसाद तथा लक्ष्मीनारायण आदि अबोध बालककी तरह रो रहे थे। इसी समय पं० दीनानाथजी डाक्टर भगतरामके साथ जा पहुंचे। पर वहांका दृश्य देखते ही वे अधीर हो उठे। एकाएक अपने मित्रके गलेसे चिपटकर वे पागलकी तरह इस प्रकार बोलने लगे—"मुझे छोड़कर कहां जा रहे हो ? विपत्तिके समय अब मुझे सहारा कौन देगा ? मेरे हृदयके सम्राट ! मुझे छोड़कर हरगिज न जाओ। यदि जाना ही है, तो चलो मैं भी तुम्हारे साथ चलता हूं। स्वर्गमें ही हमलोग आनन्द करेंगे।"

इस समय उनका पागलपन कुछ काम कर गया। उनकी गर्मी लगनेसे पं० उमाशंकरकी नाड़ी धीरे धीरे चलने लगी। देखते ही देखते उनकी आंखें भी खुल गयीं। आंखें खुलते ही सबोंके हृदयमें आशाका संचार हो गया। सभी पंडितजीके जीवनकी थोड़ी बहुत आशा करने लगे। लोगोंकी नसोंमें बिजली दौड़ गयी।

उमाशंकरकी आंखें खुलीं अवश्य। पर उनमें बोलनेकी शक्ति न थी। अतएव इशारेसे उन्होंने अपने पुत्रको पास बुलाया और उसका हाथ अपने मित्रके हाथपर रखा। पं० दीनानाथ इसका आशय समझ गये और रोते रोते उन्होंने रामकुमारको गलेसे लगा लिया। ओफ, वह दृश्य भी कितना हृदय-विदारक था ? इस दृश्यको देखकर वहांके सभी लोगोंका हृदय पिघल गया। सब फूट फूटकर रोने लगे। इधर ये लोग रो पीट रहे थे और उधर

पं० उमाशंकरजीने सदाके लिये अपनी आंखें बन्द कर लीं। रोते हुए मित्र तथा तड़पते हुए परिवारको छोड़कर वे सदाके लिये अनन्तके गर्भमें विलीन हो गये ।

जिस 'प्रेम-मन्दिर' रूपी वाटिकाको पं० उमाशंकरने बड़े परिश्रमसे लगाया था, उसे अर्द्ध विकसित अवस्थामें ही छोड़कर इस संसारसे कूच कर गये। अपनी वाटिकासे निकले हुए सौरभ-मय सुगन्धका आनन्द उपभोग करनेका उन्हें अवसर न मिला। पर यह कोई आश्चर्यकी बात नहीं है। इस संसारमें बराबरसे ऐसा ही होता आया है। संसारके इतिहासका एक एक पृष्ठ इस कथनका साक्षी है। वीरवर मैकस्विनी आयर्लैण्डमें स्वतन्त्रताकी पताका फहरनेके पहले ही चल बसे; वर्तमान रूसके निर्माता प्रातः-स्मरणीय लेनिन अपने सिद्धान्तोंको पूर्ण विकसित अवस्थामें न देख सके; जाग्रत चीनके सर्वस्व डाक्टर सनयात सेन चीनमें शान्ति तथा जागृति स्थापित होनेके पहले ही इस संसारसे कूच कर गये और भारतीय स्वराज्यके विधाता लोकमान्य तिलक भारतमें स्वत-न्त्रताका झंडा फहरनेके पहले ही चल बसे। इन महापुरुषोंकी तरह पं० उमाशंकर भी अपने उद्योगोंका फल उपभोग न कर सके। ऐसा होना स्वाभाविक ही है। महापुरुष तो इस संसारमें काम करनेके लिये आते हैं। वे जीते हैं दूसरोंके लिये और मरते हैं दूसरोंके लिये। केवल काम करना ही उनका एक उद्देश्य रहता है, उसके फलकी वे कामना नहीं करते; वे कोई वृक्ष लगाते हैं, तो केवल इसी अभि-प्रायसे कि संसार उसका मीठा फल चखे, उसकी शांतिदायिनी छायामें

विश्राम करे। इसके सिवा उनका और कोई लक्ष्य नहीं रहता है। निजी स्वार्थ उनके ऊपर किसी प्रकारका प्रभाव नहीं डाल सकता है। अतएव जो कुछ हुआ वह स्वाभाविक ही है। इसमें न कोई नवीनता है और न कोई आश्चर्य। संसारकी भलाईके लिये पं० उमाशंकरजी 'प्रेम-मन्दिर'को स्थापित कर, यहांसे कूच कर गये।

डाक्टर भगतरामने भी परीक्षा करके मृत्यु हो जानेकी घोषणा कर दो और सभी कोई रोते पीटते दाहक्रियाका आयोजन करने लगे। यद्यपि बालक रामकुमारकी अवस्था इस समय केवल आठ वर्षकी ही है। पर उसीके द्वारा पं० उमाशंकरजीका यथाविधि दाह संस्कार कराया गया।

रामपुरसे पंडितजीका बहुत प्रेम था। अतएव उनको स्त्रीने वहीं श्राद्ध करनेका विचार किया। पं० दीनानाथजी कानपुरका भार दूसरे लोगोंपर छोड़कर, स्वयं स्थायी रूपसे वहां रहकर श्राद्ध आदिका प्रबन्ध करने लगे। रामकिशोर प्रसाद भी बड़ी तत्परतासे सभी कार्योंमें इन लोगोंकी सहायता करते रहे और सबके सहयोगसे पं० उमाशंकरजीका श्राद्ध यथाविधि सानन्द समाप्त हो गया।

छब्बीसवां अध्याय

बलिदानका असर बड़ा होता है। बलिदान है तपस्याका विध्वंसात्मक रूप; और तपस्याके द्वारा ही इस संसारका प्रत्येक कार्य सफल होता है। रामपुरमें हैजेका प्रबल प्रकोप होनेपर कुछ लोगोंने पं० उमाशंकरजीसे थोड़े दिनोंके लिये उस स्थानको छोड़ देनेके लिये कहा था। पर उस योगीने अपने योगासनसे उठना किसी प्रकार उचित नहीं समझा। तपोवनमें आग लगनेपर उसे छोड़कर भाग जानेकी दलील उन्हें पसन्द नहीं आई। पसन्द आती भी कैसे? वे थे पूरे कर्मवीर। कर्त्तव्य-पथपर मर मिटना उनका स्वाभाविक धर्म था। 'प्रेम-मन्दिर' उन्हें इतना प्यारा था कि वे एक क्षणके लिये भी उससे अलग होना नहीं चाहते थे। और अन्तमें उसीकी वेदीपर अपनेको बलिदानकर उन्होंने स्थायी शान्ति प्राप्त की।

उनकी मृत्युके बाद हैजेसे उस स्थानमें और किसीकी मृत्यु न हुई। ईश्वरकी यह गति देखकर लोगोंको बहुत आश्चर्य हुआ। कालने वास्तवमें एक पुराने पारखीका काम किया। असंख्य टुकड़ोंके बीच सबसे बहुमूल्य रत्नपर अधिकार जमानेमें उसे आश्चर्यजनक सफलता मिली।

पं० उमाशंकरजीकी मृत्युके बाद उनकी आत्मा 'प्रेम-मन्दिर'-के कार्योंका सम्पादन करती रही। जीवित अवस्थामें पंडितजी

जिस सफलताको बड़ी कठिनाईसे प्राप्त करते, वही सफलता आज 'प्रेम-मन्दिर' को उनके आत्मबलके द्वारा बड़ी सरलतासे मिल रही है। सभी दूने उत्साहके साथ इसकी सफलताके लिये प्रयत्न कर रहे हैं। उनके सामने धर्मकी तरह पं० उमाशंकरजीका आदर्श नाच रहा है। पं० दीनानाथजी भी ऐसे अवसरपर पीछे रहनेवाले न थे। अपने मित्रके अधूरे कार्यको पूरा करना उन्होंने अपना धर्म समझा और सभी कोई उनके नेतृत्वमें आश्रमकी सफलताके लिये कार्य करने लगे। इस प्रकार आश्रमकी दिन दूनी तथा रात चौगुनी उन्नति होने लगी।

पं० दीनानाथजीने अपने मित्रके सभी कार्योंका बोझ अपने ऊपर उठा लिया। रामकुमारको वे बालक तथा उसकी माताको छोटे भाईकी स्त्रीकी तरह समझने लगे। उन लोगोंको किसी प्रकारका कष्ट न हो, इसकी चिन्ता उन्हें बनी रहती है। रामकुमारकी पढ़ाईका उन्हें सदा ध्यान रहता है। वे स्वयं उसे नियमित रूपसे पढ़ाया करते हैं।

बाबू रामकिशोर प्रसाद भी अपनी शक्तिभर आश्रमकी सेवा करते रहे। पं० उमाशंकरजीने उन्हें बनवारीकी स्त्रीकी सहायता करनेका आदेश दिया था। अतएव वे बराबर उसकी ओर ध्यान रखने लगे। उसकी जीविकाके लिये उन्होंने पांच बीघे जमीन दे दी। जमीन पाकर वह बड़ी प्रसन्न हुई और उसीकी आयसे उसका सारा खर्च चलने लगा।

कुछ दिनोंके बाद कलावतीके बहुत आग्रह करनेपर पं०

दीनानाथने अपने परिवारको भी रामपुरमें ही बुला लिया और दोनों परिवारोंके व्यक्ति मिलकर बड़ी शान्तिके साथ रहने लगे। पारस्परिक प्रेम तथा सहृदयतामें कितना आनन्द है, इसका अनुभव वे लोग करने लगे। यद्यपि पं० दीनानाथ अपने हृदयसे अपने मित्रकी जुदाईका दर्द किसी प्रकार दूर नहीं कर सके, पर अपने कर्त्तव्यका पालन करनेके कारण उन्हें थोड़ी बहुत शान्ति मिलती रही। कलावती तथा सरस्वतीमें भी बड़ी घनिष्टता हो गयी। वे दोनों सगी बहिनकी तरह मिलकर रहने लगीं।

सताइसवां अध्याय

समयकी गति बड़ी तीव्र होती है। दिनके बाद महीना तथा महीनेके बाद वर्ष किस प्रकार व्यतीत होता है, इसका किसी-को भी पता नहीं लगता। पं० उमाशंकरजीको मृत्युकी स्मृति अब भी लोगोंके हृदयमें ताजी है। 'प्रेम-मन्दिर' की गणना अभी नव-जात संस्थाओंमें की जाती है। पर उसके स्थापित हुए एक दो नहीं, पूरे आठ वर्ष व्यतीत हो गये। पं० दीनानाथजीके अन-वरत परिश्रमसे 'प्रेम-मन्दिर' ने बहुत कुछ उन्नति की। इसके द्वारा इन दिनों साधारण तथा निम्न श्रेणीके लोगोंका बहुत कुछ कल्याण हो रहा है।

रामशरणका लड़का गोपाल भी आरम्भसे ही 'प्रेम-मन्दिर'में अध्ययन कर रहा था। वह पढ़ने लिखनेमें बहुत तीव्र बुद्धिका निकला और क्रमशः वहाँकी समूची पढ़ाई समाप्त कर दी। औद्यो-गिक विभागकी पढ़ाईमें वह आरम्भसे ही अपनी श्रेणीके बालकोंमें प्रथम होता था। इस ओर उसकी बड़ी अच्छी प्रवृत्ति थी। साबुन बनानेके कार्यका उसने विशेष रूपसे अध्ययन किया था। अतएव शिक्षा समाप्त करते ही उसने साबुनका एक छोटासा कारखाना खोल दिया। वह अकेलेही उसमें काम करता था। वह नवयुवक तो था ही, इसके साथही परिश्रम तथा अध्यवसाय उसके स्वाभाविक गुण थे। अतएव दो-चार महीनोंमेंही उसका कारखाना चल निकला और उसे सौ-डेढ़सौ रुपयेकी माहवारी आमदनी होने लगी।

सामाजिक वहिष्कारके दिनोंमें उसने स्वर्गीय पं० उमाशंकर-जीके सामने पाँच वर्ष तक अविवाहित रहनेकी प्रतिज्ञा की थी। उसकी यह दृढ़ता देखकर स्वर्गीय पंडितजीने विना किसी शर्तकेही उन लोगोंको वहिष्कार-बन्धनसे मुक्त कर दिया था। पर पंडितजीकी इस उदारतासे उसने किसी प्रकारका लाभ उठाना उचित नहीं समझा। ब्रह्मचर्यकी धुन हृदयमें समा गयी और विद्यार्थी जीवन तक अविवाहित रहनेका उसने दृढ़ निश्चय कर लिया।

पाँच वर्ष बीत जानेपर उसके माता-पिताने विवाहकी बड़ी धूम मचायी। पर वह अपने निश्चयपर दृढ़ रहा। विवाह करनेसे उसने साफ इन्कार कर दिया। उसकी दृढ़ताके सामने किसीका कुछ वश न चला और वह आदर्श बालक निर्विघ्नरूपसे विद्याध्ययन करता रहा।

विद्यार्थी जीवन व्यतीतकर, अब गोपालने संसारमें पदार्पण किया है। संसारमें अपना अस्तित्व बनाये रखनेके लिये उसे अब भयंकर युद्ध करना पड़ेगा। पर संग्राममें योद्धाओंको एक सारथीकी आवश्यकता होती है। और यदि विचारकर देखा जाय तो यह मानना पड़ेगा कि स्त्री ही वास्तवमें इस जीवनकी लड़ाईमें योग्य सारथीका काम कर सकती है। हाँ, इसके लिये उसे योग्य तथा सुशिक्षित होना आवश्यक है। शिक्षा तथा योग्यताके अभावमें स्त्री कभी कभी सारथी बननेके बदले, भयंकर कठिनाइयोंका कारण बन जाती है।

अतएव गोपाल बड़े असमंजसमें पड़ा। एक ओर सारथीकी

आवश्यकता तथा दूसरी ओर कठिनाइयोंका भय। दोनों विचारोंमें घोर युद्ध होने लगा। आजन्म ब्रह्मचर्य व्रत धारण करनेकी लालसाके साथ साथ दामपत्य जीवनका आनन्द उपभोग करनेकी तरङ्ग उसके हृदयमें उठने लगी। इधर परिवारवाले भी विवाह करनेके लिये वाध्य कर रहे थे। पहले तो विद्यार्थी अवस्थामें विवाह न करनेका वहाना था। पर अब वह वहाना भी समाप्त हो चुका था। अतएव उसके पिताने पासकेही एक ग्राममें उसका विवाह करनेका निश्चय कर लिया।

धीरे धीरे गोपालकी आत्मा दबी और वह किसी योग्य वालिकासे विवाह करनेकी इच्छा करने लगा। उसके जैसे पढ़े लिखे तथा उद्योगी युवककी शादी अपने यहां करना, कौन पसन्द नहीं करता? पर रामशरण जहां उसकी शादीका प्रबन्ध कर रहे थे, वह स्थान उसको जरा भी पसन्द नहीं था। अतएव वहां शादी करनेसे उसने साफ साफ इन्कार कर दिया। इस सम्बन्धमें पितासे तो बातें करनेमें वह शर्माता था, पर माताके सामने उसने अपनी अनिच्छा प्रकट की।

उसकी बातें सुनकर उसकी माता सिरपर हाथ रखती हुई बोली—"क्या मां-बापके रहते भी लड़का अपनी शादीकी बात मुँहसे निकालता है? पहले तो तुम लड़के थे, इस कारण लड़कपनमें सभी बातें छिप जाती थीं। पर अब यदि इस प्रकारकी बातें मुंहसे निकालोगे, तो अड़ोस पड़ोसके आदमी तुम्हारी बड़ी हंसी उड़ायेंगे।"

गोपाल—"हंसी उड़ानेके भयसे मैं अपने जीवनको बर्बाद नहीं कर सकता हूं। जबतक लड़की मेरे पसन्द लायक नहीं मिलेगी, तबतक मैं शादी नहीं कर सकता हूं। लोक-लज्जाके भयसे अपने सिद्धान्तको छोड़ना कायरोंका काम है।"

कुछ उत्तेजित होकर माताने उत्तर दिया—"आजकल पढ़ाने-लिखानेका यही फल होता है। इसीसे मैंने पहले ही कह दिया था कि लड़केको भूलकर भी न पढ़ाओ। पर उस मुंहझौंसेने मेरी बातकी ओर ध्यान ही नहीं दिया। अब सम्हाले अपने लड़केको। यह तो बाप दादोंकी इज्जत मिट्टीमें मिलाये बिना न रहेगा।"

गोपाल—"क्या लड़केको पढ़ानेसे हानि होती है?"

गोपालकी माँ—"अपनी हालत देखते नहीं? किस तरह कुलकी प्रतिष्ठाको मिट्टीमें मिलानेके लिये तुले हुए हो।"

गोपाल—"क्या योग्य लड़कीसे शादी करनेसे कुलकी प्रतिष्ठा मिट्टीमें मिल जायगी?"

गोपालकी माँ—"तुम्हारे जैसा मुंहजोर लड़का तो दुनियामें मैंने देखा ही नहीं। मै लाख रोकती हूं, पर शादीकी बात छेड़नेसे तुम बाज नहीं आते। यह सब जमानेका प्रभाव है।"

गोपाल—"लड़केको विवाहके सम्बन्धमें बातें करनेका सभी प्रकारका अधिकार है। लोक-लज्जाके डरसे मैं अपने अधिकारको नही छोड़ सकता हूं।"

गोपालकी माँ और भी क्रोधित होकर बोलने लगी—"पाँच

वर्षकी उम्रसे ही मैं शादी शादी चिल्ला रही हूं। पर उस दाढ़ी-जारने मेरी एक न मानी। मैंने पहले ही कह दिया था कि बिना ब्याहा लड़का तथा बिना लगामका घोड़ा किसीके वशका नहीं रहता है। आज वही बात अक्षरशः ठीक हो रही है।"

मातासे अधिक विवाद करना व्यर्थ समझ, गोपाल बाहर आकर चुपचाप अपने काममें लग गया। उसके पिताको भी कुछ घण्टोंके बाद इन बातोंका पता लगा और उसने गोपालको बहुत कुछ समझाया बुझाया। पर वह किसी प्रकार अपनी आत्माकी मर्जीके विरुद्ध शादी करनेके लिये तैयार न हुआ। लड़का सयाना हो चुका था। अतएव उसपर अधिक दबाव डालना उचित न समझकर, शादीका प्रश्न उसकी मर्जीपर छोड़ दिया गया।

घरवालोंसे इस प्रकार छुटकारा पानेपर गोपाल अपने एक मित्रकी रायसे योग्य लड़कीके लिये कानपुरके अनाथालयसे पत्र व्यवहार करने लगा। संयोगवश उसकी जातिकी एक अत्यन्त रूपवती तथा सर्वगुण सम्पन्न बालिका उन दिनों अनाथालयमें अविवाहित थी। माता पिताकी मृत्युके उपरांत ईसाई लोग उसे अपने अधिकारमें करना चाहते थे। पर अनाथालयके कई उत्साही कार्यकर्त्ता उसे उन लोगोंके चंगुलसे निकालकर अनाथालय ले आये थे। उस समयसे वह बराबर वहीं रही और मिडिल तक उसने शिक्षा भी प्राप्त कर ली। अनाथालयके सञ्चालकोंने इसी बालिकाके साथ गोपालके विवाहका प्रस्ताव किया।

कुछ दिनोंके बाद स्वयं कानपुर जाकर गोपालने लड़कीके

विषयमें अनुसन्धान किया और बालिका उसे पसन्द आ गयी। फिर क्या था? शुभ मुहूर्त्तके आनेपर उन लोगोंका विवाह शास्त्रानुसार अनाथालयके भवनमें ही निर्विघ्न सम्पन्न हो गया।

कुछ दिनोंतक बिरादरीवाले गोपालके इस कार्यसे बहुत असन्तुष्ट रहे। पर पीछे पं० दीनानाथके समझाने बुझानेसे उन लोगोंने उसे समाजमें मिला लिया और गोपाल दाम्पत्य जीवनका आनन्द लूटता हुआ अपने कारखानेको चलाता रहा।

अठाईसवां अध्याय

संध्याका समय है। पं० दीनानाथ 'प्रेम-मन्दिर' के एक बागीचेमें बैठकर रामकिशोर प्रसादसे बातें कर रहे हैं। इसी समय लड़कोंने "पागल आया" "पागल आया।" कहकर हल्ला मचाना शुरू किया। अधिक कोलाहल मचनेपर सभी लोगोंका ध्यान उस ओर आकर्षित हो गया। कुछ आगे बढ़कर पं० दीनानाथने देखा कि सड़कपर दर्जनों लड़के एक आदमीको घेरे हुए हैं, जो पागलके वेषमें चुपचाप खड़ा है। उसके बड़े बड़े बाल बिखरे हुए हैं। दाढ़ी भी अधिक बढ़ जानेके कारण कुछ भद्दी मालूम पड़ रही है। वह बदनपर फटा पुराना चिथड़ा लपेटे हुए है। लड़कोंके अधिक तंग करनेपर वह कभी कभी अपनी लम्बी लाठीको उन लोगोंके सामने घुमा देता है, जिससे वे और भी उत्तेजित होकर कोलाहल करते हुए उसपर मिट्टी तथा पत्थरके टुकड़े फेंकने लगते हैं। थोड़ी देरतक तो वह किसी प्रकार लड़कोंका सामना करता रहा। पर अन्तमें अधिक परेशान हो जानेके कारण वह उस बागीचेकी ओर बड़ी तेजीके साथ बढ़ा, जहाँ रामकिशोर प्रसाद तथा पं० दीनानाथ खड़े होकर चुपचाप यह दृश्य देख रहे थे। उसकी यह अवस्था देखकर उन लोगोंको बड़ी दया आई और पं० दीनानाथने उससे प्रेमपूर्वक पूछा—"तुम कहाँके रहनेवाले हो?"

"बाबूजी! जरा दम मार लेने दीजिये। लड़कोंने परेशान

कर दिया है। बापरे बाप ! खोपड़ी आसमानको उड़ी जा रही है।" पागलने लड़खड़ाती हुई जबानसें उत्तर दिया।

लड़कोंका इन लोगोंके समीप पहुंचनेका साहस न हुआ। अतएव उनसे छुटकारा पाकर वह पागल चुपचाप शान्ति पूर्वक जमीनपर बैठ गया। थोड़ी देरतक दम मारनेके बाद वह बोला—"बाबूजी ! अब जरा जरा होश आ रहा है। कमबख्त लड़के यमदूतकी तरह मेरे पीछे लग गये थे।"

पं० दीनानाथ—"तुम भूखे मालूम पड़ते हो। खानेको मंगाऊं ?"

पागल—"जी हां, कुछ खानेकी इच्छा है। आज लड़कोंके मारे कहीं खानेका भी साहस न हुआ।"

उसकी इन बातोंको सुनकर पण्डितजीने उसी समय एक नौकरको भोजनकी सामग्री ले आनेके लिये कहा। शीघ्र ही वह रोटी आदि ले आया और उस पागलको उसी समय भोजन कराया गया।

भोजनसे निश्चिन्त होनेपर पं० दीनानाथजीने उससे पूछा—"बोल चालसे तो तुम पागल नहीं मालूम पड़ते हो। फिर तुमने ऐसा बाना क्यों बना रखा है ?"

पागल—"सरकार, मैं पागल ही हूं। पागलके सिवा इस तरह दूसरा कौन रह सकता है ?

पं० दीनानाथ—"नहीं, तुम सच्ची बातें बतलाओ। तुम पागल कभी नहीं हो।"

पागल—"आपका अनुमान बहुत ठीक है। मुझे भी आप-की तरह होश हवाश है। पर ईश्वरके कोपके कारण आज मैं पागल हो रहा हूं।" इतना कहकर वह रोने लगा।

उसे रोते देखकर इन लोगोंको बड़ी दया आयी। उसकी ओर करुणापूर्ण दृष्टिसे देखते हुए रामकिशोर प्रसादने कहा—मालूम पड़ता है यह किसी कठिन मानसिक वेदनासे पीड़ित है। सम्भवतः किसी ईश्वरीय चक्रमें पड़नेके कारण इसकी यह गति हुई है।

पं० दीनानाथ—"आपका अनुमान बहुत ठीक है। आज इसे अपने यहां ठहराना चाहिये। इसकी इस अवस्थाका अवश्य ही कोई रहस्यपूर्ण कारण है।"

रामकिशोर प्रसादने पंडितजीकी इन बातोंका समर्थन किया और वे लोग उस पागलके साथ मकानकी ओर चले। वहां पहुंचनेपर पं० दीनानाथने सबसे पहले उसके लिये एक बि-स्तरेका प्रबन्ध किया और वह उसपर चुपचाप लेट गया।

थोड़ी देर विश्राम करनेके बाद वह पागल बोला—"बाबूजी! आप लोगोंने आज मुझपर बड़ी कृपा की। यदि आप न मिलते तो मालूम नहीं लड़के मेरी क्या दशा बना डालते।"

पं० दीनानाथ—"हम लोगोंने कौन सी कृपा की है? सब ईश्वरकी कृपा है। अब आप अपनी कहानी बतलाकर मेरे कौतु-हलको दूर करें।"

पागल—"मेरी वेदनापूर्ण बातें सुनकर आप लोग भी क्यों दुखमें पड़ना चाहते हैं?"

रामकिशोर प्रसाद—"आप होश हवाशमें रहते हुए भी पागलोंके वेषमें क्यों हैं ? हमलोग इसीका रहस्य जानना चाहते हैं।"

पागल—"क्या अपनी कहानी मुझे बतलानी ही पड़ेगी ?"

रामकिशोर प्रसाद—"हां, उसे सुननेके लिये हमलोग बड़े उत्सुक हैं।"

पागल—"अपनी बातें बतलानेके पहले मैं आपसे एक प्रश्न पूछना चाहता हूं ?",

कुछ आश्चर्यके साथ रामकिशोर प्रसादने कहा—"पूछिये, क्या पूछना है ?"

पागल—"क्या आप मुझे पहचानते हैं ?"

रामकिशोर प्रसाद फिर आश्चर्यके साथ बोले—"मैं तो आपको नहीं पहचानता।"

पागल—"आपके लिये मैं कोई अनजान आदमी नहीं हूं। पहचाननेकी थोड़ी और चेष्टा कीजिये।"

रामकिशोर प्रसाद—"आपकी आवाज तो कुछ परिचित सी जान पड़ती है। पर आपको पहचाननेमें मैं असमर्थ हूं। शायद कभी बहुत दिन पहले आपको देखा हो।"

पागल—"क्या इतना जल्द आप मुझे भूल गये ? एक बार और पहचाननेकी चेष्टा कीजिये।"

रामकिशोर प्रसाद—"मैं असमर्थ हूं।"

पागल—"मैं आपका विश्वासघाती मित्र तथा इस इला-

केको अपने जुल्मसे भून डालनेवाला बलवीर सिंह हूं। अब आप मेरी इस अवस्थाका कारण पूछिये।"

पागलके मुखसे इस प्रकारकी बातें सुनकर रामकिशोर प्रसादने सिरसे पैरतक एक बार फिर उसको देखा और देखते ही गलेसे लिपटकर वे बोले—"दारोगासाहब! ओफ, आप इस अवस्थामें किस प्रकार पड़े? क्षमा करेंगे, आपके इस रूपके कारण मैं आपको पहचाननेमें असमर्थ रहा।"

बलवीर सिंह—"आप पहचानते भी किस प्रकार? मैं कभी इस अवस्थामें पहुंचूंगा—इस बातकी तो आपने कल्पना भी न की होगी?"

रामकिशोर प्रसाद—"मेरी आंखें कह रही हैं कि आप दारोगासाहब हैं। पर हृदय उनपर अविश्वास करनेके लिये वाध्य कर रहा है। आपकी इस शोकपूर्ण अवस्थाका कारण क्या है?"

सजल नेत्रोंसे बलवीर सिंह बोले—"कारणका पता क्या आपको नहीं है? मेरे जैसे विश्वासघाती तथा अत्याचारी व्यक्तिका अन्तिम परिणाम और क्या हो सकता है?"

रामकिशोर प्रसाद—"दुनियामें दूधका धोया कोई भी नहीं होता। थोड़ा या अधिक पाप सभी करते हैं। दारोगासाहब! मै आपकी इस अवस्थाका कारण जाननेके लिये व्यग्र हो रहा हूं।"

बलवीर सिंह—"मेरे दुखकी कहानी सुनकर क्या करेंगे? मेरी पापपूर्ण कहानी बड़ी भयानक है। आप जैसे पवित्र आत्माओंके सामने उसे सुनानेका साहस नहीं पड़ता।"

पं० दीनानाथ—"परमेश्वरने इस संसारमें मोह तथा अन्धकारका इतना बड़ा जाल फैला रखा है कि यहां प्रायः सभी व्यक्ति किसी न किसी प्रकार भ्रममें पड़ जाया करते हैं। पर जीवनकी अन्तिम अवस्थातक भी इने गिने महानुभावोंको ही इस संसारकी भ्रमपूर्ण स्थितिका पता लगने पाता है। पर आप तो अपनी भूलोंके लिये पश्चात्ताप कर रहे हैं। अतएव आपका जीवन साधारण श्रेणीके लोगोंसे बहुत कुछ उच्च तथा महान कहा जायगा। आप किसी प्रकारका शोक न करें।"

बलवीर सिंह—"हुजूर! आप जैसे ज्ञानी मनुष्यके संसर्गद्वारा मनुष्य अपने पापोंसे निःसन्देह मुक्त हो सकता है। आपके दर्शनसे हमारी व्यथित आत्माको बहुत कुछ शान्ति मिल रही है।

रामकिशोर प्रसाद—"आप अधिक दुखित न हों। विपत्तिके समय धैर्य धारण करनेमें ही बुद्धिमानी है।"

बलवीर सिंह—"धैर्य तो धारण करना ही पड़ेगा। घबरानेसे लाभ ही क्या हो सकता है ?"

रामकिशोर प्रसाद—"आपकी इस अवस्थाका वास्तविक कारण जाननेके लिये मैं बहुत उत्सुक हो रहा हूं। कृपया उसे आप निःसंकोच रूपसे कह सुनावें।"

बलवीर सिंह—"सुनिये और कलेजेको थामकर सुनिये। मैं आरम्भसे ही अपनी पापपूर्ण कहानी सुनाता हूं। यद्यपि पहले कई वर्षोंतक आपके साथ मेरा संसर्ग रहा था, पर मैंने कभी स्पष्ट रूपसे आपको अपनी बातें नहीं बतलायी थीं।"

मेरे पिता पुलिस महकमेमें जमादार थे। साधारण स्थितिके आदमी होनेके कारण उन्होंने बड़ी कठिनाईके साथ मुझे इन्ट्रेंस तक पढ़ाया। अफसरोंने पहले हीसे उन्हें विश्वास दिला रखा था कि तुम्हारे लड़केके इन्ट्रेन्स पास होनेपर उसे सब-इन्सपेक्टरी अवश्य दी जायगी। अतएव मेरे इन्ट्रेन्स पास करनेपर मेरे पिताको बड़ी प्रसन्नता हुई। आगे पढ़ाना उनकी शक्तिके बाहरकी बात थी। मुझे भी पढ़नेका हौसला न था। अतएव मेरे लिये पिताजी अफसरोंके यहां सिफारिश करने लगे और अन्तमें लगातार कठिन परिश्रमके बाद मुझे दारोगेकी नौकरी मिली। नौकरी मिलने पर मुझे तथा मेरे पिताको कितनी प्रसन्नता हुई यह बतलानेकी कोई आवश्यकता नहीं है। नौकरी मिलनेके लिये दर्जनों देवी देवताओंकी मिन्नतें मानी गयी थीं। अतएव अभिलाषा पूर्ण हो जानेपर बड़ी धूमधामके साथ पूजा पाठका कार्य सम्पन्न किया गया।

सबसे पहले मैं छोटा दारोगा बनाकर जौनपुर भेजा गया। आरम्भमें ही मैंने प्रतिज्ञा कर ली थी कि किसी प्रकारके अनुचित उपायसे धन प्राप्त करनेकी चेष्टा न करूंगा। अपने पिताके साथ रहनेके कारण मुझे बचपनसे ही पुलिसके अत्याचारको देखनेका अवसर मिलता था। इस अत्याचारोंको देखकर मुझे इस महकमेसे बड़ी घृणा हो गयी थी। पर पिताजीकी इच्छाके कारण मुझे भी पुलिसकी नौकरी करनी पड़ी। परन्तु अपने पदका उत्तरदायित्व ग्रहण करनेके पहले ही मैंने किसी प्रकार रिश्वत आदि न लेनेका

दृढ़ निश्चय कर लिया था। इसी कारण मैं कुछ ही दिनोंमें जौनपुरमें बहुत लोकप्रिय हो गया। सब लोग मुझे बड़े आदर तथा प्रतिष्ठाकी दृष्टिसे देखने लगे। मेरी इस प्रतिष्ठाको देखकर मेरे अफसर लोग मुझसे द्वेष रखने लगे। मुझे देखते ही बड़े दारोगा-साहबकी रंगत बदल जाती थी। सभी प्रकारके लेनदेनसे अलग रहनेके कारण मेरे अधीनस्थ कर्मचारियोंको भी अपनी इच्छा पूर्तिमें बड़ी कठिनाई पड़ती थी। इस कारण वे लोग भी मुझसे अप्रसन्न रहने लगे।

इस तरह सभी आदमी मेरे शत्रु बन गये और मुझे निकल-वानेके लिये परस्पर मिलकर तरह तरहका षड़यंत्र करने लगे। इस षड़यन्त्रके फलस्वरूप शीघ्र ही मेरी वहांसे बदली हो गयी। यह समाचार मिलनेपर मेरे पिताजी मुझपर बड़े अप्रसन्न हुए। इस बार बदलकर मैं जौनपुर आया था। पर मैंने अपने निश्चय-को न छोड़ा। अतएव मुझे यहां भी नाना प्रकारकी कठिनाइयोंका सामना करना पड़ा और मैं वहां भी अधिक दिनोंतक न रह सका। कुछ ही महीनोंके बाद मैं जौनपुरसे बदलकर इटावा भेज दिया गया। इस बार मुझसे मिलनेके लिये मेरे पिताजी भी इटावा आये और मुझे बहुत प्रकारसे समझाया बुझाया। उन्होंने कहा कि यदि तुम अपनी नीति न बदलोगे, तो कुछ ही दिनोंमें तुम्हें अपनी नौकरीसे हाथ धोना पड़ेगा। बड़े दारोगासाहब-से मेरे सम्बन्धमें बहुत कुछ कह सुनकर मेरे पिताजी वहांसे बिदा हुए। मेरे विषयमें सभी बातोंका पता लग जाने पर बड़े

दारोगासाहब मुझे छोटे भाईकी तरह प्यार करने लगे। उनके प्रेमको देखकर मेरा हृदय भी उनकी ओर आकर्षित हो गया और मैं उन्हें बड़ी आदरकी दृष्टिसे देखने लगा। किसीसे रुपया पैसा नहीं लेनेके सिद्धान्तको वे मेरा लड़कपन तथा अल्हड़पन कहा करते थे। एक दिन इसी प्रकारका एक प्रसङ्ग उपस्थित होनेपर उन्होंने मुझसे कहा कि इस महकमेमें रहकर धन पैदा न करना सरासर मूर्खता है। क्योंकि किसी न किसी प्रकार पुलिसवाले अवश्य ही बदनाम रहा करते हैं। फिर गुनाह बेलज्जत अपने सिर चढ़ानेसे क्या फायदा है ? अतएव आप लड़कपनको छोड़-कर, निःसंकोच रूपसे अपने महकमेंकी रीतिके अनुसार कार्य कीजिये। ऐसा करनेमें किसी प्रकारकी हानि नहीं है।

धीरे धीरे उनके प्रेमपूर्ण संसर्गका मुझपर प्रभाव पड़ने लगा और कुछ ही दिनोंमें मैं पूरा अत्याचारी बन बैठा। उस समयसे रुपयेका प्रश्न उपस्थित होनेपर मैं उचित अनुचितका भी विचार न करता था। इटावेमें मैं लगभग दो वर्षतक रहा और इतने ही दिनोंमें मैंने अच्छी रकम पैदा कर ली।

वहांसे बदली होनेके साथ ही मेरे पिताका देहान्त हो गया और मैं एक महीनेकी छुट्टी लेकर उनका अन्तिम संस्कार करनेके लिये घर आया। पिताजीने अपने जीवनमें बहुत कुछ पैदा किया था। मुझे भी पढ़ा लिखाकर एक अच्छे पदपर छोड़ गये थे। अतएव ग्रामके सभी लोग खूब धूमधामके साथ उनका श्राद्ध करनेकी सम्मति देने लगे। मुझे भी जवानीका उमंग था। दिलमें

हौसला भी बहुत बड़ा था। इसके साथ ही अपने परिश्रमसे पैदा किया हुआ थोड़ा बहुत रुपया भी था। अतएव मैंने खूब धूमधाम-से पिताजीका श्राद्ध किया। उस श्राद्धमें इटावेकी गत दो वर्षों की कमाई एक प्रकारसे समाप्त हो गयी।

छुट्टीके समाप्त होनेपर मैं फिर अपने कामपर आया। इस बार बदलकर मैं फरूखाबाद भेजा गया था। वहां मैं लगभग एक वर्षतक रहा। पर इसी बीचमें मैंने एक बहुत बड़ा पापमय कर्म किया और उसीके फलस्वरूप मुझे स्वयं उस स्थानसे अपनी बदली करानी पड़ी। संक्षेपतः उस घटनाका विवरण इस प्रकार है।

थानेके पासमें ही एक कायस्थका घर था। वह साधारण श्रेणीका व्यक्ति था और सदैव पूजा पाठमें अपने समयको विताया करता था। उसे सुशीला नामकी एक बड़ी सुन्दरी कन्या थी। अभाग्यवश बचपनमें ही विधवा हो जानेके कारण वह सदैव अपने पिताके ही साथ रहा करती थी। उस समय उसकी अवस्था लगभग अठारह वर्षकी थी। रामकिशोर बाबू! सुशीला वास्तवमें एक अपूर्व सुन्दरी थी। पर उसकी सुन्दरतामें चञ्चलताके बदले गम्भीरता तथा विषयवासनाके बदले पवित्रताका मिश्रण था। उसका आचरण बड़ा ही शुद्ध तथा पवित्र था। वह अपने समयका अधिक भाग पूजा-पाठमें बिताया करती थी। एक दिन अचानक उसके ऊपर मेरी दृष्टि पड़ी। पर उस देवीपर श्रद्धाञ्जलि अर्पण करनेके बदले मेरे भटके हुए हृदयमें पापपूर्ण तरङ्ग उठने लगी। मेरा कलुषित हृदय उस देवीका सर्वनाश करनेके लिये उत्तेजित

हो उठा। हा! उस समय मेरी आंखोंके सामने एक विचित्र अन्धकार नाचने लगा और मुझे कर्त्तव्याकर्त्तव्यका कुछ भी ज्ञान न रहा। अपनी पापपूर्ण वासनाको तृप्त करनेके लिये मैं उसी दिनसे उसके पिताके साथ मित्रताका बर्ताव करने लगा।

धीरे धीरे उसके पिताके साथ मेरी बड़ी घनिष्टता हो गयी। इस घनिष्टतासे अपने पापपूर्ण उद्देश्यकी पूर्तिमें मुझे बड़ी सहायता मिली। सुशीलाके पिताके यहां मैं कभी कभी निमन्त्रित होकर भोजन करनेके लिये भी जाया करता था और ऐसे मौकोंपर किसी न किसी प्रकार उससे दो-चार बातें कर लेता था। सुशीलाका शरीर भी आखिर रक्त तथा मांसका ही बना हुआ था। इसके साथ ही जवानीका जहर भी उसके प्रत्येक अंगमें व्याप्त था। अतएव धीरे धीरे वह भी हमारे इशारोंका अर्थ समझने लगी। कुछ ही दिनोंमें उसके हृदयमें भी पापपूर्ण प्रेमका अङ्कुर जम गया और सादगी तथा भोलेपनको छोड़कर वह पतन तथा कामलिप्साकी ओर अग्रसर होने लगी।

आगेकी बातें बतलानेमें मुझे संकोच होता है। एक महीनेके भीतर ही मैंने उसका सर्वनाश कर डाला। कुछ ही दिनोंके बाद वह गर्भवती भी हो गयी। उसकी यह अवस्था देखकर मैं बहुत घबराया और अफसरोंके यहां बहुत कोशिश करके उस स्थानसे अपनी बदली करा ली। मेरे चले जानेपर सुशीलाकी क्या दशा हुई—इसका बहुत दिनोंतक मुझे कोई पता न लगा। कई वर्षोंके बाद मैंने सुना कि गर्भका पता लगनेपर उसके पिताने

उसे घरसे निकाल दिया और कुछ दिनोंतक इधर-उधर भटकनेके बाद उसने आत्म-हत्या कर ली।

फर्रूखाबादसे बदलकर मैं कानपुर आया। कई वर्षोंतक यहाँ रहनेके बाद मैं बड़ा दारोगा बनकर आपके ग्राममें आया। यहाँ मेरा जीवन किस प्रकार व्यतीत हुआ, इसका तो आप-लोगोंको पूरा पता है ही। अतएव उन पापपूर्ण बातोंको कहकर मैं क्यों बहुत कुछ भूले हुए कष्टोंकी स्मृति फिरसे ताजा करूँ ?

यहाँ बनवारीके मामलेके कारण अफसरोंके यहाँ मेरी बड़ी बदनामी हो गयी और मैं आगरा बदल दिया गया। मैं वहाँ कई वर्षोंतक रहा। पर उस समयतक मुझे अपनी भूलका कोई पता न लगा था। दुनियाको मैं खाने-पीने तथा मौज उड़ानेकी वस्तु ही समझ रहा था। एकाएक मेरा एकलौता लड़का बिनोद-बिहारी बीमार पड़ा। एक रात स्वप्नमें उसने मुझसे कहा—"पिताजी! आपने अपने जीवनमें बहुत अन्याय किया है। अत-एव उन पापोंके ईश्वरीय दण्डस्वरूप बहुत शीघ्र ही मेरी मृत्यु हो जायगी। अब अधिक दिनोंतक आपके साथ मेरा सम्बन्ध स्थिर न रह सकेगा। इसलिए मैं शीघ्र ही आपको अन्तिम प्रणामकर यहाँसे प्रस्थान करूँगा।"

इस स्वप्नको देखते ही मैं घबराकर उठा। उठनेपर उपरोक्त बातोंको स्वप्न समझकर कुछ-कुछ शान्ति मिली। पर दूसरे ही दिन-से मेरे पुत्रकी बीमारी बढ़ने लगी और एक सप्ताहके भीतर ही मेरे पापोंके प्रायश्चित्त स्वरूप वह अधखिला कुसुम सदाके लिये मुझसे

गया। उसकी मृत्युसे मेरे हृदयपर कितनी चोट लगी, यह बतलानेमें मैं असमर्थ हूँ। उसी समयसे इस संसारके वास्तविक रूपका मुझे परिचय मिला और मेरे मनमें वैराग्यका भाव उत्पन्न होने लगा। पुत्रकी मृत्युके बाद मेरी तबीयत किसी काममें नहीं लगती थी और मैंने उदास होकर अपने पदसे इस्तीफा दे दिया।

इस्तीफा देनेके दो-तीन महीने बाद पुत्र-शोकके कारण मेरी स्त्रीकी भी मृत्यु हो गयी। उसकी मृत्युसे मेरा बचा-खुचा धैर्य भी जाता रहा और मैंने यह पागलका वेष धारण कर लिया है। कहीं परित्राणका रास्ता न देखकर मैं आपलोगोंकी शरणमें आया हूँ। यदि आपकी कृपा होगी, तो मैं अवश्य ही अपने जीवनके बचे हुए भागको शान्तिके साथ बिता सकूँगा। हाँ, रामकिशोर बाबू! इस सम्बन्धमें मैं आपसे एक और निवेदन करना चाहता हूं। मैंने हैन्डनोटको जलाकर राखका ढेर कर दिया, जिसे आपने बनवारीके मामलेके समय मेरे सालेके नामसे लिखा था। बाबूसाहब! मैं बहुत बड़ा पापी हूँ। पर आपलोग क्षमाशील व्यक्ति ठहरे। अतएव आपलोगोंसे मुझे बहुत कुछ आशा है।" इतना कहकर बलवीर सिंह रोने लगे।

उनकी यह अवस्था देखकर पं० दीनानाथजीको बड़ी दया आई और उन्हें धैर्य देते हुए वे बोले—"आप किसी बातकी चिन्ता न करें। यदि दिन भरका भूलाभटका शामको घर लौट आता है तो वह भूला हुआ नहीं कहा जाता। संसारचक्रमें पड़कर किस समय किसकी क्या अवस्था होगी, इसका किसीको भी कुछ

उसे घरसे निकाल दिया और कुछ दिनोंतक इधर-उधर भटकनेके बाद उसने आत्म-हत्या कर ली।

फरूखाबादसे बदलकर मैं कानपुर आया। कई वर्षोंतक यहाँ रहनेके बाद मैं बड़ा दारोगा बनकर आपके ग्राममें आया। यहाँ मेरा जीवन किस प्रकार व्यतीत हुआ, इसका तो आप-लोगोंको पूरा पता है ही। अतएव उन पापपूर्ण बातोंको कहकर मैं क्यों बहुत कुछ भूले हुए कष्टोंकी स्मृति फिरसे ताजा करूँ ?

यहाँ बनवारीके मामलेके कारण अफसरोंके यहाँ मेरी बड़ी बदनामी हो गयी और मैं आगरा बदल दिया गया। मैं वहाँ कई वर्षोंतक रहा। पर उस समयतक मुझे अपनी भूलका कोई पता न लगा था। दुनियाको मैं खाने-पीने तथा मौज उड़ानेकी वस्तु ही समझ रहा था। एकाएक मेरा एकलौता लड़का बिनोद-विहारी बीमार पड़ा। एक रात स्वप्नमें उसने मुझसे कहा—"पिताजी! आपने अपने जीवनमें बहुत अन्याय किया है। अत-एव उन पापोंके ईश्वरीय दण्डस्वरूप बहुत शीघ्र ही मेरी मृत्यु हो जायगी। अब अधिक दिनोंतक आपके साथ मेरा सम्बन्ध स्थिर न रह सकेगा। इसलिए मैं शीघ्र ही आपको अन्तिम प्रणामकर यहाँसे प्रस्थान करूँगा।"

इस स्वप्नको देखते ही मैं घबराकर उठा। उठनेपर उपरोक्त बातोंको स्वप्न समझकर कुछ-कुछ शान्ति मिली। पर दूसरे ही दिन-से मेरे पुत्रकी बीमारी बढ़ने लगी और एक सप्ताहके भीतर ही मेरे पापोंके प्रायश्चित्त स्वरूप वह अधखिला कुसुम सदाके लिये मुझसे

गया। उसकी मृत्युसे मेरे हृदयपर कितनी चोट लगी, यह बतलानेमें मैं असमर्थ हूँ। उसी समयसे इस संसारके वास्तविक रूपका मुझे परिचय मिला और मेरे मनमें वैराग्यका भाव उत्पन्न होने लगा। पुत्रकी मृत्युके बाद मेरी तबीयत किसी काममें नहीं लगती थी और मैंने उदास होकर अपने पदसे इस्तीफा दे दिया।

इस्तीफा देनेके दो-तीन महीने बाद पुत्र-शोकके कारण मेरी स्त्रीकी भी मृत्यु हो गयी। उसकी मृत्युसे मेरा बचा-खुचा धैर्य भी जाता रहा और मैंने यह पागलका वेष धारण कर लिया है। कहीं परित्राणका रास्ता न देखकर मैं आपलोगोंकी शरणमें आया हूँ। यदि आपकी कृपा होगी, तो मैं अवश्य ही अपने जीवनके बचे हुए भागको शान्तिके साथ बिता सकूँगा। हाँ, राम-किशोर बाबू! इस सम्बन्धमें मैं आपसे एक और निवेदन करना चाहता हूं। मैंने हैन्डनोटको जलाकर राखका ढेर कर दिया, जिसे आपने बनवारीके मामलेके समय मेरे सालेके नामसे लिखा था। बाबूसाहब! मैं बहुत बड़ा पापी हूँ। पर आपलोग क्षमाशील व्यक्ति ठहरे। अतएव आपलोगोंसे मुझे बहुत कुछ आशा है।" इतना कहकर बलवीर सिंह रोने लगे।

उनकी यह अवस्था देखकर पं० दीनानाथजीको बड़ी दया आई और उन्हें धैर्य देते हुए वे बोले—"आप किसी बातकी चिन्ता न करें। यदि दिन भरका भूलाभटका शामको घर लौट आता है तो वह भूला हुआ नहीं कहा जाता। संसारचक्रमें पड़कर किस समय किसकी क्या अवस्था होगी, इसका किसीको भी कुछ

उसे घरसे निकाल दिया आर कुछ दिनोंतक इधर-उधर भटकनेके बाद उसने आत्म-हत्या कर ली।

फरूखाबादसे बदलकर मैं कानपुर आया। कई वर्षोंतक यहाँ रहनेके बाद मैं बड़ा दारोगा बनकर आपके ग्राममें आया। यहाँ मेरा जीवन किस प्रकार व्यतीत हुआ, इसका तो आप-लोगोंको पूरा पता है ही। अतएव उन पापपूर्ण बातोंको कहकर मैं क्यों बहुत कुछ भूले हुए कष्टोंकी स्मृति फिरसे ताजा करूँ ?

यहाँ बनवारीके मामलेके कारण अफसरोंके यहाँ मेरी बड़ी बदनामी हो गयी और मैं आगरा बदल दिया गया। मैं वहाँ कई वर्षों तक रहा। पर उस समयतक मुझे अपनी भूलका कोई पता न लगा था। दुनियाको मैं खाने-पीने तथा मौज उड़ानेकी वस्तु ही समझ रहा था। एकाएक मेरा एकलौता लड़का बिनोद-विहारी बीमार पड़ा। एक रात स्वप्नमें उसने मुझसे कहा—"पिताजी ! आपने अपने जीवनमें बहुत अन्याय किया है। अत-एव उन पापोंके ईश्वरीय दण्डस्वरूप बहुत शीघ्र ही मेरी मृत्यु हो जायगी। अब अधिक दिनोंतक आपके साथ मेरा सम्बन्ध स्थिर न रह सकेगा। इसलिए मैं शीघ्र ही आपको अन्तिम प्रणामकर यहाँसे प्रस्थान करूँगा।"

इस स्वप्नको देखते ही मैं घबराकर उठा। उठनेपर उपरोक्त बातोंको स्वप्न समझकर कुछ-कुछ शान्ति मिली। पर दूसरे ही दिन-से मेरे पुत्रकी बीमारी बढ़ने लगी और एक सप्ताहके भीतर ही मेरे पापोंके प्रायश्चित्त स्वरूप वह अधखिला कुसुम सदाके लिये मुझसे

गया। उसकी मृत्युसे मेरे हृदयपर कितनी चोट लगी, यह बतलानेमें मैं असमर्थ हूँ। उसी समयसे इस संसारके वास्तविक रूपका मुझे परिचय मिला और मेरे मनमें वैराग्यका भाव उत्पन्न होने लगा। पुत्रकी मृत्युके बाद मेरी तबीयत किसी काममें नहीं लगती थी और मैंने उदास होकर अपने पदसे इस्तीफा दे दिया।

इस्तीफा देनेके दो-तीन महीने बाद पुत्र-शोकके कारण मेरी स्त्रीकी भी मृत्यु हो गयी। उसकी मृत्युसे मेरा बचा-खुचा धैर्य भी जाता रहा और मैंने यह पागलका वेष धारण कर लिया है। कहीं परित्राणका रास्ता न देखकर मैं आपलोगोंकी शरणमें आया हूँ। यदि आपकी कृपा होगी, तो मैं अवश्य ही अपने जीवनके बचे हुए भागको शान्तिके साथ बिता सकूँगा। हाँ, राम-किशोर बाबू! इस सम्बन्धमें मैं आपसे एक और निवेदन करना चाहता हूं। मैंने हैन्डनोटको जलाकर राखका ढेर कर दिया, जिसे आपने बनवारीके मामलेके समय मेरे सालेके नामसे लिखा था। बाबूसाहब! मैं बहुत बड़ा पापी हूँ। पर आपलोग क्षमाशील व्यक्ति ठहरे। अतएव आपलोगोंसे मुझे बहुत कुछ आशा है।" इतना कहकर बलवीर सिंह रोने लगे।

उनकी यह अवस्था देखकर पं० दीनानाथजीको बड़ी दया आई और उन्हें धैर्य देते हुए वे बोले—"आप किसी बातकी चिन्ता न करें। यदि दिन भरका भूलाभटका शामको घर लौट आता है तो वह भूला हुआ नहीं कहा जाता। संसारचक्रमें पड़कर किस समय किसकी क्या अवस्था होगी, इसका किसीको भी कुछ

उसे घरसे निकाल दिया आर कुछ दिनोंतक इधर-उधर भटकनेके बाद उसने आत्म-हत्या कर ली।

फरूखाबादसे बदलकर मैं कानपुर आया। कई वर्षोंतक यहाँ रहनेके बाद मैं बड़ा दारोगा बनकर आपके ग्राममें आया। यहाँ मेरा जीवन किस प्रकार व्यतीत हुआ, इसका तो आप-लोगोंको पूरा पता है ही। अतएव उन पापपूर्ण बातोंको कहकर मैं क्यों बहुत कुछ भूले हुए कष्टोंकी स्मृति फिरसे ताजा करूँ ?

यहाँ बनवारीके मामलेके कारण अफसरोंके यहाँ मेरी बड़ी बदनामी हो गयी और मैं आगरा बदल दिया गया। मैं वहाँ कई वर्षों तक रहा। पर उस समयतक मुझे अपनी भूलका कोई पता न लगा था। दुनियाको मैं खाने-पीने तथा मौज उड़ानेकी वस्तु ही समझ रहा था। एकाएक मेरा एकलौता लड़का बिनोद-विहारी बीमार पड़ा। एक रात स्वप्नमें उसने मुझसे कहा—"पिताजी! आपने अपने जीवनमें बहुत अन्याय किया है। अत-एव उन पापोंके ईश्वरीय दण्डस्वरूप बहुत शीघ्र ही मेरी मृत्यु हो जायगी। अब अधिक दिनोंतक आपके साथ मेरा सम्बन्ध स्थिर न रह सकेगा। इसलिए मैं शीघ्र ही आपको अन्तिम प्रणामकर यहाँसे प्रस्थान करूँगा।"

इस स्वप्नको देखते ही मैं घबराकर उठा। उठनेपर उपरोक्त बातोंको स्वप्न समझकर कुछ-कुछ शान्ति मिली। पर दूसरे ही दिन-से मेरे पुत्रकी बीमारी बढ़ने लगी और एक सप्ताहके भीतर ही मेरे पापोंके प्रायश्चित्त स्वरूप वह अधखिला कुसुम सदाके लिये मुर्झा

गया। उसकी मृत्युसे मेरे हृदयपर कितनी चोट लगी, यह बतलानेमें मैं असमर्थ हूँ। उसी समयसे इस संसारके वास्तविक रूपका मुझे परिचय मिला और मेरे मनमें वैराग्यका भाव उत्पन्न होने लगा। पुत्रकी मृत्युके बाद मेरी तबीयत किसी काममें नहीं लगती थी और मैंने उदास होकर अपने पदसे इस्तीफा दे दिया।

इस्तीफा देनेके दो-तीन महीने बाद पुत्र-शोकके कारण मेरी स्त्रीकी भी मृत्यु हो गयी। उसकी मृत्युसे मेरा बचा-खुचा धैर्य भी जाता रहा और मैंने यह पागलका वेष धारण कर लिया है। कहीं परित्राणका रास्ता न देखकर मैं आपलोगोंकी शरणमें आया हूँ। यदि आपकी कृपा होगी, तो मैं अवश्य ही अपने जीवनके बचे हुए भागको शान्तिके साथ बिता सकूँगा। हां, राम-किशोर बाबू! इस सम्बन्धमें मैं आपसे एक और निवेदन करना चाहता हूं। मैंने हैन्डनोटको जलाकर राखका ढेर कर दिया, जिसे आपने बनवारीके मामलेके समय मेरे सालेके नामसे लिखा था। बाबूसाहब! मैं बहुत बड़ा पापी हूँ। पर आपलोग क्षमाशील व्यक्ति ठहरे। अतएव आपलोगोंसे मुझे बहुत कुछ आशा है।" इतना कहकर बलवीर सिंह रोने लगे।

उनकी यह अवस्था देखकर पं० दीनानाथजीको बड़ी दया आई और उन्हें धैर्य देते हुए वे बोले—"आप किसी बातकी चिन्ता न करें। यदि दिन भरका भूलाभटका शामको घर लौट आता है तो वह भूला हुआ नहीं कहा जाता। संसारचक्रमें पड़कर किस समय किसकी क्या अवस्था होगी, इसका किसीको भी कुछ

ज्ञान नहीं रहता है। ईश्वर सर्वशक्तिमान है। वह जब जैसा चाहता है, वैसा करता है। अतएव मनुष्यको ईश्वरकी शक्तिका विचारकर प्रत्येक अवस्थामें सन्तोष धारण करना चाहिये। आप पागलोंके इस बानाको छोड़कर हमलोगोंके साथ रहें। जहाँतक हो सकेगा, हमलोग आपकी सेवा करते रहेंगे।"

बलवीर सिंह—"आपके आश्रमकी सेवा करनेके लिये तो मैं यहाँ आया हूं। आपलोग धन्य पुरुष हैं। आपलोगोंके साथ रहने-पर अवश्य ही मेरा कल्याण होगा।"

थोड़ी देर तक और बातें करनेके पश्चात, अधिक रात बीत जानेके कारण रामकिशोर प्रसाद अपने मकानको चले गये और बलवीर सिंह आश्रममें ही विश्राम करने लगे।

उनतीसवां अध्याय

पंडित उमाशंकरजीकी मृत्यु हुए अब दश वर्ष व्यतीत हो गये। उनके पुत्र रामकुमारकी अवस्था इस समय अठारह वर्षकी है। पिताकी जीवित अवस्थामें ही उसने अंग्रेजी तथा हिन्दीका प्रारम्भिक ज्ञान प्राप्त कर लिया था। उनकी मृत्युके बाद पितृतुल्य पं० दीनानाथकी देखरेखमें उसका विद्याध्ययन होने लगा। पंडितजीने उसके लिये एक योग्य शिक्षक नियुक्त कर दिया और अवकाश मिलनेपर वे स्वयं भी उसे पढ़ाया करते थे। अत्यन्त कुशाग्र बुद्धिका होनेके कारण उसे पांच वर्षके भीतर ही मैट्रिकुलेशनकी योग्यता हो जानेपर कानपुरके एक स्कूलमें भर्ती करा दिया गया और दूसरे ही वर्ष उसने प्रथम श्रेणीमें मैट्रिकुलेशन-की परीक्षा पास कर ली। उस परीक्षामें उसे पन्द्रह रुपये मासिक-की छात्रवृत्ति भी मिली। मैट्रिककी परीक्षा पास करनेके उपरान्त वह इलाहाबादमें विश्वविद्यालयकी शिक्षा प्राप्त करने लगा। वहाँ चार वर्ष पढ़नेके उपरान्त उसने इस साल सम्मानके साथ बी० ए० की परीक्षा पास की।

पं० दीनानाथको कोई सन्तान नहीं थी। अतएव उनकी स्त्री सरस्वती रामकुमारको ही अपने पुत्रकी तरह प्यार करती थी। उसके प्रति उसका प्रेम इतना अधिक था कि रामकुमार भी उसे अपनी मातासे भी अधिक पूज्य तथा स्नेहकी दृष्टिसे देखता था। दो परि-

ज्ञान नहीं रहता है। ईश्वर सर्वशक्तिमान है। वह जब जैसा चाहता है, वैसा करता है। अतएव मनुष्यको ईश्वरकी शक्तिका विचारकर प्रत्येक अवस्थामें सन्तोष धारण करना चाहिये। आप पागलोंके इस बानाको छोड़कर हमलोगोंके साथ रहें। जहांतक हो सकेगा, हमलोग आपकी सेवा करते रहेंगे।"

बलवीर सिंह—"आपके आश्रमकी सेवा करनेके लिये तो मैं यहां आया हूं। आपलोग धन्य पुरुष हैं। आपलोगोंके साथ रहनेपर अवश्य ही मेरा कल्याण होगा।"

थोड़ी देर तक और बातें करनेके पश्चात, अधिक रात बीत जानेके कारण रामकिशोर प्रसाद अपने मकानको चले गये और बलवीर सिंह आश्रममें ही विश्राम करने लगे।

उनतीसवां अध्याय

पंडित उमाशंकरजीकी मृत्यु हुए अब दश वर्ष व्यतीत हो गये। उनके पुत्र रामकुमारकी अवस्था इस समय अठारह वर्षकी है। पिताकी जीवित अवस्थामें ही उसने अंग्रेजी तथा हिन्दीका प्रारम्भिक ज्ञान प्राप्त कर लिया था। उनकी मृत्युके बाद पितृतुल्य पं० दीनानाथकी देखरेखमें उसका विद्याध्ययन होने लगा। पंडितजीने उसके लिये एक योग्य शिक्षक नियुक्त कर दिया और अवकाश मिलनेपर वे स्वयं भी उसे पढ़ाया करते थे। अत्यन्त कुशाग्र बुद्धिका होनेके कारण उसे पाँच वर्षके भीतर ही मैट्रिकुलेशनकी योग्यता हो जानेपर कानपुरके एक स्कूलमें भर्ती करा दिया गया और दूसरे ही वर्ष उसने प्रथम श्रेणीमें मैट्रिकुलेशन-की परीक्षा पास कर ली। उस परीक्षामें उसे पन्द्रह रुपये मासिक-की छात्रवृत्ति भी मिली। मैट्रिककी परीक्षा पास करनेके उपरान्त वह इलाहाबादमें विश्वविद्यालयकी शिक्षा प्राप्त करने लगा। वहाँ चार वर्ष पढ़नेके उपरान्त उसने इस साल सम्मानके साथ बी० ए० की परीक्षा पास की।

पं० दीनानाथको कोई सन्तान नहीं थी। अतएव उनकी स्त्री सरस्वती रामकुमारको ही अपने पुत्रकी तरह प्यार करती थी। उसके प्रति उसका प्रेम इतना अधिक था कि रामकुमार भी उसे अपनी मातासे भी अधिक पूज्य तथा स्नेहकी दृष्टिसे देखता था। दो परि-

वारोंके बीच एक ही पुत्र रहनेके कारण दोनों माताओंको सदैव उसे विवाहित रूपमें देखकर अपने नयनोंको तृप्त करनेकी प्रबल इच्छा बनी रहती थी। पर विद्यार्थी अवस्थामें विवाह करना सर्वथा अनुचित समझकर, पं० दीनानाथजी सदैव उन लोगोंको इस विषयमें निरुत्साहित करते रहे। पर रामकुमारके बी० ए० पास करनेपर उन लोगोंने विवाह करनेके लिये एक जोरदार आन्दोलन आरम्भ किया। लड़केका विद्याध्ययन एक प्रकारसे समाप्त हो जानेके कारण पं० दीनानाथजी भी अब उन लोगोंके विवाह-प्रस्तावसे सहमत हो गये।

उनकी इस इच्छाका पता लगते ही कई जगहोंसे विवाहके प्रस्तावको लेकर अगुवे आने लगे। कई लोगोंने बहुत अधिक दहेज देनेका भी लोभ दिया। पर दहेजका प्रस्ताव करनेवाले महानुभावोंको पं० दीनानाथजी यह कहकर फटकार दिया करते थे—"लड़केका मुझे विवाह करना है; उसे बेचना मैं नहीं चाहता। विवाह जैसे मंगल-सूचक कार्यमें पुत्र-विक्रय सदृश अमंगल दायक कार्य मैं नहीं कर सकता। रुपयेके द्वारा आप सभी कुछ खरीद सकते हैं, पर रुपयेसे योग्य वर खरीदनेका प्रस्ताव सर्वथा हास्यजनक है। अतएव आप मुझपर कृपा करें। मैं आपके यहां संबंध करनेमें असमर्थ हूं।"

इस प्रकार कई लोगोंके प्रस्तावको अस्वीकृत करनेके बाद उन्होंने आगरेके एक रईसके यहां बिना किसी दहेजके प्रतिबन्धके सम्बन्ध करनेका निश्चय किया।

इधर रामकुमार किसी प्रकार विवाह करनेके लिये तैयार न था। बी० ए० पास करनेके बाद वह अमेरिका जाकर कलाकौशलकी उच्च शिक्षा प्राप्त करना चाहता था। वहांसे लौटनेपर वह गृहस्थीकी झंझटमें फँसना चाहता था। पं० दीनानाथजीको भी उसकी इस प्रवृत्तिका थोड़ा बहुत ज्ञान था। पर रामकुमारकी माता थता अपनी स्त्रीके प्रबल आग्रहको टालनेमें वे सर्वथा असमर्थ थे। अतएव राम-कुमारके विवाहका प्रबन्ध करनेके लिये उन्हें वाध्य होना पड़ा। इसके साथ ही वे यह भी समझते थे कि हमलोगोंके निश्चयके वि रुद्ध आवाज उठानेका साहस रामकुमारको नहीं होगा और इस कारण वे आगरेवालोंसे इस सम्बन्धमें वचनवद्ध भी हो गये।

पर इन वातोंका पता लगनेपर रामकुमार स्पष्ट रूपसे अपने विवाहके प्रस्तावका विरोध करने लगा। उसने साफ साफ शब्दोंमें विवाह करनेसे इन्कार कर दिया। उसके इस विरोधको देखकर सभी कोई चिन्तित होने लगे। पं० दीनानाथको अपने वचनके पालन होनेकी चिन्ता थी और दोनों माताओंको अपनी लालसा-के तृप्त होनेकी। रामकुमारकी माताने उसे लाख समझाया, पर वह किसी प्रकार अपने निश्चयसे हटनेके लिये तैयार न हुआ। उसके इस हठको देखकर सभी कोई निरुत्साह हो गये। पर पं० दीनानाथकी स्त्री सरस्वतीको अभीतक अपने प्रभावपूर्ण प्रेमपर विश्वास था। वह समझती थी कि इस सम्बन्धमें रामकुमार उसे कभी निराश नहीं कर सकता है। अतएव एक दिन उसने पुत्र तुल्य रामकुमारको बुलाकर कहा—"बेटा! हम लोगोंकी अवस्था

अब ढल चुकी है। पक्के आम तथा बुड्ढे शरीरका क्या ठिकाना है ? अतएव हम लोगोंकी प्रबल इच्छा है कि बहूको देखकर अपने नयनोंको तृप्त कर लें। पर मैंने सुना है कि तुम इस कार्यमें वाधा डाल रहे हो। क्या इस प्रकारका अज्ञानतापूर्ण कार्य तुम्हारे जैसे पढ़े-लिखे लड़केके योग्य है ?"

एक अपराधीकी हैसियतसे रामकुमारने उत्तर दिया—"माताजी ! आपने ठीक सुना है। मैं विवाहके पहले अमेरिका जाना चाहता हूं।"

सरस्वती—"क्या विवाह करनेके बाद तुम वहां नहीं जा सकते हो ?"

रामकुमार—"ऐसा करनेसे वहुत कुछ विघ्न पड़नेकी सम्भावना है।"

सरस्वती—"कोई विघ्न नहीं पड़ सकता है। सभी चीजोंका अनुकूल प्रवन्ध कर देनेके लिये मैं तुम्हें वचन देती हूं। अपने विचारके साथ तुम्हें हमलोगोंके सुखकी ओर भी तो कुछ ध्यान देना चाहिये। यदि तुम्हारी शादीसे हमलोगोंको सुख मिले, तो वैसा करना क्या तुम्हारा कर्त्तव्य नहीं है ?"

सरस्वतीकी इन बातोंका रामकुमार कोई उत्तर न दे सका। उसके इस मौनको सम्मतिका लक्षण समझकर सरस्वतीने फिर इस प्रकार कहना आरम्भ किया—"बेटा ! तुम स्वयं बुद्धिमान हो। अतएव तुमसे कुछ अधिक कहनेकी आवश्यकता नहीं है। मैं तुमसे बड़ी बड़ी आशायें रखती हूं। तुम्हारा मुख देखनेसे मुझे

कभी पुत्रका अभाव नहीं खटकता। बहिन कलावतीके समान ही मैं तुझपर अपना अधिकार समझती हूं। अतएव मुझे आशा थी कि तुम मेरी बात कभी न टालोगे। अतएव जरा मुखसे बोलकर अपनी स्वीकृति दे दो, जिससे हम लोग तुम्हारी बाधासे निश्चिन्त हो जांय।"

रामकुमारने सिर नीचा करते हुए उत्तर दिया—"माता! क्षमा करना, इस समय विवाह करनेमें मैं सर्वथा असमर्थ हूं।"

रामकुमारकी इन बातोंको सुनकर सरस्वती आसमानसे गिर पड़ी। उसके हठको देखकर उसे क्रोध भी हुआ। पर अपने क्रोधको रोकती हुई वह बोली—"क्या मुझे निराश करनेसे तुम्हें प्रसन्नता होगी?"

रामकुमार—"यह मेरा अभाग्य है कि इस सम्बन्धमें अपना विचार बदलनेसे मैं असमर्थ हूं।"

व्यथित हृदयसे सरस्वती बोली—"रामकुमार! बस, अब अधिक बोलकर मेरे जले हुए हृदयपर नमक न डालो। आज मेरी आशाओंपर पानी फिर गया। तुम्हारे जैसा होनहार पुत्र पाकर भी मैं सुखी न हो सकी, यह मेरे भाग्यका दोष है। तुम पढ़े लिखे लड़के ठहरे। हमारे सुख दुखकी भला तुमको क्या परवाह हो सकती है? इस युगका धर्म ही ऐसा है। मैं तुम्हें दोषी किस प्रकार ठहराऊं? पर आज टूटे हुए हृदयको लेकर मैं तुमसे अपना सम्बन्ध विच्छेद कर रही हूं।" इतना कहकर वह सिसक सिसककर रोने लगी। उसका मातृप्रेम आंसूके रूपमें प्रवाहित होने लगा।

उसकी यह अवस्था देखकर रामकुमार बड़ी चिन्तामें पड़ा। उसकी दशा दयनीय हो गयी। वह पढ़ा लिखा था। पर उसकी विद्या भी उसे इस अवस्थामें किसी प्रकारकी सहायता न कर सकी। इस विकट स्थितिमें उसे कोई रास्ता ही न सूझता था। एक ओर सरस्वतीके कष्टका दृश्य था—दूसरी ओर कर्त्तव्यकी पुकार, एक ओर आत्माकी आज्ञा थी—दूसरी ओर पथभ्रष्ट होनेका प्रस्ताव; एक ओर जीवनकी ज्योतिका आकर्षण था—दूसरी ओर मातृप्रेमका अक्षय भंडार। इस विकट स्थितिमें उसकी बुद्धि कोई काम न कर रही थी। वह पथभ्रष्टकी तरह चुपचाप वहीं खाड़ा होकर रोता रहा। थोड़ी देरतक उसकी यही अवस्था रही। एकाएक उसकी आत्माने एक विचित्र तेजका दर्शन किया। फिर क्या था? रामकुमारके हृदयमें मातृप्रेमकी धारा बह चली और वह सरस्वतीके पैरोंपर गिरकर बोला— "माता! मुझे क्षमा करो। मेरे कारण तुम्हें बहुत कष्ट उठाना पड़ा। तुम्हारी बातोंको टालना मेरी शक्तिके बाहरकी बात है। अतएव मैं तुम्हारी आज्ञाको माननेके लिये तैयार हूं।"

रामकुमारकी इन बातोंको सुनकर सरस्वतीका सारा कष्ट दूर हो गया और वह उसे हृदयसे लगाती हुई बोली—"बेटा! तुम्हें पाकर आज मैं धन्य हो गयी। भगवानको धन्यवाद है कि उसने तुम्हारे जैसा पुत्ररत्न मुझको प्रदान किया।" इतना बोलते बोलते प्रेमसे उसका गला भर आया और वह अधिक न बोल सकी।

उसी समय बिजलीकी तरह रामकुमारकी इस स्वीकृतिका समा-

चार चारों ओर फैल गया। सभी कोई इसे सुनकर बड़े प्रसन्न हुए। उसकी माता इस सफलताके लिये सरस्वतीको बारबार धन्यवाद देने लगी। पं० दीनानाथको भी यह समाचार सुनकर बड़ी प्रसन्नता हुई।

दूसरे ही दिनसे बड़ी धूमधामके साथ रामकुमारके विवाहकी तैयारी होने लगी। आगरेवालोंको भी इस स्वीकृतिकी खबर भेज दी गयी।

तीसवां अध्याय

आज रामकुमारका विवाह होनेवाला है। पं० दीनदयाल शर्मा आगरेके एक प्रसिद्ध रईस हैं। उनके परिवारकी गणना सुशिक्षित परिवारोंमें की जाती है। अपनी एक मात्र कन्या किशोरीके लिये वे कई वर्षोंसे योग्य वर की खोज कर रहे थे। और अन्तमें बहुत प्रयत्नके बाद उन्हें रामकुमार जैसा रत्न मिला। उन्होंने अपनी कन्या किशोरीको बड़े प्रयत्नसे पढ़ाया लिखाया था। किसी स्कूलमें तो वह भर्ती न की गयी थी, पर घरपर ही मैट्रिकुलेशनकी योग्यता उसने प्राप्त कर ली थी। किशोरीका रूपलावण्य भी बहुत ही मनमोहक तथा आकर्षक था। इसके साथ ही शिक्षाका संयोग होनेसे तो इस सोनेमें सुगन्ध हो गया। वास्तवमें प्रत्येक दृष्टिसे वह एक आदर्श युवती है। वह पिताकी प्यारी पुत्री तथा बड़े भाईकी लाड़ली बहन है। सभी उसकी सुख-शान्तिकी ओर बराबर ध्यान रखा करते हैं। ऐसी सर्वगुण सम्पन्ना बालिकाके लिये रामकुमारके सदृश योग्य वर मिलनेपर किशोरीके पिता तथा भाईको कितनी प्रसन्नता हुई, यह बतलाना व्यर्थ है।

दोपहरकी गाड़ीसे बारात आगरे आ पहुंची। पर दूसरे लोगोंको पता भी न लगा कि इस गाड़ीसे कोई बारात भी आई है। कुल पचीस-तीस आदमी हैं। भीड़भाड़का नामोनिशान नहीं है। पं० दीनानाथ व्यर्थाडम्बरके कट्टर शत्रु हैं। अतएव कुछ इष्टमित्रोंके साथ

वे सादगीके साथ शादी करनेके लिये चले आये। पं० दीनदयाल शर्मा भी इसी ख्यालके आदमी हैं। कितने लोगोंको लड़कीकी शादीमें धूमधड़ाका देखनेका व्यसन होता है। वे चाहते हैं कि उनके यहां खूब बड़ी बारात आवे। रात दिन बाजे बजते रहें तथा नाच रंगकी महफिल गर्म रहे। इसके लिये वे अपनी शक्ति भर रुपयेका खून करते हैं। पर इससे लाभ क्या होता है, इस प्रश्नको वे कभी अपनी आत्मासे, अपने हृदयसे नहीं पूछते। यदि नाच रंगके बदले वे उन रुपयोंका कपड़ा तथा अन्न खरीदकर गरीबोंमें बाँटें, तो इससे देशका कितना कल्याण हो, कितने लोगोंकी लज्जा बचे तथा कितने मुँहताजोंकी रोटीका प्रबन्ध हो, इस प्रश्नकी ओर वे कभी ध्यान ही नहीं देते और ध्यान भी देते हैं तो सच्चे हृदयसे नहीं। नहीं तो क्या कारण था कि वे अपनी गलतीको न समझते, भूलको न सुधारते ?

बारातमें कोई भीड़भाड़ न देखकर पं० दीनदयाल शर्मा भी बड़े प्रसन्न हुए। आदमी थोड़े थे ही। इन लोगोंका खूब सत्कार किया गया। बड़े आरामसे ये लोग एक मकानमें ठहराये गये। बाबू रामकिशोर प्रसाद, बलवीर सिंह तथा लक्ष्मीनारायण आदि भी बारातमें आये थे।

नियमित समयपर विधिपूर्वक विवाहका कार्य सम्पन्न किया गया। विवाह हो जानेपर कन्या पक्षवालोंने बड़े आग्रहके साथ बारातको चार दिनों तक रोक रखा। इन चार दिनोंमें ये लोग आपसमें खूब हिलते मिलते रहे।

तीसवां अध्याय

आज रामकुमारका विवाह होनेवाला है। पं० दीनदयाल शर्मा आगरेके एक प्रसिद्ध रईस हैं। उनके परिवारकी गणना सुशिक्षित परिवारोंमें की जाती है। अपनी एक मात्र कन्या किशोरीके लिये वे कई वर्षोंसे योग्य वर की खोज कर रहे थे। और अन्तमें बहुत प्रयत्नके बाद उन्हें रामकुमार जैसा रत्न मिला। उन्होंने अपनी कन्या किशोरीको बड़े प्रयत्नसे पढ़ाया लिखाया था। किसी स्कूलमें तो वह भर्ती न की गयी थी, पर घरपर ही मैट्रिकुलेशनकी योग्यता उसने प्राप्त कर ली थी। किशोरीका रूपलावण्य भी बहुत ही मनमोहक तथा आकर्षक था। इसके साथ ही शिक्षाका संयोग होनेसे तो इस सोनेमें सुगन्ध हो गया। वास्तवमें प्रत्येक दृष्टिसे वह एक आदर्श युवती है। वह पिताकी प्यारी पुत्री तथा बड़े भाईकी लाड़ली बहन है। सभी उसकी सुख-शान्तिकी ओर बराबर ध्यान रखा करते हैं। ऐसी सर्वगुण सम्पन्ना बालिकाके लिये रामकुमारके सदृश योग्य वर मिलनेपर किशोरीके पिता तथा भाईको कितनी प्रसन्नता हुई, यह बतलाना व्यर्थ है।

दोपहरकी गाड़ीसे बारात आगरे आ पहुंची। पर दूसरे लोगोंको पता भी न लगा कि इस गाड़ीसे कोई बारात भी आई है। कुल पचीस-तीस आदमी हैं। भीड़भाड़का नामोनिशान नहीं है। पं० दीनानाथ व्यर्थाडम्बरके कट्टर शत्रु हैं। अतएव कुछ इष्टमित्रोंके साथ

वे सादगीके साथ शादी करनेके लिये चले आये। पं० दीनदयाल शर्मा भी इसी ख्यालके आदमी हैं। कितने लोगोंको लड़कीकी शादीमें धूमधड़ाका देखनेका व्यसन होता है। वे चाहते हैं कि उनके यहां खूब बड़ी बारात आवे। रात दिन बाजे बजते रहें तथा नाच रंगकी महफिल गर्म रहे। इसके लिये वे अपनी शक्ति भर रुपयेका खून करते हैं। पर इससे लाभ क्या होता है, इस प्रश्नको वे कभी अपनी आत्मासे, अपने हृदयसे नहीं पूछते। यदि नाच रंगके बदले वे उन रुपयोंका कपड़ा तथा अन्न खरीदकर गरीबोंमें बाँटें, तो इससे देशका कितना कल्याण हो, कितने लोगोंकी लज्जा बचे तथा कितने मुँहताजोंकी रोटीका प्रबन्ध हो, इस प्रश्नकी ओर वे कभी ध्यान ही नहीं देते और ध्यान भी देते हैं तो सच्चे हृदयसे नहीं। नहीं तो क्या कारण था कि वे अपनी गलतीको न समझते, भूलको न सुधारते ?

बारातमें कोई भीड़भाड़ न देखकर पं० दीनदयाल शर्मा भी बड़े प्रसन्न हुए। आदमी थोड़े थे ही। इन लोगोंका खूब सत्कार किया गया। बड़े आरामसे ये लोग एक मकानमें ठहराये गये। बाबू रामकिशोर प्रसाद, बलबीर सिंह तथा लक्ष्मीनारायण आदि भी बारातमें आये थे।

नियमित समयपर विधिपूर्वक विवाहका कार्य सम्पन्न किया गया। विवाह हो जानेपर कन्या पक्षवालोंने बड़े आग्रहके साथ बारातको चार दिनों तक रोक रखा। इन चार दिनोंमें ये लोग आपसमें खूब हिलते मिलते रहे।

आनन्दका समय व्यतीत होनेमें कोई विलम्ब नहीं होता है। चार दिनके बाद बड़ी खुशीसे वर-वधूके साथ बारात वहाँसे विदा हुई। ये लोग संध्या समय वहाँसे चले थे। अतएव दूसरे दिन सकुशल रामपुर लौट आये।

घरमें वधूको देखकर कलावती तथा सरस्वतीकी प्रसन्नताकी सीमा न रही। इसके साथ ही वधूका रूपलावण्य तथा शिक्षा आदिने युगल माताओंकी नयनोंको सार्थक कर दिया। वे सारे कष्टोंको भूलकर बड़े आनन्दके साथ अपने समयको बिताने लगीं।

उपसंहार

बाबू रामकिशोर प्रसाद निःसन्तान हैं। अतएव अवस्था ढलनेपर उन्हें अपने उत्तराधिकारीकी चिन्ता पड़ी। कई बन्धु-बान्धवगण स्वयं उनकी सम्पत्तिको हड़प जाना चाहते थे। कुछ लोगोंने उन्हें निकटस्थ सम्बन्धियोंके बीच सम्पत्ति बाँट देनेकी सम्मति दी। पर वे अपने धनको किसी धर्म कार्यमें लगाकर सार्थक करना चाहते थे। अन्तमें बहुत तर्क वितर्कके बाद उन्होंने अपनी सारी सम्पत्ति 'प्रेम-मन्दिर'के नाम लिख देनेका निश्चय किया। पं० दीनानाथ तथा ग्रामके कुछ उत्साही व्यक्ति उनका यह विचार सुनकर बड़े प्रसन्न हुए। सब लोगोंकी रायसे उन्होंने मृत्युके बाद अपनी सारी जायदादका अधिकारी 'प्रेम-मन्दिर' को बना दिया। अपनी सम्पत्ति उसे अर्पण करनेके पहले उन्होंने उसके संचालनके लिये एक कमेटी बनायी, जिसका आजन्म सभापति पं० उमाशंकरका पुत्र रामकुमार बनाया गया।

विवाहके पश्चात् रामकुमार कलाकौशलकी शिक्षा प्राप्त करनेके लिये अमेरिका गया था। वहाँ दो वर्षोंतक शीशाके व्यवसायकी विशेष योग्यता प्राप्तकर वह स्वदेश लौट आया। यहाँ आकर उसने रामपुरमें शीशाकी भिन्न-भिन्न वस्तुओंके प्रस्तुत करनेका एक कारखाना खोल दिया। कारखानेमें काफी मुनाफा होने लगा और भविष्यमें भी उसकी उन्नति होनेकी सम्भावना थी। उस

कारखानेके उज्ज्वल भविष्यको देखकर सब लोग रामकुमारकी ओर आशापूर्ण दृष्टिसे देखने लगे।

अब पं० दोनानाथ भी वृद्धा अवस्थाके कारण अवकाश ग्रहण करना चाहते थे। अतएव रामकुमारपर सारा भार देनेका उन्होंने निश्चय किया। रामकिशोर प्रसादके आदर्श दानके कारण 'प्रेम-मन्दिर'की आर्थिक अवस्था बहुत उन्नत हो गयी थी। उसका भविष्य बहुत ही उज्ज्वल हो गया था। मृत्युके पहले पं० उमाशंकर भी अपनी सम्पत्तिका आधा भाग 'प्रेम-मन्दिर' को दे गये थे। इन दोनों सम्पत्तियोंके मिल जानेके कारण 'प्रेममन्दिर' एक समृद्धिशाली संस्था बन गयी थी। पं० दीनानाथने भी अपनी सम्पत्तिको 'प्रेम-मन्दिर' तथा रामकुमारके बीच बराबर बराबर बाँट दिया। इसके साथही 'निर्भय' का सत्वाधिकार उन्होंने उसके सहकारी सम्पादकको दे दिया, जो कई वर्षों से उसे बड़े परिश्रम तथा योग्यताके साथ चला रहे थे।

इस प्रकार इन कामोंसे निवृत्त हो रामकिशोर प्रसाद तथा पं० दीनानाथ काशीमें सपरिवार विश्राम करनेका विचार करने लगे।

इधर भूतपूर्व दारोगा बाबू बलबीर सिंह पागल रूपमें मिलनेके समयसे ही इन लोगोंके साथ हैं। इनके संसर्गसे वे अपने दुखोंको बहुत कुछ भूल रहे हैं। रामकिशोर प्रसाद तथा पं० दीनानाथके काशी-वासका समाचारसुनकर उन्होंने भी उन लोगोंके साथ रहनेकी इच्छा प्रकट की, जिसे उन लोगोंने बड़ी प्रसन्नताके साथ स्वीकार किया।

इस प्रकार रामकुमारपर अपने व्यवसाय तथा परिवारके

साथ साथ 'प्रेम-मन्दिर'का सारा बोझ लादकर ये लोग काशीवास करने लगे। उन लोगोंके चले जानेपर रामकुमारकी मां कुछ दिनोंतक अपने पुत्रके साथ रहीं। पीछे वह भी उन्हीं लोगोंके साथ काशीवास करने लगीं।

उन लोगोंके चले जानेपर रामकुमार, लक्ष्मीनारायण तथा ग्रामके अन्य उत्साही लोगोंकी सहायतासे 'प्रेम-मन्दिर'का कार्य सुचारु रूपसे संचालन करने लगा। उसकी देख रेखमें 'प्रेम-मन्दिर'ने बहुत कुछ उन्नति की। रामशरणके उत्साही पुत्र गोपालसे भी उसे बहुत कुछ सहायता मिला करती थी। इसके साथ ही उसका व्यवसाय भी खूब चमक उठा। रामकिशोर प्रसादकी आज्ञासे वह बनवारीके पुत्रकी भी भरपूर सहायता करता रहा।

इस प्रकार अपने ऊपर दिये गये भारको रामकुमारने बड़ी योग्यताके साथ निवाहा। इसके साथ ही पं० दीनानाथके प्रति कर्त्तव्यके पालनमें उसने किसी प्रकारकी त्रुटि न की। पं०दीनानाथ तथा अपने यशस्वी पिताकी तरह वह भी कर्त्तव्यकी कसौटीपर खरा तथा चोखा उतरा। वह नियमित रूपसे उन लोगोंके पास प्रति मास व्ययके लिये यथेष्ट धन भेज दिया करता था और कभी कभी स्वयं सपत्नी काशी जाकर उनके दर्शनकर अपने नयनोंको तृप्त किया करता था।

॥ समाप्त ॥

९—दुमदार आदमी

ले०—श्रीयुत जी० पी० श्रीवास्तव बी० ए०, एल० एल० बी०,

"दुमदार आदमी"में समाजकी भिन्न-भिन्न कुरीतियोंपर बड़े ही मनोहर और शिक्षाप्रद पांच एक अंकीय नाटकोंका संग्रह है। इसमें आजकलके पश्चिमीय रंगमें रंगे और अङ्गरेजियतके सांचेमें ढले बी० ए०, एल-एल० बी० का ऐसा खाका खींचा गया है कि बस,कुछ न पूछिये,पढ़ते-पढ़ते आप लोटन-कबूतर हो जांयगे। इसी तरहसे हिन्दीके पत्र-पत्रिकाओंके सम्पादकों, मेम्बरीके उम्मीदवारोंकी दुर्दशा दिखलाई गई है जो भोटके लिये सब कुछ करनेको तैयार रहते हैं किन्तु मेम्बर हो जानेपर फिर कुछ न पूछिये। बस, यह संग्रह एक लाजवाब चीज है और सभी नाटक खेलने योग्य हैं। पुस्तकमें कई चित्रोंने तो इसकी शोभा ही दूनी कर दी है। मूल्य १॥)

१०—गंगाजमनी

ले०—श्रीयुत जी० पी० श्रीवास्तव बी० ए०, एल० एल० बी०

इसके दो भाग हैं। पहले भागमें दो खण्ड हैं। पहले खण्डमें बालक-प्रेम और दूसरे खण्डमें नवयुवक-प्रेमके भावको दिखलाया गया है। दूसरे भागमें भी दो खण्ड हैं और प्रत्येक खण्डमें दो-दो प्रहसन हैं। तीसरे खण्डमें युवक-प्रेम और चौथे खण्डमें प्रौढ-युवक-प्रेमके भावको लेखकने अपने विशेष ढंगसे प्रदर्शित किया है। यों तो श्रीवास्तवजीकी अन्य रचनाओंका रसास्वादन करनेवाले उनकी लेखनीकी मनोमोहकता एवं वर्णनशैलीकी उत्कृष्टतासे पूर्ण परिचित हैं ही, किन्तु गंगाजमनी छटा जो इस 'गंगाजमनी' में उन्होंने दिखलायी है, वह अवश्य ही अपेक्षाकृत अधिक विशेषता रखती है। इसमें सामाजिक एवं मानसिक विकारोंका जैसा प्राकृतिक वर्णन है, वैसा ही साहित्यिक दुर्दशाका भी। वासना और सात्त्विक प्रेमका महान अन्तर लेखकने सरल ढंगसे खोलकर दिखला दिया है। रँग-बिरँगे चित्रोंसे सुसज्जित प्रत्येक भागका मूल्य केवल २)